सामाजिक विज्ञान

भारत : संसाधन एवं उपयोग

भाग - 10

(राज्य शिक्षा शोध एवं प्रशिक्षण परिषद्, बिहार द्वारा विकसित)
बिहार स्टेट टेक्सटबुक पब्लिशिंग कॉरपोरेशन लिमिटेड

निदेशक (प्राथमिक शिक्षा), शिक्षा विभाग, बिहार सरकार द्वारा स्वीकृत

राज्य शिक्षा शोध एवं प्रशिक्षण परिषद्, बिहार, पटना के सौजन्य से सम्पूर्ण बिहार राज्य के निर्मित्त ।

© बिहार स्टेट टेक्स्टबुक पब्लिशिंग कॉरपोरेशन लिमिटेड, पटना

प्रथम संस्करण : 2010-11
पुनर्मुद्रण : 2015-16
पुनर्मुद्रण : 2024-25

मुल्य- ₹ 59.00

बिहार स्टेट टेक्स्टबुक पब्लिशिंग कॉरपोरेशन लिमिटेड, पाठ्य-पुस्तक भवन, बुद्ध मार्ग, पटना-800001 द्वारा प्रकाशित तथा ------------------------------ द्वारा

प्राक्कथन

मानव संसाधन विकास विभाग, बिहार सरकार के निर्णयानुसार अप्रैल, 2009 से राज्य के कक्षा- X हेतु नए पाठ्यक्रम को लागू किया गया है। प्रथम चरण में शैक्षिक सत्र 2009 के लिए वर्ग- X की सभी भाषायी एवं गैर भाषायी पुस्तकों को पाठ्यक्रम प्रारम्भ करने का निर्णय लिया गया। इस नए पाठ्यक्रम के आलोक में एस. सी. ई. आर. टी., बिहार, पटना द्वारा सभी भाषायी एवं गैर भाषायी पुस्तकें (वाणिज्य एवं कला विषयक) बिहार राज्य पाठ्य-पुस्तक प्रकाशन निगम द्वारा आवरण चित्रण कर मुद्रित किया जा रहा है।

बिहार राज्य में विद्यालयी शिक्षा के गुणवत्तापूर्ण शिक्षा के लिए माननीय मुख्यमंत्री, बिहार, श्री नीतीश कुमार, माननीय शिक्षा मंत्री, डॉ॰ चन्द्रशेखर एवं शिक्षा विभाग के अपर मुख्य सचिव, श्री के० के० पाठक, भा.प्र.से. के मार्गदर्शन के प्रति हम हृदय से कृतज्ञ हैं।

एन0सी0ई0आर0टी0, नई दिल्ली तथा एस0सी0ई0आर0टी0, बिहार, पटना के निदेशक के भी हम आभारी हैं जिन्होंने अपना सहयोग प्रदान किया ।

बिहार राज्य पाठ्य–पुस्तक प्रकाशन निगम छात्रों, अभिभावकों, शिक्षकों, शिक्षाविदों की टिप्पणियों एवं सुझावों का सदैव स्वागत करेगा, जिससे बिहार राज्य को देश के शिक्षा जगत में उच्चतम स्थान दिलाने में हमारा प्रयास सहायक सिद्ध हो सके ।

सन्नी सिन्हा, आई॰आर॰एस॰एस॰
प्रबंध निदेशक
बिहार राज्य पाठ्य-पुस्तक प्रकाशन निगम लि॰

आमुख

प्रस्तुत पुस्तक ''भारत : संसाधन एवं उपयोग" कक्षा-10 भारत सरकार की राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986), राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा -2005 तथा राज्य शिक्षा शोध एवं प्रशिक्षण परिषद्, बिहार द्वारा एन०सी०एफ० -2005 के सिद्धांत, दर्शन तथा शिक्षा शास्त्रीय दृष्टिकोण के आधार पर विशिष्ट रूप से ग्रामीण क्षेत्र को संदर्भ में रखते हुए बिहार पाठ्यचर्या की रूपरेखा -2008 तथा तदनुरूप नवीन पाठ्यक्रम के आधार पर बिहार राज्य के शिक्षक समूह के साथ चरण बद्ध कार्यशाला में समय-समय पर विषय विशेषज्ञ एवं शिक्षा विदों के साथ मिलकर निर्माण किया गया है। पाठ्यक्रम के उद्देश्य तथा प्रकरण यथा भोजन, पदार्थ, सजीवों का संसार, गतिमान वस्तुएँ, लोग एवं उनके विचार, वस्तुएँ कैसे कार्य करती हैं, प्राकृतिक परिघटनाएँ तथा प्राकृतिक संसाधन की मुख्य अवधारणाओं में दिये गये विषय-वस्तु पाठ्यपुस्तक के अध्यायों में परिलक्षित एवं समाविष्ट किया गया है। जिससे बच्चों के सर्वांगीण विकास अर्थात शारीरिक, मानसिक, चारित्रिक एवं अभ्यास क्षमताओं पर ध्यान दिया गया है । बच्चों में करके सीखने तथा खोजी भावना का विकास करने तथा आपस में मिल जुलकर सीखने की प्रवृति का विकास करके उनको जिम्मेवार नागरिक बनाया जाय, जिससे देश की धर्म निरपेक्षता,अखंडता एवं समृद्धि के लिए कार्य करें तथा संविधान की प्रस्तावना की पूर्ति हो, ऐसा विद्यालयीय शिक्षा के क्रम में पाठ्यक्रम तथा पाठ्यपुस्तक में ध्यान रखा गया है । पाठ्य पुस्तक के सभी अध्याय रोचकपूर्ण हैं । पाठ्यपुस्तक में दिये गये विषय वस्तु विद्यार्थियों के दैनिक अनुभव पर आधारित हो, ऐसा प्रयास किया गया है । कुछ अध्यायों में कहानी के माध्यम से विज्ञान के रहस्यों का उद्भेदन करने का प्रयास किया गया है, जो अपने आप में नवाचार है । कहीं-कहीं ऐसे संदर्भित प्रश्न हैं, जिससे बच्चों में वैज्ञानिक दृष्टिकोण को विकसित करते हुए सत्य के निकट जाने हेतु कौतुहलता एवं जिज्ञासा रहेगी ।

पाठ्यपुस्तक के माध्यम से बच्चे तथा शिक्षक के बीच शिक्षण अधिगम प्रक्रिया बाल-केन्द्रित तथा सीखना 'बिना बोझ' के अर्थात सुगम एवं आनन्ददायी शिक्षण हो, ऐसा प्रयास किया गया है, इसलिए पाठ्यपुस्तक के सभी अध्यायों के विषय वस्तु में जगह-जगह क्रियाकलाप अर्थात गतिविधि तथा प्रयोग का वर्णन है । पुस्तक की अधिकांश क्रियाकलाप बिना किसी सामग्री या कम लागत की सामग्री के साथ करवाई जा सकती है । शिक्षण जितना गतिविधि आधारित होगा, बच्चों को सक्रिय बनाने वाला होगा तथा बच्चों को उतना ही अधिक आनन्द आएगा और वे उतनी ही अच्छी तरह दक्षताओं को प्राप्त कर सकेंगे । इस कार्य में शिक्षक की भूमिका महत्वपूर्ण है । प्रत्येक अध्याय के अन्त में नये शब्द प्रमुख शब्द, पर्याप्त प्रश्न तथा अधिकांश अध्याय में परियोजना कार्य भी दिये गये हैं जिससे हर छात्र की

उपलब्धियों की जाँच हो सके।

प्रस्तुत पाठ्यपुस्तक की पाण्डुलिपि तैयार करने के पूर्व राज्य शिक्षा शोध एवं प्रशिक्षण परिषद, पटना द्वारा विभागीय पदाधिकारियों, विषय विशेषज्ञों, भाषा विशेषज्ञों एवं माध्यमिक स्तर के शिक्षकों की कार्यशाला आयोजित की गयी। काफी गहन चर्चा के बाद पुस्तक की पाण्डुलिपि का निर्माण किया गया। राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद, बिहार राज्य पाठ्य पुस्तक प्रकाशन निगम, द्वारा विकसित पुस्तकों के साथ अनेक प्रकाशनों की पुस्तकें, संदर्भ सामग्री के रूप में पाठ्य पुस्तक को तैयार करने में उपयोगी साबित हुई। इस पाठ्यपुस्तक का निर्माण श्री के. के. पाठक, अपर मुख्य सचिव, शिक्षा विभाग, बिहार सरकार के निर्देशानुसार किया गया है।

इस पुस्तक के निर्माण में समन्वयक के रूप में डा० राजेन्द्र प्रसाद मंडल व्याख्याता एस० सी० ई० आर० टी० की अहम भूमिका रही है। डा० भी० एन० पी० सिन्हा एवं शम्भुनाथ कुँवर के भी कृतज्ञ हैं जिन्होंने बहुमूल्य समय निकालकर पाण्डुलिपि की समीक्षा की। श्री रामलखन्या तिवारी, विभागाध्यक्ष एवं श्री विजय कुमार, आशुलिपिक की पाण्डुलिपि के निर्माण में सराहनीय भूमिका रही है।

आशा है सामाजिक विज्ञान की यह पाठ्यपुस्तक बच्चों के लिए लाभदायक, आनन्ददायी एवं रुचिकर सिद्ध होगी। अल्प समय में निर्मित पुस्तक के लिए समालोचनाओं एवं सुझावों का परिषद स्वागत करेगी। प्राप्त सुझावों के प्रति परिषद् सजग एवं संवेदनशील होकर अगले संस्करण में आवश्यक परिमार्जन के प्रति विशेष ध्यान देगी।

सज्जन आर. आई.ए.एस.
निदेशक
राज्य शिक्षा शोध एवं प्रशिक्षण परिषद,
बिहार, पटना-6

दिशाबोध :

- श्री सज्जन आर, भा.प्र.से. — निदेशक, राज्य शिक्षा शोध एवं प्रशिक्षण परिषद्, पटना 800006
- श्री रघुवंश कुमार — शैक्षणिक निदेशक, बिहार वि० परीक्षा समिति, पटना
- डा. सय्यद अब्दुल मोईन — विभागाध्यक्ष, अध्यापक शिक्षा विभाग, राज्य शिक्षा शोध एवं प्रशिक्षण परिषद्, बिहार, पटना
- श्री रामतवक्या तिवारी — विभागाध्यक्ष, मानविकी शिक्षा विभाग, राज्य शिक्षा शोध एवं प्रशिक्षण परिषद्, बिहार, पटना
- डा. कासिम खुरशीद — विभागाध्यक्ष, भाषा शिक्षा विभाग, राज्य शिक्षा शोध एवं प्रशिक्षण परिषद्, बिहार, पटना

समन्वयक – **डा० राजेन्द्र प्रसाद मण्डल**, व्याख्याता, एस०सी०ई०आर०टी०, बिहार, पटना

लेखक समूह –

1. **डा० राम बिहारी प्रसाद सिंह**, भूगोल विभाग, पटना विश्वविद्यालय, पटना
2. **डा० पूर्णिमा शेखर सिंह**, वाचक, भूगोल विभाग, ए० एन० कॉलेज, पटना
3. **डा० संजय कुमार**, विभागाध्यक्ष, भूगोल विभाग, महाराजा कॉलेज, आरा
4. **डॉ० प्रवीण कुमार प्रभाकर**, स० शिक्षक, राजकीय उच्चतर माध्यमिक विद्यालय, राजेन्द्र नगर, पटना
5. **श्री धनंजय उपाध्याय**, स० शि० पटना कालेजिएट स्कूल, पटना
6. **मो० खगारी शरण**, स० शि०, एस० एम० +2 स्कूल, चौथम, खगड़िया
7. **मो० एहतेशाम सिद्दिकी**, स० शि०, राजकीय बालिका +2 स्कूल, गुलजारबाग, पटना
8. **मो० जमील असगर**, संतदेव इंटर स्कूल, दानापुर, पटना

समीक्षक –

1. **डा० भी० एन० पी० सिन्हा**, पूर्व अध्यक्ष, भूगोल विभाग, पटना विश्वविद्यालय, पटना
2. **डा० शम्भूनाथ कुँवर**, पूर्व अध्यक्ष भूगोल विभाग, डा० भीमराव अम्बेदकर विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर।

अकादमिक सहयोग **इम्तियाज आलम**, व्याख्याता, राज्य शिक्षा शोध एवं प्रशिक्षण परिषद्, बिहार, पटना

हमारा संविधान

उद्देशिका

हम, भारत के लोग, भारत को एक संपूर्ण प्रभुत्व-सम्पन्न, समाजवादी, पंथ-निरपेक्ष, लोकतंत्रात्मक गणराज्य बनाने के लिए तथा उसके समस्त नागरिकों को :

सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय,
विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म
और उपासना की स्वतंत्रता,
प्रतिष्ठा और अवसर की समता
प्राप्त कराने के लिए
तथा उन सब में व्यक्ति की गरिमा और
राष्ट्र की एकता और अखंडता
सुनिश्चित करने वाली बंधुता बढ़ाने के लिए

दृढ़संकल्प होकर अपनी इस संविधान सभा में आज तारीख 26 नवंबर, 1949 ई. (मिति मार्गशीर्ष शुक्ला सप्तमी, संवत् दो हजार छह विक्रमी) को एतद्द्वारा इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते हैं।

अनुक्रमणिका

संख्या	शीर्षक	पृष्ठ संख्या
	खण्ड (क)	
ईकाई 1	भारत : संसाधन एवं उपयोग	1 - 126
ईकाई 2	कृषि	127 - 151
ईकाई 3	निर्माण उद्योग	152 - 180
ईकाई 4	परिवहन, संचार एवं व्यापार	181 - 210
ईकाई 5	बिहार : कृषि एवं वन संसाधन	211 - 267
ईकाई 6	मानचित्र अध्ययन	268 - 275
	खण्ड (ख)	
ईकाई 1	प्राकृतिक आपदा : एक परिचय	277 - 281
ईकाई 2	प्राकृतिक आपदा एवं प्रबंधन - बाढ़ और सुखाड़	282 - 292
ईकाई 3	प्राकृतिक आपदा एवं प्रबन्धन - भूकंप एवं सुनामी	293 - 301
ईकाई 4	जीवन रक्षक आकस्मिक प्रबंधन	302 - 309
ईकाई 5	आपदा काल में वैकल्पिक संचार व्यवस्था	310 - 315
ईकाई 6	आपदा और सह-अस्तित्व	316 - 327

अनुक्रमणिका

संख्या	शीर्षक	पृष्ठ संख्या
	खण्ड (क)	
ईकाई 1	भारत : संसाधन एवं उपयोग	1 - 126
ईकाई 2	कृषि	127 - 151
ईकाई 3	निर्माण उद्योग	152- 180
ईकाई 4	परिवहन, संचार एवं व्यापार	181 - 210
ईकाई 5	बिहार : कृषि एवं वन संसाधन	211 - 267
ईकाई 6	मानचित्र अध्ययन	268 - 275
	खण्ड (ख)	
ईकाई 1	प्राकृतिक आपदा : एक परिचय	277 - 281
ईकाई 2	प्राकृतिक आपदा एवं प्रबंधन - बाढ़ और सुखाड़	282 - 292
ईकाई 3	प्राकृतिक आपदा एवं प्रबन्धन - भूकंप एवं सुनामी	293 - 301
ईकाई 4	जीवन रक्षक आकस्मिक प्रबंधन	302 - 309
ईकाई 5	आपदा काल में वैकल्पिक संचार व्यवस्था	310 - 315
ईकाई 6	आपदा और सह-अस्तित्व	316 - 327

खण्ड (क)

इकाई-1

भारत : संसाधन एवं उपयोग

संसाधन का महत्व :

आप अपने जीवन में अनेक वस्तुओं का उपयोग करते हैं। उपयोग में आने वाली ये सभी वस्तुएँ संसाधन हैं। संसाधन भौतिक और जैविक दोनों हो सकते हैं। जहाँ तक एक ओर भूमि, मृदा, जल, खनिज जैसे भौतिक पदार्थ मानवीय आकांक्षाओं की पूर्ति में सहायक होकर संसाधन बन जाते हैं, वहीं दूसरी ओर जैविक पदार्थ, यथा, वनस्पति, वन्य-जीव तथा जलीय-जीव, मानवीय-जीवन को सुखमय बनाने में पीछे नहीं हैं।

उपरोक्त भौतिक एवं जैविक दोनों पदार्थ तकनीक के सहारे ही जीवनोपयोगी हो पाते हैं। अनादि काल से ही अरण्यों में वनस्पति एवं वन्य जीव उपलब्ध थे। जलाशय एवं सागरों में जलीय-जीव लाखों वर्ष पूर्व से विचरण करते रहे हैं। सदियों से ही कोयला, पेट्रोलियम एवं अन्य खनिज पृथ्वी के गर्भ में पड़ा हुआ था। किन्तु उस समय के आदि मानव में तकनीक (ज्ञान) का अभाव था। धीरे-धीरे जनसंख्या एवं आवश्यकताओं में वृद्धि होती गयी। इस वृद्धि ने मानव के ज्ञानार्जन की दर में त्वरित वृद्धि किया। इतना ही नहीं, आदि मानव तकनीक को पाकर ज्ञानी मानव बन गया। पर्यावरण में उपलब्ध पदार्थों का जनप्रिय तकनीक के सहारे जीवन को सुखमय बनाने में मानव सक्षम हो गया। जब पर्यावरण में मानव द्वारा जनप्रिय तकनीक का प्रयोग होता है तब सभ्यता विकसित होती है। अंततः मानवीय जीवन-निर्वाह के तौर-तरीके सांस्कृतिक संसाधन की स्थिति को प्राप्त कर लेते हैं।

वस्तुतः, संसाधन का अर्थ बहुत ही व्यापक है। यहाँ प्रसिद्ध भूगोलविद, 'जिम्मरमैन' का कथन उल्लेखनीय है-- ''संसाधन होते नहीं; बनते हैं।''

वर्तमान परिवेश में सेवा को भी संसाधन माना गया है। कोई गायक या कवि या चित्रकार अपने क्रिया-कलाप से धनार्जन या स्वयं को संतुष्ट करता है, तब उनके द्वारा ये कार्य-कलाप भी

संसाधन कहलाएँगे। कवि का कविता-रचना, चित्रकार की चित्रकारी, गायक की गायिकी भी संसाधन हैं। सच तो यह है कि मानव स्वयं भी संसाधन है। क्योंकि, इनके पास ज्ञान (तकनीक) होता है, जिसके सहारे वह किसी भी वस्तु को उपयोगी बना सकता है। अतः यह धारणा भ्रामक है कि संसाधन एक प्राकृतिक उपहार है।

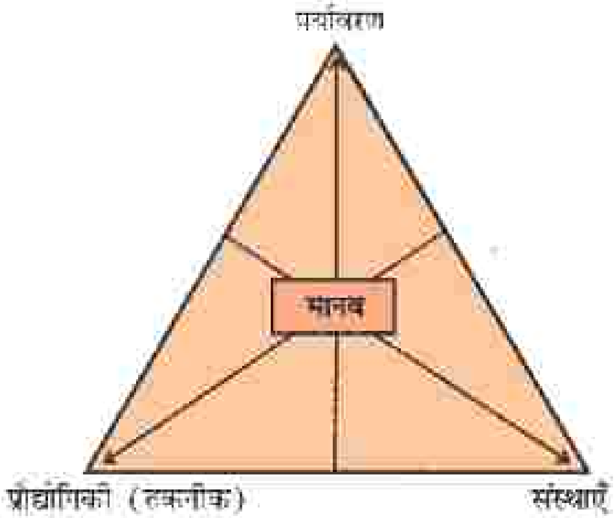

चित्र 1.1 मानव का पर्यावरण, प्रौद्योगिकी एवं संस्थाओं के साथ संबंध

संसाधन किसी भी देश का आर्थिक- सामाजिक मेरूदंड होता है। संसाधन विपन्न राष्ट्र अंतर्राष्ट्रीय दौड़ में पिछड़ जाते हैं। इसका मतलब यह नहीं है कि प्राकृतिक संसाधन से सम्पन्न राष्ट्र ही विकास करते हैं। जापान एक ऐसा देश है; जो प्राकृतिक संसाधन में अत्यंत विपन्न है। किन्तु, इनके मानव संसाधन, तकनीकी दृष्टि से, इतने सबल हैं कि यह देश उपलब्ध सभी पदार्थों का विवेकपूर्ण उपयोग कर विकसित देशों की श्रेणी में खड़ा है। अतः किसी देश के विकास में भौतिक एवं जैविक संसाधन के साथ-साथ मानव-संसाधन की भी बहुत भूमिका होती है। विविध संसाधनों के मध्य मानव नियंत्रक की स्थिति में रहता है; जो पर्यावरण में उपलब्ध पदार्थों, प्रौद्योगिकी (तकनीक) एवं संस्थाओं के बीच अन्तर्संबंध स्थापित करता है, जिससे पर्यावरण के पदार्थ उपयोगी बन जाते हैं। इसे चित्र संख्या 1.1 से समझा जासकता है।

संसाधनों का वर्गीकरण :

संसाधनों के वर्गीकरण के निम्नलिखित आधार हैं :

- **A.** उत्पत्ति के आधार पर-जैव और अजैव ।
- **B.** उपयोगिता के आधार पर-नवीकरणीय और अनवीकरणीय ।
- **C.** स्वामित्व के आधार पर-व्यक्तिगत, सामुदायिक, राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय ।

D. विकास की स्थिति के आधार पर–संभाव्य, विकसित, भंडार और संचित।

दिये गये चार्ट की मदद से भी संसाधन को समझा जा सकता है।

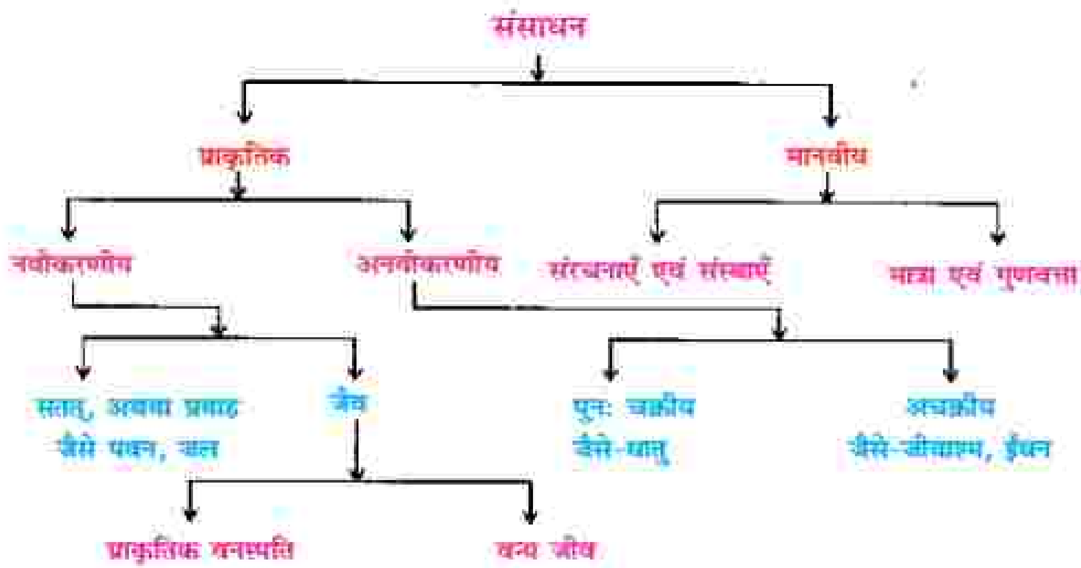

चित्र 1.2 संसाधनों का वर्गीकरण

संसाधनों के प्रकार :

→ **उत्पत्ति के आधार पर संसाधन के दो प्रकार हो सकते हैं :**

- **जैव संसाधन** : ऐसे संसाधनों की प्राप्ति जैव मंडल से होती है। इनमें सजीव के सभी लक्षण मौजूद होते हैं। जैसे–मनुष्य, वनस्पति, मत्स्य, पशुधन एवं अन्य प्राणि समुदाय।

- **अजैव संसाधन** : निर्जीव वस्तुओं के समूह को अजैव संसाधन कहा जाता है। जैसे–चट्टानें, धतु एवं खनिज आदि।

➝ **उपयोगिता के आधार पर संसाधन के दो वर्ग होते हैं :**

- **नवीकरणीय संसाधन :** वैसे संसाधन जिन्हें भौतिक, रासायनिक या यांत्रिक प्रक्रिया द्वारा नवीकृत या पुनः प्राप्त किये जा सकते हैं। जैसे–सौर-ऊर्जा, पवन ऊर्जा, जल, विद्युत, वन एवं वन्य प्राणी ; जिन्हें सतत् या प्रवाह एवं जैव संसाधनों में वर्गीकृत किया जा सकता है। चित्र-1.2

- **अनवीकरणीय संसाधन :** ऐसे संसाधनों का विकास लंबी अवधि में जटिल प्रक्रियाओं द्वारा होता है। इस प्रक्रिया को पूरा होने में लाखों वर्ष लग सकते हैं। इनमें कुछ ऐसे भी संसाधन होते हैं, जो पुनः चक्रिय नहीं हैं। एक बार प्रयोग होने के साथ ही ये समाप्त हो जाते हैं। जैसे–जीवाश्म ईंधन।

➝ **स्वामित्व के आधार पर संसाधन के चार प्रकार हो सकते हैं :**

- **व्यक्तिगत संसाधन :** ऐसे संसाधन किसी खास व्यक्ति के अधिकार क्षेत्र में होता है। जिसके बदले में वे सरकार को लगान भी चुकाते हैं। जैसे–भूखंड, घर व अन्य जायदाद; जिसपर लोगों का निजी स्वामित्व होता है। बाग-बगीचा, तालाब, कुआँ इत्यादि भी ऐसे संसाधन ही हैं, जिस पर व्यक्ति निजी स्वामित्व रखता है।

> **क्रिया-कलाप :**
> अपने परिवार में उपलब्ध निजी संसाधनों की एक सूची तैयार करें जिस पर केवल तुम्हारे परिवार का हक हो।

- **सामुदायिक संसाधन :** ऐसे संसाधन किसी खास समुदाय के आधिपत्य में होता है, जिसका उपयोग समूह के लिए सुलभ होता है। गाँवों में चारण-भूमि, श्मशान, मंदिर या मस्जिद परिसर, सामुदायिक भवन, तालाब आदि। नगरीय क्षेत्र में इस प्रकार के संसाधन : सार्वजनिक पार्क, पिकनिक स्थल, खेल मैदान, मंदिर, मस्जिद, गुरुद्वारा एवं गिरिजाघर के रूप में हैं ये संसाधन सम्बन्धित समुदाय के लोगों के लिए सर्वसुलभ होते हैं।

- **राष्ट्रीय संसाधन** : क़ानूनी तौर पर देश या राष्ट्र के अन्तर्गत सभी उपलब्ध संसाधन राष्ट्रीय हैं। देश की सरकार को वैधानिक हक है कि वे व्यक्तिगत संसाधनों का अधिग्रहण आम जनता के हित में कर सकती है।

> **क्या आप जानते हैं ?**
> किसी राजनीतिक सीमा के अंतर्गत भूमि, खनिज पदार्थ, जल संसाधन, वन व वन्यजीव एवं समुद्री जीव (200 कि०मी० महासागरीय क्षेत्र तक) राष्ट्रीय संसाधन हैं।

आपने अपने गाँवों में या आसपास के क्षेत्रों में भी शहरी विकास प्राधिकरण का बोर्ड देखा होगा। इसे सरकार ने भूमि अधिग्रहित करने हेतु अधिकृत किया है। ये भूमि सहित अन्य नगरीय संसाधनों का विकास करते हैं।

- **अंतर्राष्ट्रीय संसाधन** : ऐसे संसाधनों का नियंत्रण अंतर्राष्ट्रीय संस्था करती है। तट रेखा से 200 कि०मी० की दूरी छोड़कर खुले महासागरीय संसाधनों पर किसी देश का अधिपत्य नहीं होता है। ऐसे संसाधन का उपयोग सिर्फ अनुसंधान हेतु अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं की सहमति से किसी राष्ट्र द्वारा किया जा सकता है।

> **क्या आप जानते हैं ?**
> किसी देश की तट रेखा से 200 कि०मी० की दूरी तक का क्षेत्र 'अपवर्जक आर्थिक क्षेत्र' के नाम से जाना जाता है।

→ **विकास के स्तर पर भी संसाधन को चार भागों में वर्गीकृत किया जाता है :**

- **संभावी संसाधन** : ऐसे संसाधन जो किसी क्षेत्र विशेष में मौजूद होते हैं, जिसे उपयोग में लाये जाने की संभावना रहती है। इसका उपयोग अभी तक नहीं किया गया है। जैसे–हिमालयी क्षेत्र का खनिज, जिनका उत्खनन अधिक गहराई में होने के कारण दुर्गम एवं महँगा है। उसी प्रकार राजस्थान एवं गुजरात क्षेत्र में पवन और सौर-उर्जा की असीम संभावनायें हैं, परन्तु अभी तक इनका सही रूप से विकास नहीं हो पाया है।

> **क्या आप जानते हैं ?**
> गुजरात के भुज में सौर ऊर्जा का आधुनिक उपक्रम बड़े स्तर पर लगाया जा रहा है।

- **विकसित संसाधन** : ऐसे संसाधन जिनका सर्वेक्षणोपरांत उपयोग हेतु मात्रा एवं गुणवत्ता का निर्धारण हो चुका है। पूर्व में भी यह

बताया जा चुका है कि संसाधनों का विकास तकनीक और उनकी संभाव्यता पर निर्भर है।

भंडार संसाधन : ऐसे संसाधन पर्यावरण में उपलब्ध होते हैं तथा मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति में सक्षम हैं। उपयोग हेतु उपयुक्त प्रोद्यौगिकी के अभाव में इन्हें केवल भंडारित संसाधन के रूप में देखा जाता है। उदाहरणार्थ-जल, हाइड्रोजन एवं ऑक्सीजन का यौगिक है, जिसमें ऊर्जा उत्पादन की असीम क्षमता छिपी हुई है । लेकिन उच्च तकनीक के अभाव में ऐसे संसाधनों का उपयोग नहीं कर पा रहे हैं।

क्रिया-कलाप :
अपने आस-पास के क्षेत्रों का निरीक्षण कर संभाव्य एवं संचित कोष संसाधन की एक सूची तैयार करें ।

संचित कोष संसाधन : वास्तव में ऐसे संसाधान भंडार संसाधन के ही अंश हैं, जिसे उपलब्ध तकनीक के आधार पर प्रयोग में लाया जा सकता है। इनका तत्काल उपयोग प्रारंभ नहीं हुआ है। यह भविष्य की पूँजी है। नदी जल भविष्य में जल-विद्युत उत्पन्न करने में उपयुक्त हो सकते हैं। वर्तमान में इसका उपयोग अत्यंत ही सीमित है। ऐसे संसाधन वन में या बाँधों में जल के रूप में संचित हैं।

संसाधन नियोजन :

संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग ही संसाधन नियोजन है। वर्तमान परिवेश में संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग हमारे सामने चुनौती बनकर खड़ा है। संसाधनों के विवेकपूर्ण दोहन हेतु सर्वमान्य रणनीति तैयार करना संसाधन नियोजन की प्रथम प्राथमिकता है।

क्रिया-कलाप :
प्रदेश के अंदर पाये जाने वाले खनिजों के उत्खनन एवं भण्डार क्षेत्र की सूची तैयार कीजिए।

संसाधन नियोजन किसी भी राष्ट्र के विकास के लिए आवश्यक होता है। भारत जैसे देश के लिए तो यह अपरिहार्य है, जहाँ संसाधन की उपलब्धता में अत्यधिक विविधता के साथ-साथ सघन जनसंख्या व्याप्त है। यहाँ कई ऐसे प्रदेश हैं जो संसाधन सम्पन्न हैं। कई ऐसे भी प्रदेश हैं जो संसाधन की दृष्टि से काफी विपन्न हैं। कुछ ऐसे भी प्रदेश हैं जहाँ एक ही प्रकार के संसाधनों का प्रचुर भंडार है और अन्य दूसरे संसाधनों में वह गरीब हैं। जैसे-झारखंड, म०प्र० और छत्तीसगढ़

आदि ऐसे प्रदेश हैं, जहाँ खनिज एवं कोयला का प्रचुर भंडार है। उसी प्रकार बिहार भी चूना-पत्थर एवं पाइराइट जैसे खनिजों में धनी है। अरूणाचल प्रदेश में जल संसाधन प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हैं। परन्तु कतिपय कारणों से उसका विकास नहीं हो पाया है। राजस्थान में सौर-ऊर्जा के साथ-साथ पवन ऊर्जा की प्रचुरता है। परन्तु यह राज्य जल संसाधन की दृष्टि से अति निर्धन है। भारत के अंतर्गत लद्दाख जैसे भी क्षेत्र हैं, जो शीत मरूस्थल के रूप में अन्य भागों से अलग-थलग हो गया है। लेकिन यह प्रदेश सांस्कृतिक विरासत का धनी है। यहाँ जल, महत्वपूर्ण खनिज एवं मौलिक अवसंरचना की बहुत कमी है। अत: राष्ट्रीय, प्रांतीय तथा अन्य स्थानीय स्तरों पर संसाधनों के समायोजन एवं संतुलन के लिए संसाधन-नियोजन की अनिवार्य आवश्यकता है।

भारत में संसाधन-नियोजन :

संसाधन-नियोजन एक जटिल प्रक्रिया है। इसके लिए आवश्यक क्रिया-कलाप की आवश्यकता होती है। ये क्रिया-कलाप संसाधन-नियोजन के सोपान होते हैं। इन सोपानों के सहारे किसी देश के उपलब्ध संसाधन का सदुपयोग कर उस देश की उन्नति का मार्ग प्रशस्त किया जा सकता है।

संसाधन नियोजन के सोपानों को निम्न रूप में बाँटकर अध्ययन किया जा सकता है। :

(क) देश के विभिन्न प्रदेशों में संसाधनों की पहचान कराने के लिए सर्वेक्षण कराना।

(ख) सर्वेक्षणोपरांत, मानचित्र तैयार करना एवं संसाधनों का गुणात्मक एवं मात्रात्मक आधार पर मापन या आकलन करना।

(ग) संसाधन-विकास योजनाओं को मूर्त्त-रूप देने के लिए उपयुक्त प्रौद्योगिकी, कौशल एवं संस्थागत, नियोजन की रूप रेखा तैयार करना।

(घ) राष्ट्रीय विकास योजना एवं संसाधन विकास योजनाओं के मध्य समन्वय स्थापित करना।

ज्ञात कीजिए :
बिहार राज्य में सामूहिक भागीदारी की सहायता से आपके आस-पास में संसाधन विकास के कौन-कौन कार्यक्रम चलाये जा रहे हैं ?

हमारे देश में स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से ही संसाधन-नियोजन के लक्षित उद्देश्यों को हासिल करने का प्रयास किया जा रहा है। इस संदर्भ में भारत सरकार प्रथम पंचवर्षीय योजना से ही प्रयासरत है। किसी भी इकाई पर विकास हेतु संसाधन एक आवश्यक शर्त है। किन्तु, प्रौद्योगिकी एवं संस्थानों में वांछित परिवर्तन के अभाव में केवल संसाधनों की उपलब्धता से विकास संभव नहीं है। आज भी हमारे देश में ऐसे कई राज्य हैं, जहाँ संसाधन की प्रचुरता के बाद भी आर्थिक रूप से पिछड़े राज्य में इनकी गणना की जाती है। इसके विपरीत कुछ ऐसे भी राज्य हैं, जो संसाधन के अभाव में भी आर्थिक रूप से विकसित हैं।

संसाधनों का संरक्षण :

> **क्रिया-कलाप :**
> ऐसे प्रदेशों को ज्ञात कीजिये जो संसाधन की दृष्टि से सम्पन्न एवं आर्थिक रूप से विपन्न हैं। इसके लिए अपने शिक्षक से भी मदद लें।

सभ्यता एवं संस्कृति के विकास में संसाधनों की अहम् भूमिका होती है। किन्तु, संसाधनों का अविवेकपूर्ण या अतिशय उपयोग विविध प्रकार के सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक एवं पर्यावरणीय समस्याओं को जन्म देते हैं। इन समस्याओं के समाधान हेतु विभिन्न स्तरों पर संरक्षण की आवश्यकता है। संसाधनों का नियोजित एवं विवेकपूर्ण उपयोग ही संरक्षण कहलाता है।

प्राचीन काल से ही संसाधनों का संरक्षण, समाज-सुधारकों, नेताओं, चिंतकों एवं पर्यावरणविदों के लिए एक चिन्तनीय ज्वलंत विषय रहा है। इस संदर्भ में महान् दार्शनिक एवं चिंतक महात्मा-गाँधी के विचार प्रासंगिक है-

''हमारे पास पेट भरने के लिए बहुत कुछ हैं, लेकिन पेटी भरने के लिए नहीं।''

मेधा पाटेकर का 'नर्मदा बचाओ अभियान', सुन्दर लाल बहुगुणा का 'चिपको आंदोलन', एवं संदीप पांडेय द्वारा वर्षा-जल संचय कर कृषित भूमि का विस्तार , संसाधन संरक्षण की दिशा में अत्यंत सराहनीय कदम है।

गाँधी जी जैसे कई चिंतकों का मानना है कि मानव का स्वार्थी और लालची प्रवृति तथा अत्याधुनिक तकनीक की शोषणात्मक क्रिया-कलाप संसाधन के तीव्रतम ह्रास के लिए मजबूर कर

देता है। गाँधीजी मशीन द्वारा उत्पादन के घोर विरोधी थे। वे बड़े जनसमुदाय द्वारा उत्पादों के उत्पादन के समर्थक थे, जिससे एक बड़ी आबादी को बेरोजगारी जैसे सामाजिक कोढ़ से बचाया जा सके। उनका मानना था कि इस प्रक्रिया में श्रमिकों में कार्य-दक्षता के विकास में वृद्धि होगी और संसाधनों के विदोहन पर भी विराम लग सकेगा।

क्या आप जानते हैं ?
मानव एवं तकनीक को शोषणात्मक दोहन प्रवृत्ति डाकुओं की अर्थव्यवस्था (Robber's Economy) कहा जाता है।

संसाधन के संरक्षण हेतु अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर अनेक सम्मेलन हुए हैं। सर्वप्रथम 1968 ई० में 'क्लब ऑफ रोम' ने इसकी वकालत की थी। 1974 ई० में शुमशेर की पुस्तक 'स्मॉल इज ब्यूटीफूल' में इससे संबंधित गाँधीजी के विचार प्रकाशित हुए। ब्रंटलैण्ड आयोग द्वारा प्रस्तुत 1987 का प्रतिवेदन भी संसाधन-संरक्षण के संबंध में विश्व-जगत् की दृष्टि खोलने में कारगर सिद्ध हुआ। इसमें सतत् विकास (Sustainable Development) की संकल्पना के साथ-साथ संसाधन संरक्षण पर बल दिया गया है। इसी रिपोर्ट को बाद में हमारा साझा भविष्य (Our Common Future) शीर्षक से भी दस्तावेज प्रकाशित किया गया। रियो-डी-जेनेरो (ब्राजील) में 1992 ई० में आयोजित पृथ्वी सम्मेलन भी इस संदर्भ में एक सुनियोजित प्रयास था। पुनः 1997 ई० में न्यूयार्क में द्वितीय पृथ्वी सम्मेलन तथा 2002 में जोहान्सबर्ग में आयोजित तृतीय पृथ्वी सम्मेलन, संसाधन संरक्षण की दिशा में विश्व स्तरीय सराहनीय प्रयास है ।

क्या आप जानते हैं ?
पर्यावरण संरक्षण हेतु सर्वप्रथम स्टॉकहोम में विश्व शिखर सम्मेलन 1972 ई० में आयोजित हुआ था। इसी सम्मेलन के पश्चात् प्रतिवर्ष 5 जून को **पर्यावरण दिवस** के रूप में भी मनाया जाता है।

सतत् विकास की अवधारणा :

संसाधन मनुष्य के जीविका का आधार है। जीवन की गुणवत्ता बनाये रखने के लिए संसाधनों के सतत् विकास की अवधारणा अत्यावश्यक है। 'संसाधन प्रकृति-प्रदत्त उपहार है' की अवधारणा के कारण मानव ने इनका अंधा-धुंध दोहन किया, जिसके कारण पर्यावरणीय समस्याएँ भी उत्पन्न हो गयी हैं।

व्यक्ति के लालच-लिप्सा ने संसाधनों का तीव्रतम दोहन कर संसाधनों के भण्डार में चिंतनीय ह्रास ला दिया है। संसाधनों का केन्द्रीकरण (Centralization) खास लोगों के हाथों में आने से समाज दो स्पष्ट भागों में (सम्पन्न एवं विपन्न) बँट गया है।

सम्पन्न लोगों द्वारा स्वार्थ के वशीभूत होकर संसाधनों का विवेकहीन दोहन किया गया। जिससे विश्व पारिस्थितिकी में घोर संकट की स्थिति उत्पन्न हो गई है। भूमंडलीय-तापन, ओजोन क्षय, पर्यावरण-प्रदूषण, मृदा-क्षरण, भूमि-विस्थापन, अम्लीय-वर्षा, असमय ऋतु-परिवर्तन जैसी पारिस्थितिकी-संकट पृथ्वी पर व्याप्त सभ्यता-संस्कृति को निगल जाने को तैयार हैं। अगर इन स्वार्थी तत्वों या देशों द्वारा अनवरत-विदोहन चलता रहा तो पृथ्वी का जैव संसार विनाश के आगोश में समा जाएगा।

उपरोक्त परिस्थितियों से निजात पाने एवं विश्व-शांति के साथ जैव जगत् को गुणवत्तापूर्ण जीवन लौटाने के लिए सर्वप्रथम समाज में संसाधनों का न्याय-संगत बँटवारा अपरिहार्य है। दूसरे शब्दों में संसाधनों का नियोजित उपयोग होना आवश्यक है। इससे पर्यावरण को बिना क्षति पहुँचाये, भविष्य की आवश्यकताओं के मद्देनजर, वर्तमान विकास को कायम रखा जा सकता है । ऐसी धारणा ही सतत विकास (Sustainable Development) कही जाती है। इससे वर्तमान विकास के साथ भविष्य भी सुरक्षित रह सकता है।

स्मरणीय तथ्य :

- **प्रथम पृथ्वी सम्मेलन** का आयोजन 3-14 जून 1992 को रियो-डी-जेनेरो में किया गया। जिसमें विकसित एवं विकासशील देशों के लगभग 178 प्रतिनिधियों ने भाग लिया। इस सम्मेलन में ग्लोबल-वार्मिंग, वन-संरक्षण, जैव-विविधता, कार्यक्रम 21, एवं रियो घोषणा-पत्र पर समझौता किए गए।
- **कार्यक्रम 21 (Agenda 21):** संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण और विकास (UNCED) के तत्वाधान में रियो-डी-जेनेरो सम्मेलन में राष्ट्राध्यक्षों द्वारा स्वीकृत 800 पृष्ठीय एक घोषणा-पत्र है जिसमें सतत् विकास को प्राप्त करने के लिए 21 कार्यक्रम को

स्वीकृत किया गया इस एजेंडा-21 को गठित करने हेतु सभी देशों को निर्देश दिये गये तथा इस पर होने वाले खर्च के वहन हेतु 'विश्व पर्यावरण कोष' की स्थापना की गई है।

- **द्वितीय पृथ्वी सम्मेलन** का आयोजन 23-27 जून 1997 को न्यूयार्क में प्रथम सम्मेलन के मूल्यांकन के लिए 5 वर्ष बाद आयोजित हुआ। इसे प्लस-5 सम्मेलन भी कहा जाता है।

- **क्योटो सम्मेलन**-दिसम्बर 1997 में पृथ्वी को ग्लोबल वार्मिंग से बचाने के लिए जापान के क्योटो में सम्मेलन आयोजित हुए जिसमें 159 देशों ने भाग लिया। इसमें 6 गैसों (Co_2, मिथेन, N_2o, HFC, पर फ्लूरो कार्बन, सल्फर हेक्सा क्लोराईड) को ग्लोबल वार्मिंग के लिए जिम्मेवार-मानते हुए इसके उपयोग में कटौती पर सहमति बनी। जहाँ यूरोपीय संघ ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन में 8% संयुक्त राज्य अमेरिका 7% एवं जापान 6% की कटौती पर सहमत हुए। इसे मांट्रियल समझौता 1987 का विस्तार भी माना जा सकता है। इस सम्मेलन को विश्व पर्यावरण सम्मेलन या ग्रीन हाउस सम्मेलन के नाम से भी जाना जाता है।

- **तृतीय पृथ्वी सम्मेलन** का आयोजन 10 वर्ष बाद 26 अगस्त-4 सितम्बर 2002 में जोहासबर्ग में आयोजित हुआ। इस सम्मेलन में पर्यावरण संबंधी 150 धाराओं पर विश्वस्तरीय सहमति तैयार करना था पर इस सम्मेलन का कोई परिणाम नहीं निकल सका। इस सम्मेलन में विश्व के विभिन्न देशों से लगभग 2000 प्रतिनिधियों ने भाग लिया।

अभ्यास-प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न :

i कोयला किस प्रकार का संसाधन है?

(a) अनवीकरणीय (b) नवीकरणीय

(c) जैव (d) अजैव

ii सौर ऊर्जा निम्नलिखित में से कौन-सा संसाधन है :-

(a) मानवकृत (b) पुनः पूर्तियोग्य

(c) अजैव (d) अचक्रीय

iii तट रेखा से कितने कि० मी० क्षेत्र सीमा अपवर्जक आर्थिक क्षेत्र कहलाते है?

(a) 100 N.M. (b) 200 N.M.

(c) 150 N.M. (d) 250 N.M.

iv डाकूओं की अर्थव्यवस्था का संबंध है :-

(a) संसाधन संग्रहण से (b) संसाधनों के अनियोजित विदोहन से

(c) संसाधन के नियोजित दोहन से (d) इनमें से कोई नहीं ।

v समुद्री क्षेत्र में राजनैतिक सीमा के कितनी कि० मी० क्षेत्र तक राष्ट्रीय सम्पदा निहित हैं :-

(a) 10.2 कि० मी० (b) 15.5 कि० मी०

(c) 12.2 कि० मी० (d) 19.2 कि० मी०

लघुउत्तरीय प्रश्न :

1. संसाधन को परिभाषित कीजिए ।
2. संभावी एवं संचित-कोष संसाधन में अंतर स्पष्ट कीजिए ।
3. संसाधन संरक्षण की उपयोगिता को लिखिए ।
4. संसाधन-निर्माण में तकनीक की क्या भूमिका है, स्पष्ट कीजिए ।

दीर्घउत्तरीय प्रश्न :

1. संसाधन के विकास में 'सतत् विकास' की अवधारणा की व्याख्या कीजिए ।
2. स्वामित्व के आधार पर संसाधन के विविध स्वरूपों का वर्णन कीजिए ।

परियोजना कार्य

1. विद्यालय में विषय शिक्षक से मिलकर एक संगोष्ठी का आयोजन करें, जिसमें उपयोग में आनेवाले संसाधनों के संरक्षण के उपाय पर चर्चा हो ।
2. अपने प्रखंड में उपलब्ध संभाव्य संसाधन का सर्वेक्षण कर उसके विकास पर आधारित एक प्रतिवेदन प्रस्तुत कीजिए ।

(क) प्राकृतिक संसाधन

(क) भूमि संसाधन :

पूर्व अध्याय के अध्ययन से आप संसाधन की संकल्पना से अवगत हो चुके हैं । यहाँ यह भी स्पष्ट किया जा चुका है कि किसी भी देश की समृद्धि उपलब्ध संसाधनों के उचित उपयोग पर निर्भर है । संसाधन की संकल्पना मानवीय आवश्यकताओं को तुष्ट करने वाले साधन एवं संतुष्ट करने वाले सेवाओं में यकीन करता है । इसमें तकनीकी ज्ञान एवं संस्थाओं का सहयोग अपरिहार्य है ।

हम भूमि पर निवास करते हैं । हमारा आर्थिक क्रिया कलाप इसी पर संपादित होता है । हम विभिन्न रूपों में इसका उपयोग करते हैं । अतः यह अत्यंत महत्त्वपूर्ण संसाधन है । यह प्रकृति प्रदत्त होने के कारण एक प्राकृतिक संसाधन है । कृषि, वानिकी, पशु-चारण, मत्स्यन, खनन, वन्य-जीवन, परिवहन संचार, जैसे आर्थिक क्रियाएँ भूमि पर सम्पन्न होने के कारण यह एक भौतिक संसाधन है । इतने व्यापक रूप उपयोगी होने के बावजूद यह एक सीमित संसाधन है । अस्तु, यह आवश्यक है कि उपलब्ध भूमि का विविध उद्देश्यों की पूर्ति के लिए सावधानीपूर्वक एवं नियोजित रूप से उपयोग किया जाय ।

भूमि संसाधन के कई भौतिक स्वरूप हैं, जैसे-पर्वत, पठार, मैदान, निम्नभूमि और घाटियाँ इत्यादि । ये विविध स्वरूप जलवायु से भी प्रभावित होते हैं। भारत भूमि संसाधन में सम्पन्न है। यहाँ कुल उपलब्ध भूमि के लगभग 43 प्रतिशत भाग पर मैदान का विस्तार है, जो कृषि एवं उद्योगों के विकास के लिए उपयोगी है। 30 प्रतिशत भाग पर्वतीय क्षेत्र है, जो

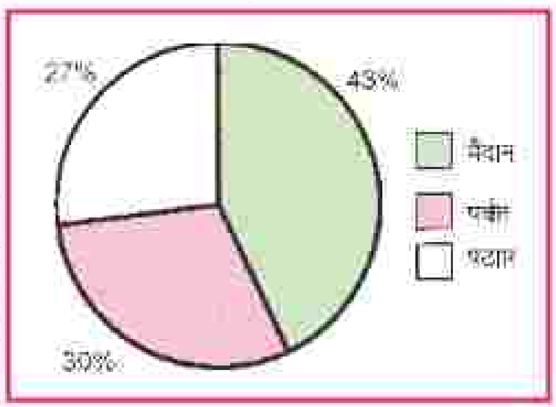

चित्र-1(क).1 : भारत में भूमि का भौतिक स्वरूप

बारहमासी नदियों के प्रवाह को सुनिश्चित करते हुए पर्यटन विकास के लिए अनुकूल परिस्थितियाँ मुहैया कराती हैं । यह पारिस्थितिकी संतुलन के लिए भी महत्त्वपूर्ण है । देश का 27 प्रतिशत भूभाग पठार के रूप में विस्तृत हैं, जहाँ खनिज, जीवाश्म ईंधन एवं वन सम्पदा के कोष संचित हैं ।

मृदा निर्माण

मृदा पारितंत्र का एक महत्त्वपूर्ण घटक है । असंगठित पदार्थों से निर्मित पृथ्वी की सबसे ऊपरी पतली परत मृदा कहलाती है । मिट्टी या मृदा सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण नवीकरणीय प्राकृतिक संसाधन है । यह न केवल पौधों के विकास का माध्यम है बल्कि, पृथ्वी पर विविध जीव-समुदायों का पोषण भी करती है । मृदा में निहित उर्वरता मानव के आर्थिक क्रिया-कलाप को प्रभावित करता है और देश की नियति का भी निर्धारण करता है । इसके नष्ट होने के साथ संपत्ति एवं संस्कृति दोनों ध्वस्त हो जाते हैं । अतः मृदा एक जीवंत तंत्र है।

मृदा निर्माण एक लंबी अवधि में पूर्ण होने वाली जटिल प्रक्रिया है । कुछ सेंटीमीटर गहरी मृदा के निर्माण में लाखों वर्ष लग जाते हैं। चट्टानों के टूटने-फूटने तथा भौतिक, रासायनिक और जैविक परिवर्तनों से मृदा निर्माण होता है । भूगोलविद् इसे अत्यन्त धीमी प्रक्रिया मानते हैं ।

मृदा निर्माण के कारक

- उच्चावच या धराकृति
- मूल शैल या चट्टान
- जलवायु
- वनस्पति
- जैव पदार्थ
- खनिज कण
- समय

चित्र-1(क).2 : मृदा परिच्छेरिका

तापमान परिवर्तन, प्रवाहित जल की क्रिया, पवन, हिमनद और अपघटन की अन्य क्रियाएँ भी ऐसे तत्त्व हैं, जो मृदा निर्माण में सहयोग करती हैं। मृदा निर्माण में जैविक एवं रासायनिक परिवर्तन की भी अहम् भूमिका होती है । निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि मृदा निर्माण में जैव (ह्यूमस) और अजैव दोनों प्रकार के पदार्थ भाग लेते है। (चित्र 1(क).2)

मृदा निर्माण की प्रक्रिया के निर्धारक तत्त्व, उनके रंग गठन, गहराई, आयु व रासायनिक और भौतिक गुणों के आधार पर भारत की मृदा को निम्नवत् बाँट कर अध्ययन किया जा सकता है ।

मृदा के प्रकार एवं वितरण :

भारत के उच्चावच, भू-आकृति, जलवायु एवं वनस्पतियों में पर्याप्त विविधता पायी जाती है । जिसकी वजह से यहाँ छः (6) प्रमुख प्रकार की मृदाएँ विकसित हुई हैं । ये भूमि संसाधन की गुणवत्ता के आधार हैं। इनका वर्णन क्रमशः किया जा रहा है :

1. जलोढ़ मृदा :

यह मृदा भारत में विस्तृत रूप से फैली हुई सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण मृदा है । उत्तर भारत का मैदान पूर्णतः जलोढ़ निर्मित है, जो हिमालय की तीन महत्त्वपूर्ण नदी प्रणालियों सिंधु, गंगा और ब्रह्मपुत्र द्वारा लाए गए जलोढ़ के निक्षेप से बना है । राजस्थान एवं गुजरात में भी एक सँकरी पट्टी के रूप में इस मृदा का प्रसार है ।

चित्र-1 (क).3 : जलोढ़ मृदा

पूर्वी तटीय मैदान स्थित महानदी, गोदावरी, कृष्णा और कावेरी नदियों द्वारा निर्मित डेल्टा का भी निर्माण जलोढ़ से ही जुड़ा है। कुल मिलाकर भारत में लगभग 6.4 करोड़ हेक्टेयर क्षेत्र पर जलोढ़ मृदा फैली हुई है ।

जलोढ़ मिट्टी का गठन बालू, सिल्ट एवं मृत्तिका के विभिन्न अनुपात से होता है। इसका रंग धुँधला से लेकर लालिमा लिये भूरे रंग का होता है।

इस मृदा के कण नदी मुहाने से घाटी में ऊपर और क्रमशः बड़े होते जाते हैं। ऐसी मृदाएँ पर्वत पदीय क्षेत्र में बने मैदानों जैसे- द्वार, 'चौर' एवं तराई में आमतौर पर मिलती हैं। इनके कणों पर घटकों के अलावा मृदा की पहचान इनके आयु से भी होती है। आयु के आधार पर जलोढ़ मृदा के दो प्रकार हैं:–पुराना एवं नवीन जलोढ़। पुराने जलोढ़ में कंकड़ एवं बजरी की मात्रा अधिक होती है। इसे बांगर कहा जाता है। बांगर की तुलना में नवीन जलोढ़ में महीन कण पाये जाते हैं; खादर कहलाता है। 'खादर' में बालू एवं मृत्तिका का मिश्रण होता है। ये काफी उपजाऊ होते है।

जलोढ़ मृदा में पोटाश, फास्फोरस और चूना जैसे तत्वों की प्रधानता होती है, जबकि इसमें नाइट्रोजन एवं जैव पदार्थों की कमी रहती है। यह मिट्टी गन्ना, चावल, गेहूँ, मक्का, दलहन जैसी फसलों के लिए उपयुक्त मानी जाती है। अधिक उपजाऊ होने के कारण इस मिट्टी पर गहन कृषि की जाती है। परिणामतः, यहाँ जन-संख्या घनत्व भी ऊँचा है।

क्या आप जानते हैं ?

उत्तर बिहार में बालू प्रधान जलोढ़ को दियारा भूमि कहते हैं। यह मक्का की कृषि के लिए विश्व प्रसिद्ध है।

2. काली मृदा

इस मिट्टी का रंग काला होता है जो इसमें उपस्थित एल्युमीनियम एवं लौह यौगिक के कारण है। यह कपास की खेती के लिए सर्वाधिक उपयुक्त मानी जाती है। जिस कारण इसे 'काली कपासी मृदा' के नाम से भी जाना जाता है। भारत में यह मृदा लगभग 6.4 करोड़ हेक्टेयर भूमि पर फैली हुई है। जो खास तौर पर दक्कन के लावा प्रदेश

चित्र-1 (क).4 : काली मृदा

महाराष्ट्र, गुजरात, कर्नाटक, आंध्रप्रदेश तथा तमिलनाडु राज्यों में विस्तृत हैं । इस मिट्टी का निर्माण, मूल शैलों एवं ज्वालामुखी के बेसाल्ट लावा के विघटन से हुआ है । इस मृदा का स्थानीय नाम 'रेगुर' भी है।

इस मिट्टी की सबसे बड़ी विशेषता है कि इसमें नमी धारण करने की क्षमता अत्यधिक होती है । यह मृदा कैल्शियम कार्बोनेट, मैग्नीशियम, पोटाश और चूना जैसे पौष्टिक तत्वों से परिपूर्ण होती है । किन्तु, फास्फोरस की कमी रहती है । शुष्क या गर्म मौसम में इसमें दरारें पड़ जाती हैं, जिससे अच्छी तरह से वायु का मिश्रण हो पाता है । किन्तु, गीली होने के साथ ही यह मृदा चिपचिपी हो जाती है, जिसे जोतना संभव नहीं हो पाता है । अतः मॉनसून के प्रथम बौछार में ही इसमें जुताई कर दिया जाता है। कम वर्षा के क्षेत्रों में भी अत्यधिक ऑक्सीकृत होने के कारण बिना सिंचाई के भी कपास की खेती के लिए यह मिट्टी उपयुक्त है। इसके अतिरिक्त इस मृदा में गन्ना, प्याज, गेहूँ एवं फलों की खेती अनुकूल मानी जाती है ।

3. लाल एवं पीली मृदा :

इस प्रकार की मृदा का विकास प्रायद्वीपीय पठार के पूर्वी एवं दक्षिणी हिस्से में रवेदार आग्नेय चट्टानों द्वारा सामान्यतः 100 से०मी० से कम वर्षा वाले क्षेत्रों में हुआ है। इस मृदा में लौहांश की मात्रा के कारण इसका रंग लाल होता है । जलयोजन के पश्चात् यह मृदा पीले रंग की हो जाती है । मूल रूप से यह ग्रेनाइट, नीस- जैसे रवेदार आग्नेय चट्टानों के विघटित एवं रूपांतरित होने से बने हैं । इसका विस्तार भारत के कुल कृषि भूमि के 7.2 करोड़ हेक्टयर भूमि पर पाया जाता है । लाल या पीली मृदा का प्रसार तमिलनाडु, कर्नाटक, गो.वा, द० पू० महाराष्ट्र, आंध्रप्रदेश, उड़ीसा, छोटानागपुर पठार एवं मेघालय पठार के क्षेत्रों में है । जैव पदार्थों की कमी के कारण यह मृदा जलोढ़ एवं काली मृदा की अपेक्षा कम उपजाऊ होती है । उर्वरकों का उपयोग कर इसकी उत्पादकता को बढ़ाई जा सकती है । इस मृदा में सिंचाई की व्यवस्था कर चावल, ज्वार-बाजरा, मक्का, मूंगफली, तम्बाकू और फलों का उत्पादन किया जा सकता है ।

4. लैटेराइट मृदा :

लैटेराइट शब्द की उत्पत्ति ग्रीक भाषा के लैटर (LATER) शब्द से हुआ है, जिसका शाब्दिक अर्थ **'ईंट' होता है** । **इस प्रकार** के मिट्टी की विकास उच्च तापमान एवं अत्यधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में हुआ है । भारत में इस मृदा का विस्तार 1.3 करोड़ हेक्टेयर से भी अधिक भू-भाग पर है । ऋतुवत् भारी वर्षा से ऊँचे सपाट अपरदित सतहों पर यह मृदा पायी जाती है । यह मृदा, **तीव्र निक्षालन (Leaching) का परिणाम है** । जिसमें ह्यूमस की मात्रा नगण्य होती है । अत्यधिक तापमान **के कारण जैविक पदार्थों को** अपघटित करने वाले **बैक्टीरिया** नष्ट हो जाते हैं । अपक्षय के कारण **लैटेराट मिट्टी कठोर** हो जाती है । एल्युमीनियम और लोहे के आक्साईड के कारण इसका रंग लाल होता है । **इस प्रकार की मिट्टियों में** रासायनिक खाद एवं अन्य उर्वरकों का प्रयोग कर उत्पादन किया जा सकता है । कर्नाटक, केरल, तमिलनाडु, म०प्र० और उड़ीसा तथा असम की पहाड़ियों में लैटेराइट मिट्टी का विस्तार मिलता है । कर्नाटक, केरल और तमिलनाडु जैसे राज्यों में मृदा संरक्षण तकनीक के सहारे चाय एवं कहवा का उत्पादन किया जाता है । तमिलनाडु, आंध्रप्रदेश और केरल में इस मृदा में काजू की खेती उपयुक्त मानी जाती है ।

चित्र-1 (क).5 : लैटेराइट मृदा

5. मरूस्थलीय मृदा :

चित्र-1(क).6 : मरूस्थलीय मृदा

इस प्रकार की मिट्टी लम्बी शुष्क ऋतु, अल्प वर्षा, ह्यूमस रहित बालुई मिट्टी वाले क्षेत्रों में विकसित होती है। इस मृदा में संस्तरों का विकास काफी कम पाया जाता है। रासायनिक अपक्षय अत्यंत सीमित होता है। इस मृदा का रंग लाल या हल्का भूरा होता है। इस प्रकार की मृदा प० राजस्थान, सौराष्ट्र, कच्छ, पश्चिमी हरियाणा और द०पंजाब में पायी जाती है। इसमें वनस्पति और उर्वरक खनिज का अभाव पाया जाता है, किन्तु, सिंचाई की व्यवस्था कर कपास, चावल, गेहूँ का भी उत्पादन किया जा सकता है।

6. पर्वतीय मृदा :

इस प्रकार की मृदाएँ प्राय: पर्वतीय और पहाड़ी क्षेत्रों में देखने को मिलती हैं। जहाँ पर्याप्त वर्षा-वन पाये जाते हैं। यह मृदा जटिल एवं विविधता वाली होती है। यह नदी घाटियों में जलोढ़ मृदा एवं ऊँचे भागों में मोटे-कणों वाली अपरिपक्व मृदा के रूप में पायी जाती है। पर्वतीय भागों में प्राय: भू-आकृतिक, वानस्पतिक एवं जलवायविक दशाओं में पर्याप्त जटिलता एवं विविधता के कारण यहाँ एक ही प्रकार के मृदा के बड़े-बड़े क्षेत्र नहीं मिलते हैं हिमाच्छादित क्षेत्रों में इन मृदाओं का अपरदन हो जाता है और ये अम्लीय एवं ह्यूमस रहित हो जाते हैं। नदी घाटी के निम्नवर्ती क्षेत्रों में, विशेषकर नदी सोपनों और जलोढ़ पंखों में, ये मृदा उपजाऊ होती हैं। यहाँ ढलानों पर फलों के बगान एवं नदी-घाटी में चावल एवं आलू का लगभग सभी क्षेत्रों में उत्पादन किया जाता है।

उपरोक्त सभी मृदा के वितरण को मानचित्र संख्या 1 (क).7 में भी देखा जा सकता है।

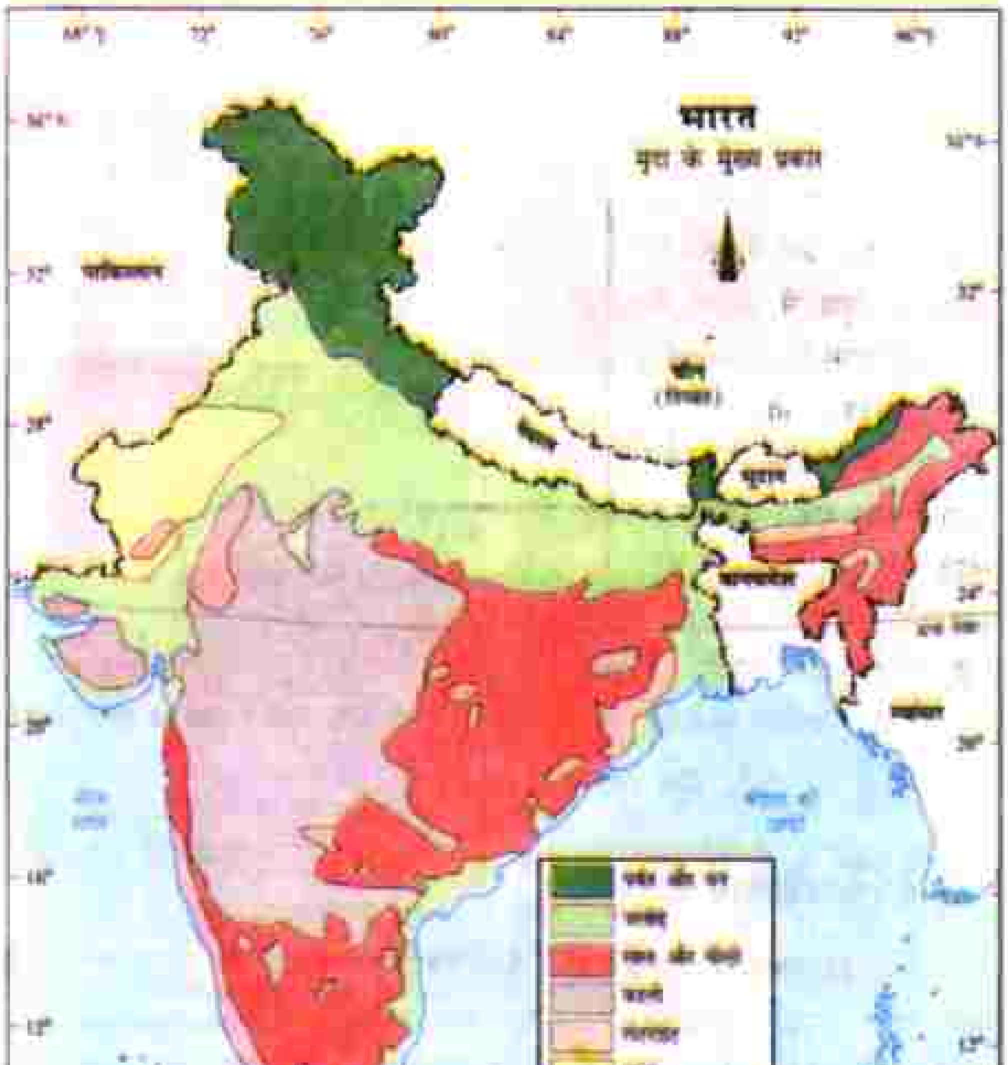

चित्र-1 (क).7 : भारत : मृदा के प्रकार का मानचित्र

भूमि उपयोग का बदलता स्वरूप

भूमि उपयोग : मानव विविध उद्देश्यों को ध्यान में रखकर भूमि-संसाधन का उपयोग करता है। ये उपयोग निम्न वर्ग में रखे जाते हैं–

(क) वन विस्तार

(ख) कृषि अयोग्य बंजर भूमि ।

(ग) गैर-कृषि कार्य में संलग्न भूमि यथा इमारत, सड़क, उद्योग इत्यादि।

(घ) स्थायी चारागाह एवं गोचर भूमि ।

(ङ) बाग-बगीचे एवं उपवन में संलग्न भूमि ।

(च) कृषि योग्य बंजर भूमि, जिसका प्रयोग पाँच वर्ष से न हुआ है ।

(छ) वर्तमान परती भूमि ।

(ज) वर्तमान परती के अतिरिक्त वह वे परती भूमि जहाँ 5 वर्षों से खेती न हुई है।

(झ) शुद्ध बोयी गयी भूमि ।

भारत में भू-उपयोग का स्वरूप

भू-उपयोग को दो प्रमुख कारक निर्धारित करते हैं:-

(क) भौतिक कारक

(ख) मानवीय कारक

भौतिक कारकों के अंतर्गत भू-आकृति, जलवायु तथा मृदा को सम्मिलित किया जाता है। जबकि मानवीय कारकों के अन्तर्गत जनसंख्या घनत्व, प्रौद्योगिक-क्षमता, संस्कृति एवं परंपरा इत्यादि शामिल किया जाता है ।

भारत के कुल भौगोलिक क्षेत्र 32.8 लाख वर्ग कि० मी० के मात्र 93% भाग का ही भूमि-उपयोग का आँकड़ा उपलब्ध है । जम्मू-कश्मीर में पाक-अधिकृत तथा चीन अधिकृत भूमि का भू-उपयोग सर्वेक्षण नहीं हो पाया है ।

भारत के भूमि उपयोग को चित्र 1.8 में देखा जा सकता है । इस चित्र में वर्ष 1960-61 एवं 2002-03 का भूमि उपयोग दिखाया गया है ।

चित्र-1 (क).8 भूमि के उपयोग

भारत पशुधन के मामले में विश्व के अग्रणी देशों में शामिल किया जाता है । किन्तु, स्थायी चारागाह के लिए बहुत कम भूमि उपलब्ध है जो पशुधन के लिए पर्याप्त नहीं है । अतः पशुपालन पर इसका प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है । वर्तमान में परती के अतिरिक्त अन्य परती भूमि अनुपजाऊ हैं । ऐसी भूमि में दो तीन वर्ष में अधिक से अधिक दो बार बोया जा सकता है । अगर ऐसी भूमि को भी शुद्ध बोया गया क्षेत्र में शामिल कर लिया जाय तब भी वर्तमान उपलब्ध क्षेत्रफल का मात्र 54% भूमि ही कृषि योग्य है ।

शुद्ध बोये गये क्षेत्र के विस्तार में भी सभी राज्यों में पर्याप्त विविधता है । पंजाब एवं हरियाणा में कुल भूमि के 80% भाग पर खेती होती है जबकि अरूणाचल प्रदेश, मिजोरम, मणिपुर एवं अंडमान निकोबार द्वीप समूह में 10% से भी कम क्षेत्र में खेती होती है ।

किसी भी देश में पर्यावरण संतुलित रखने के लिए उसके क्षेत्र के 33% भूभाग पर वन विस्तार वांछित है । इस निर्धारित सीमा को हासिल करने के लिए राष्ट्रीय वन नीति 1952 भी बनाया गया है । पर आज भी मात्र 20% भू-भाग पर वन का विस्तार किया जा सका है, जो पर्यावरणीय विनाश की ओर संकेत कर रहा है । वन पर्यावरण संतुलन के साथ-साथ लोगों की आजीविका के स्रोत भी हैं । बंजर भूमि एवं गैर-कृषि प्रयोजन कार्य में संलग्न भूमि लगातार समस्या

को बहाने में मदद कर रहे हैं । पथरीली चट्टानें, शुष्क एवं मरुस्थलीय भूमि बंजर हैं तो इस भूमि पर संस्कृति का गैर नियोजित विकास भूमि संरक्षण एवं प्रबंधन के मानकों की अवहेलना कर रहा है । मानव अधिवास का निर्माण, संचार-साधन (रेल सड़क) का विकास, उद्योग धंधे की स्थापना, उत्सर्जित पदार्थो का निपटान भू-संसाधन के निम्नीकरण में अप्रत्याशित सहयोग कर रहा है एवं इन कारणों से समाज एवं पर्यावरण दोनों पर आपदा की काली छाया पड़ने लगी है ।

भू-क्षरण और भू-संरक्षण :

मृदा को अपने स्थान से विविध क्रियाओं द्वारा स्थानांतरित होना भू-क्षरण कहलाता है । यह विविध प्राकृतिक कारकों जैसे:-गतिशील-जल, पवन, हिमानी और सामुद्रिक लहरों द्वारा एक प्रकार की मृदा चोरी है । गुरुत्व बल के प्रभाव से भी पहाड़ी ढलानों पर मृदा नीचे की ओर स्खलित होती हैं । पर्यावरणीय समस्या से जलवायु परिवर्तन, भू-तापन जैसी भयावह स्थितियाँ पैदा हुई हैं। जिसकी वजह से अनावृष्टि या अतिवृष्टि पैदा होती है । अनावृष्टि से मृदा की नमी एवं संरचनात्मक संगठन का लोप हो जाता है और धीरे-धीरे मृदा शुष्क होकर प्रकृति के अपरदनकारी दूतों द्वारा भू-क्षरित कर लिये जाते हैं । तीव्र वर्षा से भी मृदा का कटाव होकर अवनालिका के माध्यम से किसी खड्ड या घाटी में जमा कर दिये जाते हैं । भारत में इस प्रकार से लगभग 13 करोड़ हेक्टेयर भूमि का नुकसान हुआ है और ये निम्नीकृत हो गये हैं । इस निम्नीकृत भूमि का 28% क्षेत्र वन के अन्तर्गत तथा 56% क्षेत्र जल-अन्तर्गत हैं ।

चित्र-1 (क).9 : भारत बंजर भूमि 2005

शेष क्षेत्र या तो लवणीय और क्षारीय स्थिति में है या मानव क्रिया-कलाप से निम्नीकृत हो गये हैं । वनोन्मूलन, अति-पशुचारण, खनन, रसायनों का अत्यधिक उपयोग-जैसी मानवीय अनुक्रिया भूमि निम्नीकरण में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

खनन् के उपरांत उस स्थान को खाइयों एवं मलबों के साथ खुला छोड़ दिया जाता है । इसके कारण झारखंड, छत्तीसगढ़, म०-प्र० जैसे राज्यों में भूमि निम्नीकरण हुआ है । उड़ीसा वनोन्मूलन के कारण भूमि-निम्नीकरण का शिकार हुआ है। इसी प्रकार गुजरात, राजस्थान, मध्य प्रदेश और महाराष्ट्र जैसे राज्यों में अति पशुचारण ने भूमि के स्तर को कुप्रभावित किया है । पंजाब, हरियाणा और पश्चिमी उत्तर प्रदेश में अधिक सिंचाई से भी भूमि का निम्नीकरण हुआ है । अति सिंचन से जलाक्रांतता (water Logging) की समस्या पैदा होती है जिससे मृदा में लवणीय और क्षारीय गुण बढ़ जाती है जो भूमि के निम्नीकरण के लिए उत्तरदायी होते हैं । खनिज आधारित उद्योगों में (सीमेंट, मृदाबर्तन, मूर्ति-निर्माण) में चूना पत्थर, खड़िया, सैलखड़ी के पीसने से वायुमंडल में धूल विसर्जित होती है जो धीरे-धीरे भूमि पर परत के रूप में जम जाते हैं और मृदा के जल अवशोषण की क्षमता को कुप्रभावित करते हैं । उद्योगों से निकलने वाले अपशिष्ट पदार्थ भूमि और जल दोनों को ही प्रदूषित करते हैं ।

यह अकाट्य सत्य है कि मानव के 95% से भी अधिक आवश्यकताओं की पूर्ति भूमि द्वारा होती है । जीवन की उत्पत्ति एवं विकास के लिए अनुकूल परिस्थितियाँ मृदा में सुलभ होते हैं । यही हमारे पूर्वजों ने भी इस भूमि का उपयोग इस संदर्भ में किये और उनकी संतति के रूप में वर्तमान पीढ़ी भी लाभान्वित हो रही है । इतना ही नहीं, भावी पीढ़ी के लिए भी यह आधार स्तंभ बनी रहेगी । भोजन, वस्त्र, आवास जैसी अनिवार्य आवश्यकताओं की आपूर्ति के अतिरिक्त मानव ने जो अपनी लिप्सा बढ़ायी है उससे भूमि का निम्नीकरण होता रहा है । साथ ही साथ इसे बढ़ावा देने वाले प्राकृतिक ताकतों को बढ़ावा मिल रहा है

अतः भूमि निम्नीकरण आधुनिक मानव सभ्यता के लिए एक विकट समस्या है इसका संरक्षण हमारे लिए चुनौती है । किन्तु, सृष्टि को अक्षुण्ण रखना है तो चुनौती स्वीकार करते हुए संरक्षण पर ध्यान देना अवश्यक है । संरक्षण के विविध तरीके हो सकते हैं जो मानवीय क्रिया-कलाप द्वारा अनुप्रयोग में लाए जा सकते हैं । फसल-चक्रण द्वारा मृदा के पोषणीय स्तर को बरकरार रखा जा सकता है । गेहूँ, कपास, मक्का, आलू आदि के लगातार उगाने से मृदा में ह्रास

उत्पन्न होता है । इसे तिलहन-दलहन पौधे की खेती के द्वारा पुनर्प्राप्त किया जा सकता है । इससे नाइट्रोजन का स्थिरीकरण होता है । पहाड़ी क्षेत्रों में समोच्च जुताई (Contour Ploughing) द्वारा मृदा अपरदन को रोका जा-सकता है। मृदा की सतत् गुणवत्ता बनी रहे इसके लिए वर्षा जल का संचयन, भूपृष्ठीय जल का संरक्षण, भूमिगत जल की पुनर्पूर्ति का प्रबंधन आवश्यक है। आधुनिक सिंचाई पद्धतियों को अपनाकर मृदा एवं जल दोनों को संरक्षित किया जा सकता है। पवन अपरदन वाले क्षेत्रों में पट्टिका कृषि (Strip farming) श्रेयस्कर है, जो फसलों के बीच घास की पट्टियाँ विकसित करने पर आधारित है । रसायन का उचित उपयोग कर मृदा का संरक्षण किया जा सकता है । रसायनों के सतत् उपयोग से मृदा के पोषक तत्वों में कमी होने लगती है। ये पोषक तत्व जल, वायु, केंचुआ एवं अन्य सूक्ष्म जीव हो सकते है । एंड्रिन नाम का रसायन मेंढ़क के प्रजनन पर रोक लगा देता है । फलतः कीटों की संख्या को बढ़ा देता है। अतः रसायनों की जगह प्राकृतिक खाद का प्रयोग किया जाय । रसायनिक उर्वरक की जगह जैविक खाद, का उपयोग मृदा के संरक्षण में सहायक है । संभव हो तो जैव-कीटनाशी का प्रयोग किया जाय जिससे फसल की सुरक्षा के साथ साथ संख्या सीमित हो जाती है।

वृक्षारोपण मृदा संरक्षण की सबसे बड़ी शर्त है; जिससे मृदा संरक्षण को बाधा पहुँचती है और इनके पत्तियों से प्राप्त ह्यूमस मृदा की गुणवत्ता को बढ़ाने में सहायक होती है । उपरोक्त प्रक्रम या उपक्रम द्वारा मृदा संरक्षण का कार्य किया जा सकता है ।

अभ्यास-प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न :-

1. पंजाब में भूमि निम्नीकरण का मुख्य कारण है :

   (a) वनोन्मूलन (b) गहन खेती

   (c) अति-पशुचारण (d) अधिक सिंचाई

2. सेपानी कृषि किस राज्य में प्रचलित है ?

   (a) हरियाणा (b) पंजाब

   (c) बिहार का मैदानी क्षेत्र (d) उत्तराखंड

3. मरूस्थलीय मृदा का विस्तार निम्न में से कहाँ है ?

   (a) उत्तर प्रदेश (b) राजस्थान

   (c) कर्नाटक (d) महाराष्ट्र

4. मेढ़क के प्रजनन को नष्ट करने वाला रसायन कौन है ?

   (a) बेंजीन (b) यूरिया

   (c) एंड्रिन (d) फॉस्फोरस

5. काली मृदा का दूसरा नाम क्या है ?

   (a) बलुई मृदा (b) रेगुर मृदा

   (c) लाल मृदा (d) पर्वतीय मृदा

लघुउत्तरीय प्रश्न :

1. जलोढ़ मृदा के विस्तार वाले राज्यों के नाम बतावें। इस मृदा में कौन-कौन सी फसलें लगायी जा सकती हैं ?

2. समोच्च कृषि से आप क्या समझते हैं ?

3. पवन अपरदन वाले क्षेत्र में कृषि की कौन-सी पद्धति उपयोगी मानी जाती है ?

4. भारत के किन भागों में नदी डेल्टा का विकास हुआ है? यहाँ की मृदा की क्या विशेषता है।

5. फसल चक्रण मृदा संरक्षण में किस पर सहायक है ?

दीर्घउत्तरीय प्रश्न :

1. जलाक्रांतता कैसे उपस्थित होता है ? मृदा अपरदन में इसकी क्या भूमिका है ?

2. मृदा संरक्षण पर एक निबंध लिखिए ।

3. भारत में अत्यधिक पशुधन होने के बावजूद भारतीय अर्थव्यवस्था में इसका योगदान लगभग नगण्य है। स्पष्ट करें।

परियोजना कार्य :

1. अपने आस-पास के क्षेत्र में उपलब्ध मृदा संसाधन के उपयोग एवं संरक्षण हेतु एक परियोजना तैयार करें।

2. ग्राम प्रतिनिधि, विद्यालय प्रधान से मिलकर संसाधन संरक्षण एवं प्रबंधन पर एक संगोष्ठी का आयोजन करें ।

(ख) जल संसाधन

आपने, वर्ष 2008 में उत्तर बिहार के कोशी प्रदेश में आये बाढ़ को देखा होगा या इसके विषय में सुना होगा टी०वी०, समाचार-पत्र या आकाशवाणी पर देखा या सुना होगा कि उस बाढ़ की विभीषिका अत्यंत प्रलयंकारी थी, जिसमें अपार जान-माल की क्षति हुई थी।

यह जानकर आपको घोर आश्चर्य होगा कि ये जल जहाँ एक ओर प्रलय का तांडव करते हैं तो दूसरी ओर मानवीय आवश्यकताओं को सरल और सुगम बनाकर सभ्यता भी रचते हैं। यही वजह है कि विश्व की लगभग सभी सभ्यताओं का विकास नदी घाटी में ही हुआ है। आधुनिक औद्योगिक युग में भी जल कहीं विद्युत पैदा करने में प्रयुक्त हो रहे हैं, तो कहीं औद्योगिक मशीनों को ठंढा करने में।

जैसा कि आपको पता है कि पृथ्वी की सतह का तीन-चौथाई भाग जल से ढँका है। लेकिन अधिकांश जल लवणीय है। स्वच्छ जल सतही अपवाह और भूमिगत जल स्रोतों से प्राप्त होते हैं। इन स्रोतों का सतत् नवीकरण और पुनर्भरण जलीय चक्र द्वारा होता रहता है। जल चक्र गतिशील होते हैं जिस कारण जल का नवीकरण निर्बाध्य गति से होता है। यही कारण है कि यह एक नीवकरणीय संसाधन भी है। फिर भी, विश्व के अनेक देश या क्षेत्र जल के प्यासे हैं।

जल के स्रोत :

पृथ्वी के अधिकतर स्तर पर जल की उपस्थिति के कारण ही पृथ्वी को नीला ग्रह (Blue Planet) की संज्ञा दी गयी है। यह जीवों की उत्पत्ति का एक महत्त्वपूर्ण कारक है। यहाँ जल-स्रोत विविध रूपों में पाये जाते हैं। 1. भू-पृष्ठीय जल 2. भूमिगत जल, तथा 3. वायुमंडलीय जल 4. महासागरीय जल।

> **क्या आप जानते हैं?**
> **विश्व के कुल जल-आयतन का 96.5 प्रतिशत जल महासागरों में ही पाया जाता है। उनमें मात्र 2.5 प्रतिशत ही अलवणीय (मृदु) जल है।**

जल भंडार को ध्यान में रखा जाय तो महासागर सबसे बड़े जल-संग्रहण केन्द्र होते हैं। इसी कारण इसे 'जलधि' की संज्ञा दी जाती है। हमारे

जीवन में भू-पृष्ठीय और भूमिगत जल का ही प्रत्यक्षतः उपयोग होता है। अतः इन दोनों स्रोतों का वर्णन किया जा रहा है।

1. भू-पृष्ठीय जल : धरातल पर भू-पृष्ठीय जल का मूल स्रोत वर्षण है। वर्षण का लगभग 20 प्रतिशत भाग वाष्पित होकर वायुमंडल में चला जाता है। कुछ अंश भूमिगत हो जाते हैं। जबकि अधिकांश भाग नदी-नालों, झील-तालाबों तथा ताल-तलैया में मिल जाते हैं। शेष जल सागर एवं महासागरों में जा मिलता है। उपरोक्त, ये सभी भू पृष्ठ पर पाये जाने वाले जल भू-पृष्ठीय या धरातलीय जल कहलाते हैं।

2. भूमिगत जल : वर्षा जल के धरातलीय छिद्रों से रिस-रिस कर कठोर शैलीय आवरण पर जमा जल भूमिगत जल कहलाता है। इस जल के भंडारण में भू-पृष्ठीय जल का भी योगदान होता है। अर्थात्, दोनों माध्यम से जल रिसकर बड़े-मात्रा में भूगर्भ में एकत्रित हो जाती हैं। इस प्रक्रिया से एकत्रित जल भौम जल के नाम से भी जाना जाता है।

जल संसाधन का वितरण :

> **क्या आप जानते हैं?**
> विश्व के कुल मृदु जल का लगभग 75 प्रतिशत अंटार्कटिका, ग्रीनलैंड एवं पर्वतीय क्षेत्रों में बर्फ की चादर या हिमनद के रूप में पाया जाता है। और लगभग 25% भूमिगत जल स्वच्छ जल के रूप में उपलब्ध है।

विश्व स्तर पर जल के वितरण को देखा जाय तो पता चलता है कि अधिकांश जल दक्षिणी गोलार्द्ध में ही है। इसी कारण दक्षिणी गोलार्द्ध को **'जल गोलार्द्ध'** और उत्तरी गोलार्द्ध को **'स्थल गोलार्द्ध'** के नाम से जाना जाता है। पृथ्वी पर उपलब्ध जल के अधिकांश भाग लवण की उच्च सांद्रता धारण करते हैं। फिर भी जैव विविधताएँ हेतु ये महत्वपूर्ण हैं। जहाँ, **मछलियाँ समुद्री-जीव-जन्तु,** वनस्पतियों एवं खनिजों का भण्डार पाया जाता है।

भारत में जल संसाधन का वितरण अपर्याप्त है। क्योंकि, भारत में विश्व की लगभग 16% आबादी निवास करती है और इस अबादी के लिए विश्व का लगभग 4% स्वच्छ जल ही उपलब्ध है। भारत में प्रतिवर्ष 4000 घन कि०मी० जल वर्षण से तथा 1869 घन कि०मी० जल भूपृष्ठीय जल से प्राप्त होते हैं। कुल भू-पृष्ठीय जल का लगभग 2/3 भाग देश की तीन बड़ी नदियों; सिंधु, गंगा और ब्रह्मपुत्र में प्रवाहित है। आज भारत में जल भंडारण हेतु जलाशयों का निर्माण द्रुत गति से हो रहा है। जिसकी जल भंडारण की क्षमता लगभग 174 अरब घनमीटर हो गई है, जो देश की

स्वतंत्रता के समय मात्र 18 अरब घन मीटर थी। भारत की स्थलाकृति स्वरूप एवं अन्य बाधाओं की वजह से केवल 690 अरब घन मीटर जल का ही उपयोग कर पाता है, जो कुल भारत के जल का 32% है। भारत में गंगा द्रोणी में उपयोग के योग्य जल भंडारण की क्षमता सर्वाधिक है। ब्रह्मपुत्र नदी का सर्वाधिक वार्षिक प्रवाह होते हुए उपयोग योग्य जल भंडारण की क्षमता-अति न्यून है। अगर उपयोग योग्य जल भंडारण की क्षमता को अनुपातिक दृष्टि से देखा जाय तो ताप्ती नदी का स्थान प्रथम है। इसमें जल भंडारण करने की क्षमता 97 प्रतिशत है। कुछ महत्वपूर्ण नदियों का ब्यौरा निम्न सारणी सं० 3.1 से प्रदर्शित किया जा रहा है।

क्या आप जानते हैं?

ब्रह्मपुत्र एवं गंगा विश्व की 10 बड़ी नदियों में से हैं। इन नदियों को विश्व की बड़ी नदियों में क्रमशः आठवाँ एवं दसवाँ स्थान प्राप्त है।

सारणी 3.1 भारत नदियों की द्रोणियों के अनुसार पृष्ठीय और भूमिगत जल का वितरण

(इकाई अरब घन मीटर में)

नदी द्रोणी	पृष्ठीय जल प्रवाह		भूमिगत जल	
	वार्षिक प्रवाह	उपयोग	आपूर्णीय	उपयोग
1. सिंधु	713	46.0	26.5	24.3
2. गंगा	5250	250.0	171.0	157.0
3. ब्रह्मपुत्र	629.0	24.0	27.0	24.0
4. गोदावरी	1105	76.3	40.7	37.0
5. कृष्णा	70.0	58.0	26.4	24.0
6. कावेरी	21.4	19	12.3	11.3
7. महानदी	68.9	50.0	16.5	15.0
8. नर्मदा	45.7	34.5	10.8	9.9
9. ताप्ती	14.9	14.5	8.3	7.6
अन्य नदियाँ	365.4	118.2	74.0	68.2
योग	**1952.1**	**690.3**	**431.32**	**395.6**

देश में भूमिगत जल का वितरण असमान है। इस पर चट्टानों की संरचना, धरातलीय दशा, जलापूर्ति के स्रोत जैसी तत्वों का प्रभाव पड़ता है। समतल मैदानी भागों में स्थित जलज चट्टानी भागों में भूमिगत जल की अपार राशि मौजूद है। जहाँ भेद्य या प्रवेश्य चट्टान पाये जाते हैं। भारत के उत्तरी मैदान में पंजाब से लेकर ब्रह्मपुत्र घाटी तक, जो हिमालयी नदियों के कारण मिट्टी से निर्मित हुआ है; में सर्वाधिक भूमिगत जल पाये जाते हैं। यहाँ देश का 42% जल पाया जाता है। एक अनुमान के अनुसार भारत में लगभग 443.9 अरब घन मीटर भूमिगत जल उपलब्ध है। जिसका 19% जल अकेले उत्तर प्रदेश में पाया जाता है। महाराष्ट्, म०प्र० तथा तमिलनाडु जैसे बड़े राज्यों में भी भूमिगत जल संसाधन की संभाव्यता अधिक है।

जल संसाधन का उपयोग :

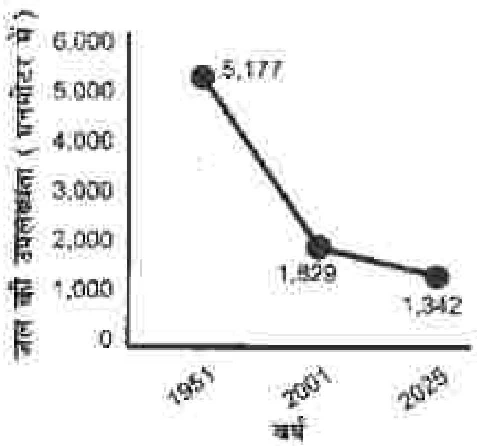

चित्र-3.1 वार्षिक जल की घटती उपलब्धता

भारत की आबादी तीव्रतम गति से बढ़ रही है। स्वतंत्रता के पश्चात् भारत की जनसंख्या लगभग तिगुनी हो गई है। आबादी वृद्धि के साथ जल की सभी क्षेत्रों में माँग त्वरित गति से बढ़ी है। पेयजल, सिंचाई तथा उद्योग जैसे उपक्रमों की वृद्धि से जल की मांग काफी बढ़ गयी है। 1951 ई० में भारत में प्रति व्यक्ति जल की उपलब्धता 5177 घन मीटर थी, जो 2001 में 1829 घन मीटर प्रति व्यक्ति तक पहुँच गई है। संभावना है 2025 ई० तक पहुँचते-पहुँचते प्रति व्यक्ति जल की उपलब्धता 1342 घन मीटर प्रति व्यक्ति हो जाएगी। जो जल संकट की समस्या के आगमन का संकेत प्रतीत होता है। जहाँ ऐसे संकटापन्न देशों को जल का आयात करना पड़ेगा।

जल का मानवीय जीवन में काफी उपयोग है। यहाँ तक कि जीवन-सृजन में भी जल महत्त्वपूर्ण है। प्राणी एवं वनस्पति में भी अधिकांश भाग जल के ही होते हैं। इससे जल के महत्व को सहज ढंग से

क्या आप जानते हैं?

प्राणियों में 65% तथा पौधों में 65–99% जल का अंश विद्यमान रहता है।

आँका जा सकता है। जल के उपयोग की सूची लंबी है। पेयजल, घरेलू कार्य, सिंचाई, उद्योग जन-स्वास्थ्य, स्वच्छता तथा मल-मूत्र विसर्जन इत्यादि कार्यों के लिए जल अपरिहार्य है। जल-विद्युत निर्माण तथा परमाणु-संयंत्र-शीतलन, मत्स्य पालन, जल-कृषि, वानिकी, जल-क्रीड़ा जैसे कार्य की कल्पना बिना जल के नहीं की जा सकती है। भारत में जल उपयोग के बदलते स्वरूप को निम्न सारणी से देखा जा सकता है।

मारा **सारणी 3.2 भारत जल के उपयोग का बदलता स्वरूप**

(इकाई अरब घन मीटर में)

उपयोग	1990	2000	2010	2025	2050
घरेलू	25	33	42	52	60
सिंचाई	460	356	633	770	800
उद्योग	15	30	79	120	130
ऊर्जा	19	27	44	71	120
अन्य	30	33	35	37	40
योग	549	659	853	1050	1150

* अनुमानित (Estimated)

बहुउद्देशीय परियोजनाएँ :

प्राचीन ग्रंथों एवं अन्य ऐतिहासिक अभिलेखों से यह स्पष्ट होता है कि ईंट-पत्थरों, मिट्टी, मलबों के सहारे झीलों या अन्य जलाशयों के तटबंध और लहरों जैसी उत्कृष्ट कृतियाँ बनाई जाती थीं। अतः यह परिपाटी नवीन नहीं है, हमने आज कई नदियों पर बांध बनाये हैं।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद देश को आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनाने तथा देशवासियों के जीवन स्तर को सुधारने हेतु योजनाएँ निर्मित हुईं, जिसमें नदी-घाटी

क्या आप जानते हैं ?
देश को विकास के रास्ते पर ले जाने वाले उक्त परियोजनाओं को प्रथम प्रधानमंत्री पं० जवाहरलाल नेहरू ने गर्व से 'आधुनिक भारत का मंदिर' कहा है।

परियोजनाओं पर विशेष बल दिया गया। इन परियोजना के विकास के कई उद्देश्य हैं– बाढ़–नियंत्रण, मृदा-अपरदन पर रोक, पेय एवं सिंचाई हेतु जलापूर्ति, विद्युत उत्पादन, उद्योगों के जलापूर्ति, परिवहन, मनोरंजन, वन्य–जीव संरक्षण, मत्स्य पालन, जल–कृषि, पर्यटन इत्यादि। इन अनेक उद्देश्यों की पूर्ति हेतु सक्षम इन नदी घाटी परियोजनाओं को बहुद्देशीय परियोजना के नाम से विभूषित किया जाता है।

चित्र-3.2 हीराकुंड बांध

प्रथम प्रधानमंत्री का दृष्टिकोण था कि नदी–घाटी परियोजाएँ कृषि, औद्योगिकरण, ग्रामीण अर्थव्यवस्था, औद्योगिकरण तथा नगरीय व्यवस्था को समन्वित रूप से विकसित कर सकेगी। भारत में अनेक नदी-घाटी परियोजनाओं का विकास हुआ है। भाखड़ा–नांगल, हीराकुंड, दामोदर, गोदावरी, कृष्णा, स्वर्णरेखा एवं सोन परियोजना जैसी अनेक परियोजनाएँ भारत के बहुआयामी विकास में सहायक हो रहे हैं। गत कुछ वर्षों से बहुद्देशीय परियोजनाएँ एवं बाँध विरोध एवं पुनर्निरीक्षण का कारण बनते रहे हैं। नदियों में बाँध लगाने से नदियों का प्राकृतिक प्रवाह अवरूद्ध होता है; जिससे तल पर अवसादीकरण तेज हो जाता है। इसी तलछट जमाव से जलीय जीवों के साथ भोजन एवं प्रजनन तथा स्वच्छन्द विचरण की समस्या तो आती ही है; साथ ही बाढ़ जैसी विभीषिका भी उत्पन्न हो जाती है। इतना ही नहीं, बाढ़ग्रस्त मैदान की वनस्पतियाँ एवं मृदाएँ प्लावित होकर अपघटित भी हो जाती है।

'नर्मदा बचाओ आन्दोलन,

टिहरी बांध आन्दोलन जैसी अनेक जनविरोध बहुद्देशीय परियोजनाओं की खामियों को उजागर करते हैं। आमतौर पर लोग अपनी जमीन, आजीविका और संसाधन से लगाव एवं नियंत्रण को त्यागकर अन्यत्र विस्थापित

क्या आप जानते हैं?

'नर्मदा बचाओ आंदोलन' एक गैर सरकारी संगठन (N.G.O.) है; जो स्थानीय लोगों, किसानों, पर्यावरणविदों, मानवाधिकार कार्यकर्त्ताओं को गुजरात के नर्मदा नदी पर सरदार सरोवर बांध के विरोध के लिए प्रेरित करता है।

हो जाते हैं। जिसके बदले इन्हें न तो पर्याप्त मुआवजा मिल पाता है, और न ही ये विस्थापित होने के पश्चात इस परियोजना का ही लाभ ले पाते हैं। इसका लाभ पूँजीपति एवं जमींदार वर्ग को अवश्य मिल जाता है। यह सच है कि सिंचाई की सुलभता ने कई क्षेत्रों में फसल के प्रतिरूप को परिवर्तित किया है। जहाँ जल कृषि एवं वाणिज्य फसलों की ओर किसान आकृष्ट हुए हैं, वहीं, मृदाओं की लवणीकरण जैसी गंभीर समस्याएँ भी उत्पन्न हो रही हैं। इसी वजह से गरीब, भूमिहीन एवं अमीर भू-स्वामी के मध्य एक सामाजिक खाई का निर्माण होता प्रतीत हो रहा है। इस तरह के झगड़े अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर भी लगते एवं लाभ के बंटवारे में दिन-प्रतिदिन समस्याएँ उत्पन्न हो रहे हैं।

चित्र-1 (ख) प्रमुख नदियाँ एवं परियोजनाएँ

अक्सर यह देखा जाता है कि नदी घाटी परियोजनाओं द्वारा वांछित उद्देश्यों की पूर्ति न करने की वजह से विरोध एवं आपत्तियां उठाई जाती हैं। इन बांधों का निर्माण बाढ़ नियंत्रण के लिए होता है। उनके जलाशयों में तलछट जमा होने से बाढ़ की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। अति वर्षा के जल भी बांध के नियंत्रण से बाहर हो जाते हैं। वर्ष 2007 में उत्तर बिहार की बाढ़-विभीषिका का मंजर आप देख या सुन चुके हैं। जो नेपाल स्थित बैराज के द्वारा छोड़े गए जल से अति विकट हो गई थी। जिससे जान-माल की क्षति के साथ-साथ भूमि निम्नीकरण की समस्या में इजाफा हुआ है। ऐसा भी माना जाता है कि बहुउद्देशीय परियोजनाओं के कारण भूकंपन की संभावना बढ़ जाती है। इतना ही नहीं, बाढ़ से जल-प्रदूषण, जल-जनित बीमारियाँ तथा फसलों में कीटाणु जनित बीमारियों का भी संक्रमण हो जाता है।

जल संकट :

जल की अनुपलब्धता जल- संकट के रूप में जाना जाता है। पृथ्वी पर विशाल जल सागर होने एवं नवीकरणीय होने के बावजूद जल दुर्लभता एक जटिल समस्या है। जल-संकट के भाव उत्पन्न होते ही मानस पटल पर सूखा ग्रस्त या अनावृष्टि क्षेत्र का चित्र उपस्थित होने लगता है। चित्र सं०-3.4 से जल संकट की स्थिति का आकलन किया जा सकता है। हम वर्षा में वार्षिक और मौसमी परिवर्तन के कारण जल संसाधन की उपलब्धता के समय और स्थान की विभिन्नता से इनकार नहीं कर सकते। प्रायः जल की कमी इसके अतिशोषण, अति उपयोग एवं समाज के विविध वर्गों में जल की असमान वितरण से उत्पन्न होती है।

> **क्या आप जानते हैं?**
> स्वीडेन के एक विशेषज्ञ फॉल्कन मार्क के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति को प्रति दिन एक हजार घन मीटर जल की आवश्यकता है। इससे कम जल उपलब्धता जल संकट है।

आप जानते हैं कि किसी क्षेत्र में प्रचुर जल उपलब्धता के बावजूद वहाँ जल दुर्लभता व्याप्त हो जाती है। हमारे कई शहर इसके उदाहरण हैं। बढ़ती जनसंख्या, उनकी मांग तथा जल के असमान वितरण भी जल दुर्लभता का परिणाम है। जलाधिक्य से न केवल जल का घरेलू उपयोग बढ़ता है बल्कि, अधिक अनाज उत्पादन हेतु जल संसाधन का अति-शोषण कर सिंचित भूमि में भी अभिवृद्धि की जा रही है। जिससे शुष्क ऋतु में कृषि किया जा सके। अक्सर, देखा जाता है कि

किसान खेतों पर अपने निजी कुँए और नलकूप के द्वारा भूमि सिंचित कर कृषि उत्पादन को बढ़ा रहे हैं। परन्तु जरा आप सोचिए इसका परिणाम क्या होगा? इससे भूमिगत जलस्तर नीचे गिर सकता है और जल की उपलब्धता में कमी आ जायेगी और जैव समुदाय में पेयजल के अभाव के साथ भोजन सुरक्षा भी खतरे में पड़ जाएगा।

क्या आप जानते हैं?
वर्तमान समय में भारत में कुल विद्युत का लगभग 22 प्रतिशत भाग जल-विद्युत से प्राप्त होता है।

स्वतंत्रता के पश्चात भारत में तीव्र गति से औद्योगीकरण एवं नगरीकरण का विकास हुआ है। आज बहुराष्ट्रीय कंपनियों ने भी अपने पैर जमा लिये हैं। उद्योगों की वजह से मृदु जल पर दबाव बढ़ रहा है। इन उद्योगों को संचालित करने के लिए ऊर्जा की आवश्यकता होती है, जिसकी अधिकांशतः पूर्ति जल विद्युत द्वारा होती है। शहरों में बढ़ती आबादी एवं शहरी जीवन शैली के कारण जल एवं विद्युत की आवश्यकता में त्वरित वृद्धि हुई है। जहाँ, नलकूप लगाकर जलापूर्ति के लिए अंधाधुंध शोषण हो रहा है और जल के भंडार तीव्र गति से घट रहे हैं।

क्या आप जानते हैं?
केवल कानपुर में 180 चमड़े के कारखाने हैं जो प्रतिदिन 58 लाख लीटर मल-जल गंगा में विसर्जित करती है।

अभी तक हमने जल संकट के मात्रात्मक पहलू पर चर्चा किया है। परन्तु, हमारे देश में कुछ ऐसी भी परिस्थितियाँ हैं; जहाँ जल की पर्याप्त मात्रा होने के बावजूद लोग प्यासे हैं। बता सकते हो ऐसा क्यों? इस दुर्लभता का कारण है, जल की खराब गुणवत्ता, यह किसी भी राज्य या देश के लिए चिंतनीय विषय है। घरेलू एवं औद्योगिक-अवशिष्टों, रसायनों, कीटनाशकों और कृषि में प्रयुक्त होने वाले उर्वरक जल में मिल जाने से जल की गुणवत्ता बुरी तरह प्रभवित हुई है जो मानव के लिए अति नुकसानदेह है। बिहार एवं पश्चिम बंगाल के कुछ भागों में जल के अतिदोहन से संखिया (Arsenic) एवं राजस्थान एवं महाराष्ट्र में इससे फ्लोराइड के संकेन्द्रण में वृद्धि हुई है। सीवरेज एवं जल-मल से भारत के अधिकांश नगरीय क्षेत्र में धरातलीय जल दुष्प्रभावित हुए हैं। भारत की अधिकतर नदियां आज प्रदूषित हो गई हैं। अनेक छोटी नदियाँ तो अत्यंत ही विषैली हो गई हैं।

जल संरक्षण एवं प्रबंधन की अवश्यकता :

आपने अनुभव किया होगा कि जल संसाधन की सीमित आपूर्ति, तेजी से फैलते प्रदूषण एवं समय की मांग को देखते हुए जल संसाधनों का संरक्षण एवं प्रबंधन अपरिहार्य है, जिससे स्वस्थ- जीवन, खाद्यान्न-सुरक्षा, आजीविका और उत्पादक अनुक्रियाओं को सुनिश्चित किया जा सके और नैसर्गिक परिवर्तनों के निम्नीकरण पर विराम लग सके।

जल संसाधन के दुर्लभता या संकट निवारण हेतु सरकार ने 'सितम्बर 1987' में 'राष्ट्रीय जल नीति' को स्वीकृत किया। कालान्तर में कई समस्याओं के उभरने के कारण इसे संशोधित कर 'राष्ट्रीय जल नीति 2002' के रूप में प्रस्तुत किया गया। इसके अंतर्गत सरकार ने जल संरक्षण हेतु निम्न सिद्धांतों को ध्यान में रखकर योजनाओं को निर्मित किया गया है :-

(a) जल की उपलब्धता के बनाये रखना ।

(b) जल को प्रदूषित होने से बचाना ।

(c) प्रदूषित जल को स्वच्छ कर उसका पुनर्चक्रण

इस संदर्भ में अग्रांकित संरक्षण विधियाँ कारगर सिद्ध हो सकती है :

(1) भूमिगत जल की पुर्नपूर्ति : पूर्व राष्ट्रपति अब्दुल कलाम ने 'जल मिशन' संदर्भ देकर भूमि जल पुनर्पूर्ति पर बल दिया था। जिससे खेतों, गाँवों, शहरों, उद्योगों को पर्याप्त जल मिल सके। इसके लिए वृक्षारोपण, जैविक तथा कम्पोस्ट खाद के प्रयोग, वेटलैंड्स (Wetlands) का संरक्षण, वर्षा जल के संचयन एवं मल-जल शोधन पुनःचक्रण जैसे क्रियाकलाप उपयोगी हो सकते हैं।

> **क्या आप जानते हैं?**
> शहरीकरण, भवन-निर्माण, रेलमार्ग तथा सड़क-पक्कीकरण भूमि जल-पुर्नपूर्ति के बाधक तत्व हैं।

(2) जल संभर प्रबंधन (Watershed Management) : जल प्रवाह या जल जमाव का उपयोग कर उद्यान, कृषि वानिकी, जल कृषि एवं कृषि उत्पादन को बढ़ाया जा सकता है। इससे पेय जलापूर्ति भी की जा सकती है। इस प्रबंधन को छोटे इकाईयों पर लागू करने की आवश्यकता है।

(3) तकनीकी विकास : तकनीकी विकास से तात्पर्य है ऐसे उपक्रम जिसमें जल का कम से कम उपयोग कर अधिकाधिक लाभ लिया जा सके। जैसे-ड्रिप सिंचाई, लिफ्ट सिंचाई, सूक्ष्म फुहारों (Micro Sprinkler) से सिंचाई, सीढ़ीनुमा खेती इत्यादि।

वर्षा जल संग्रहण एवं उनका पुनःचक्रण :

> **क्या आप जानते हैं?**
> भूमिगत जल का 22% भाग का संचय वर्षा-जल का भूमि में प्रवेश करने से होता है।

आप जान चुके हैं कि जल दुर्लभता एवं उनका निम्नीकरण वर्तमान समय की एक प्रमुख समस्या बन गयी है। बहुउद्देशीय परियोजनाओं के विफल होने तथा इसके विवादास्पद होने के कारण वर्षा जल-संग्रहण एक लोकप्रिय जल संरक्षण का तरीका हो सकता है। प्राचीन भारत में उत्कृष्ट जलीय निर्माण एवं जल-संग्रहण ढाँचे पाये जाते थे। तत्कालीन भारतीयों को वर्षा पद्धति एवं मृदा गुणों का गहरा ज्ञान था। उन्होंने स्थानीय पारि-परिस्थितियों में वर्षा-जल, भौमजल, नदी-जल, बाढ़-जल के उपयोग के अनेक तरीके विकसित किये थे। पहाड़ी क्षेत्रों में 'गुल' अथवा कुल (प० हिमालय) जैसी वाहिकाएँ, नदी की धारा का रास्ता बदलकर खेतों में सिंचाई के लिए बनाई है। पश्चिम भारत, खासकर राजस्थान, में पेयजल हेतु वर्षा-जल का संग्रहण छत पर करते थे। पश्चिम बंगाल में बाढ़ के मैदान में सिंचाई के लिए बाढ़ जल वाहिकाएँ बनाने का चलन था। शुष्क एवं अर्द्धशुष्क क्षेत्रों में वर्षा-जल को एकत्रित करने के लिए गड्ढों का निर्माण किया जाता था, जिससे मृदा सिंचित कर खेती की जा सके। उसे राजस्थान के जैसलमेर में 'खादीन' तथा अन्य क्षेत्रों में 'जोहड़' के नाम से पुकारा जाता है। राजस्थान के बीकानेर फलोदी और बाड़मेर जैसे शुष्क क्षेत्रों में पेय-जल का संचय भूमिगत टैंक में किया जाता है। जिसे 'टाँका' कहा जाता है। यह प्रायः आँगन में हुआ करता है जिसमें छत पर संग्रहित जल को पाइप के द्वारा जोड़ दिया जाता है। इस कार्य में राजस्थान की N.G.O. (Non-Governmental Organisation) 'तरूण भारत संघ' पिछले कई वर्षों से कार्य कर रही है। मेघालय के शिलांग में छत वर्षा जल संग्रहण आज भी परम्परागत रूप में प्रचलित है।

> **क्या आप जानते हैं?**
> मेघालय स्थित चेरापूँजी एवं मॉसिनराम में विश्व की सर्वाधिक वर्षा होती है। जहाँ पेय जलसंकट का निवारण लगभग (25%) छत जल संग्रहण से होता है।

चित्र-1 (घ) : (अ) हैंडपंप के माध्यम से पुनर्भरण

चित्र-1 (घ) : (ब) बेकार पड़े कुएँ के माध्यम से पुनर्भरण (छत वर्षाजल संग्रहण)

प० राजस्थान में इंदिरा गाँधी नहर के विकास से इस क्षेत्र को बारहमासी पेयजल उपलब्ध होने के कारण से यहाँ वर्षाजल संग्रहण की उपेक्षा हो रही है, जो खेद जनक है। परन्तु, कुछ घरों में आज भी टाँका उपलब्ध है।

चित्र-3.5-वर्षाजल संग्रहण की पारंपरिक विधि

कर्नाटक के मैसूर जिले में स्थित गंडाधूर गाँव में छत जल संग्रहण की व्यवस्था 200 घरों में है जो जल संरक्षण की दिशा में एक मिसाल है। इनके ढाँचों की जानकारी चित्र 3.4 से स्पष्ट है। वर्तमान समय में महाराष्ट्र, म०प्र०, राजस्थान एवं गुजरात सहित कई राज्यों में वर्षा जल संरक्षण एवं पुनः चक्रण किया जा रहा है।

सोन परियोजना-एक अध्ययन :

स्वतंत्रोपरांत भारत में आर्थिक, सामाजिक, व्यापारिक सहित समग्र विकास के उद्देश्य से जल संसाधन के उपयोग हेतु योजनायें तैयार की गई। नदी-घाटी जल के बहुआयामी उपयोग के कारण इस परियोजना को बहुउद्देशीय परियोजना की भी संज्ञा दी गई, जिसपर पूर्व में चर्चा की गई

है। बिहार में भी इन उद्देश्यों को ध्यान में रखकर कई परियोजनाएँ बनायी गई हैं, जिनमें तीन प्रमुख हैं– 1. सोन परियोजना 2. गंडक परियोजना, 3 कोसी परियोजना।

सोन नदी-घाटी परियोजना बिहार की सबसे प्राचीन परियोजना के साथ-साथ यहाँ की पहली परियोजना है। ब्रिटिश सरकार ने सिंचित भूमि में वृद्धि कर अधिकाधिक फसल उत्पादन की दृष्टि से इस परियोजना का विकास 1874 ई० में किया था। इसमें डेहरी के समीप पूरब एवं पश्चिम दिशाओं में नहरें निकाली गयी हैं। इसकी कुल लंबाई 130 कि०मी० है। पूरब की नहर से पटना, गया, तथा औरंगाबाद जिले की लगभग 3 लाख हेक्टेयर भूमि सिंचित होती है। इस नहर की पश्चिमी शाखा से तीन उपशाखाओं का निर्माण हुआ है। पहली शाखा भोजपुर तथा दूसरी शाखा बक्सर जिले को सिंचित करती है। तीसरी शाखा का प्रभाव चौसा क्षेत्र में है। इस प्रकार ये त्रिशाखाएँ रोहतास, बक्सर एवं भोजपुर तीन जिलों को प्रभावित करती हैं। सुविकसित रूप से यह नहर तीन लाख हेक्टेयर भूमि को सिंचित करती है।

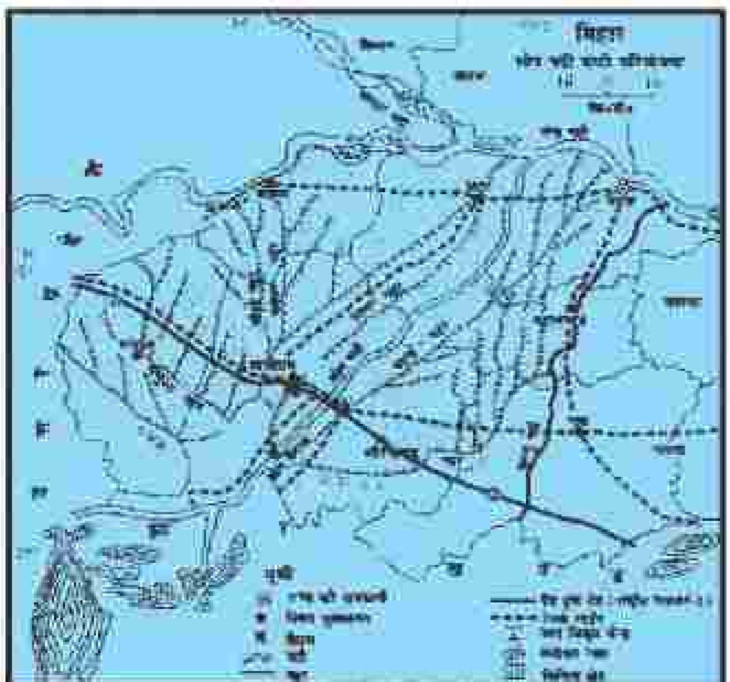

1968 ई० में इस योजना के डेहरी से 10 किमी० की दूरी पर स्थित इन्द्रपुरी नामक स्थान पर बाँध लगाकर बहुउद्देशीय परियोजना का रूप देने का प्रयास किया गया। इससे पुराने नहरों, जल का बैराज से पुर्नपूर्ति, नहरी विस्तारीकरण एवं सुदृढ़ीकरण हुआ है। यही वजह है कि सोन का यह सूखाग्रस्त प्रदेश आज बिहार का 'चावल का कटोरा' (Rice bowl of Bihar) के नाम से विभूषित हो रहा है।

इस परियोजना के अंतर्गत जल-विद्युत उत्पादन हेतु शक्ति-गृह भी स्थापित हुए हैं। पश्चिमी नहर पर डेहरी के समीप शक्ति-गृह की स्थापना की गई है। जिससे 6.6 मेगावाट ऊर्जा प्राप्त होती है। इस ऊर्जा का उपयोग डालमियानगर का एक बड़े औद्योगिक-प्रतिष्ठान के रूप में उभर रहा है। इसके अतिरिक्त पूर्वी नहर शाखा पर बारूण नामक स्थल पर भी शक्ति गृह लगाये गये हैं। जहाँ 3.3 मेगावाट विद्युत उत्पादन की जा रही है। इस परियोजना के नहरों का पुनरोद्धार हो रहा है। सोन की सहायक नदी रिहन्द के जल का उपयोग उत्तर प्रदेश सरकार करती है। जिससे सोन को जल की कमी झेलनी पड़ती है। बिहार सरकार उत्तर प्रदेश सरकार से वार्ता के माध्यम से सार्थक समाधान के लिए पहल कर रही है।

बिहार विभाजन के पूर्व 'इन्द्रपुरी जलाशय योजना', 'कदवन जलाशय योजना' के नाम से जानी जाती थी। इस योजना के विकास के लिए भी एक बांध का निर्माण प्रस्तावित है। जिसके निर्माण से सोन परियोजना की सिंचाई को स्थायित्व मिल सकेगा और साथ ही 450 मेगावाट जल विद्युत का भी उत्पादन हो सकेगा। यद्यपि इसके स्रोत तीन राज्यों के अधीन हैं, जिसमें बिहार-झारखंड की समन्वित सहमति बन चुकी है। उत्तर प्रदेश की सहमति अभी भी प्रतिक्षित है। बिहार सरकार के ऊर्जा विभाग ने इस योजना के कार्यान्वयन हेतु राष्ट्रीय जल विद्युत निगम (NHPC) को सशर्त सहमति दे दी है। इसके अंतर्गत NHPC इस बांध का निर्माण जल-विद्युत उत्पादन की दृष्टि से करेगा तथा जल-संसाधन-विभाग जल की आवश्यकतानुसार इस नहर प्रणाली का सिंचाई हेतु संचालन भी कर सकेगा। NHPC संबंधित राज्यों के बीच सहमति एवं केन्द्रीय जल आयोग इस परियोजना को स्वीकृत करने की कार्यवाही कर रही है। इस परियोजना का बिहार जल विद्युत परियोजना (BHPC) द्वारा भी प्रबंधन कार्य प्रगति पर है।

इसके अतिरिक्त भी बिहारान्तर्गत कई नदी घाटी परियोजनाएँ प्रस्तावित हैं; जिसके विकास की आवश्यकता है। जिनमें, दुर्गावती जलाशय परियोजना, ऊपरी किऊल जलाशय परियोजना, बागमती परियोजना तथा बरनार जलाशय परियोजना।

अभ्यास-प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न :

1. वृहद् क्षेत्र में जल की उपस्थिति के कारण ही पृथ्वी को कहते हैं–

(क) उजला ग्रह (ख) नीला ग्रह

(ग) लाल ग्रह (घ) हरा ग्रह

2. कुल जल का कितना प्रतिशत भाग महासागरों में निहित है?

(क) 9.5% (ख) 95.5%

(ग) 96% (घ) 96.6%

3. देश के बाँधों को किसने 'भारत का मंदिर' कहा था?

(क) महात्मा गाँधी (ख) डॉ० राजेन्द्र प्रसाद

(ग) पंडित नेहरू (घ) स्वामी विवेकानन्द

4. प्राणियों के शरीर में कितना प्रतिशत जल की मात्रा निहित होती है?

(क) 55% (ख) 60%

(ग) 65% (घ) 70%

5. बिहार में अति-जल-दोहन से किस तत्त्व का संकेन्द्रण बढ़ा है?

(क) फ्लोराइड (ख) क्लोराइड

(ग) आर्सेनिक (घ) लौह

लघुउत्तरीय प्रश्न :

1. बहुउद्देशीय परियोजना से आप क्या समझते हैं?
2. जल संसाधन के क्या उपयोग हैं? लिखें।
3. अंतर्राज्यीय जल-विवाद के क्या कारण हैं?

4. जल संकट क्या है?

5. भारत की नदियों के प्रदूषण के कारणों का वर्णन कीजिए।

दीर्घउत्तरीय प्रश्न :

1. जल संरक्षण से आप क्या समझते हैं? इसके क्या उपाय हैं?

2. वर्षा जल की मानव जीवन में क्या भूमिका है ? इसके संग्रहण व पुनः चक्रण के विधियों का उल्लेख करें।

परियोजना कार्य

1. अपने विद्यालय के आस-पास बहने वाली नदियों के जल-उपयोग पर एक परियोजना तैयार करें।

क्रियाकलाप :

1. अपने आस-पास के क्षेत्रों में भूमिगत जल स्तर वृद्धि के स्रोतों की तलाश करें एवं उसकी योजना बनायें।

2. अंतर्राज्यीय जल विवाद की सूची तैयार करें।

(ग) वन एवं वन्य प्राणी संसाधन

''यह सत्य है कि 'आग' पर नियंत्रण मानवसभ्यता का महान अविष्कार है, किन्तु इस महान अविष्कार ने विनाश की इति श्री भी किया और इसकी सबसे पहली आहुती वन एवं वन्य प्राणियों की हुई जब पके हुए मांस का रसास्वादन हुआ तो वन्य प्राणियों का आखेट एवं पकाने तथा भूनने के लिए ईंधन ससांधन के रूप में वनों की लकड़ियों का उपयोग एक आम बात हो गयी।''

वन एवं वन्य प्राणी मानव जीवन के प्रमुख हमसफर हैं। वन पृथ्वी के लिए सुरक्षा कवच जैसा है। यह केवल एक संसाधन ही नहीं बल्कि पारिस्थैतिक तंत्र के निर्माण में महत्वपूर्ण घटक हैं। हमारा इनसे अटूट सम्बंध है। वास्तव में वन प्रकृति का एक अमूल्य

क्या आप जानते हैं?

वन उस बड़े भू भाग को कहते हैं जो पेड़ पौधों एवं झाड़ियों द्वारा आच्छादित होते हैं। वे वन जो स्वतः विकसित होते हैं उसे प्राकृतिक वन और जो मानव द्वारा विकसित किए जाते हैं वह मानव निर्मित वन (वानिकी) कहलाते हैं। वन जैव-विविधताओं का आवास होता है।

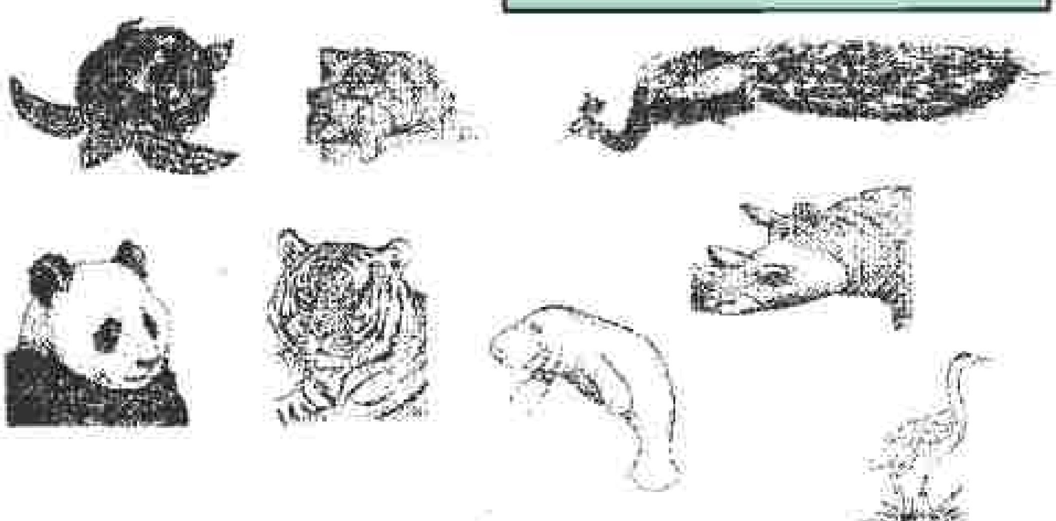

चित्र-1 (ग).1 : जीवों की विविधता-जंगल की शान

उपहार है। सृष्टि के आरम्भ से ही मानव इसके आँचल में पोषित होता रहा है। वन एवं वन्य प्राणी मानव के लिए प्रतिस्थापित होने वाला संसाधन है। यह इस जीव मंडल में सभी जीवों को संतुलित स्थिति में जीने के लिए अथवा संतुलित पारिस्थितिकी तंत्र के निमार्ण में सर्वाधिक योगदान देता है। क्योंकि सभी जीवों के लिए खाद्य ऊर्जा (Food Energy) का प्रारम्भिक स्रोत वनस्पति ही है।

भारत में वन संसाधन एक महत्वपूर्ण संसाधन है। यहाँ के लोग आरम्भ से वन प्रिय रहे हैं, जिसका प्रमाण हमें धार्मिक ग्रंथों तथा लोक कथाओं से मिलता है। किन्तु वर्तमान समय में विकास की दौड़ में हमने अपने अतीत के सभी गौरवशाली परम्पराओं को नकार दिया है। हम वन और वन्य प्राणी के महत्व को नहीं समझ रहे हैं और तेजी से इस संसाधन का विदोहन कर रहे हैं। वस्तुत: हमें वन और वन्य-जीव संसाधनों को संरक्षण देना चाहिए।

वन और वन्य जीव संसाधनों के प्रकार और वितरण :

वन विस्तार के नजरिए से भारत विश्व का दसवाँ देश है, यहाँ करीब 68 करोड़ हेक्टेयर भूमि पर वन का विस्तार है। रूस में 809 करोड़ हेक्टेयर वन क्षेत्र है, जो विश्व में प्रथम है। ब्राजील में 478 करोड़ हेक्टेयर, कनाडा में 310 करोड़ हेक्टेयर, संयुक्त राज्य अमेरिका में 303 करोड़ हेक्टेयर, चीन में 197 करोड़ हेक्टेयर, आस्ट्रेलिया में 164 करोड़ हेक्टेयर, कांगों में 134 करोड़ हेक्टेयर, इंडोनेशिया में 88 करोड़ हेक्टेयर और पेरू में 69 करोड़ हेक्टेयर वन क्षेत्र है।

एफ० ए० ओ० (Food and Agriculture Organisation) की वानिकी रिपोर्ट के अनुसार वर्ष 1948 में विश्व में 4 अरब हेक्टेयर वन क्षेत्र था जो 1963 में घट कर 3.8 अरब हेक्टेयर हो गया और 1990 में 3.4 अरब हेक्टेयर वन क्षेत्र बच गया, किन्तु 2005 में इसमें कुछ सुधार आया और स्थिति लगभग 1948 के समान हो गई अर्थात कुल वन क्षेत्र 3.952 अरब हेक्टेयर हो गया है। यह विश्व के भौगोलिक क्षेत्र का लगभग 30 प्रतिशत है। भारत में 2011 में 21.05 प्रतिशत भौगोलिक क्षेत्र पर वन फैले हुए थे (वन सर्वेक्षण, FSI) के अनुसार 20.55% भौगोलिक क्षेत्र में वन का विस्तार है। आई० आर० एस० पी० 6 संसाधन उपग्रह लीस III (LIS III एक सुदूर संवेदी उपग्रह Remote Sensing Satellite है जिसमें स्कैनर के साथ कैमरे लगे होते हैं) की इमेजरी से भारतीय वन के वास्तविक स्थिति को जानने में बहुत सहायता प्राप्त हुआ है। इसकी

दसवीं रिपोर्ट 2005 के अनुसार देश में कुल 67.71 करोड़ हेक्टेयर वन क्षेत्र है जोकि देश के कुल भौगोलिक क्षेत्र का 20.60 प्रतिशत है।

भारत में वनों का विस्तार एक समान नहीं है, यहाँ का पूर्वोत्तर राज्य एवं मध्यप्रदेश वनों की दृष्टि से काफी समृद्ध है, किंतु अंडमान निकोबार द्वीप समूह सबसे आगे है, जहाँ 90.3 प्रतिशत भौगोलिक क्षेत्र में वन विकसित हैं। वृक्षों के घनत्व के आधार पर वनों को पांच वर्गों में रखा जा सकता है।

1. अत्यंत सघन वन (कुल भौगोलिक क्षेत्र में वृक्षों का घनत्व 70 प्रतिशत से अधिक)
2. सघन वन (कुल भौगोलिक क्षेत्र में वृक्षों का घनत्व 40–70 प्रतिशत)
3. खुले वन (कुल भौगोलिक क्षेत्र में वृक्षों का घनत्व 10 से 40 प्रतिशत)
4. झाड़ियाँ एवं अन्य वन (कुल भौगोलिक क्षेत्र में वृक्षों का घनत्व 10 प्रतिशत से कम)
5. मैंग्रोव वन (तटीय वन)

1. अत्यंत सघन वन– भारत में इस प्रकार के वन का विस्तार 54.6 लाख हेक्टेयर भूमि पर है जो कुल भौगोलिक क्षेत्र का 1.66 प्रतिशत है, असम और सिक्किम को छोड़कर सभी पूर्वोत्तर राज्य इस वर्ग में आते हैं। इन क्षेत्रों में वनों का घनत्व 75 प्रतिशत से अधिक है।

2. सघन वन– इसके अन्तर्गत 73.60 लाख हेक्टेयर भूमि आते हैं जो कुल भौगोलिक क्षेत्र का 3 प्रतिशत है। हिमाचल प्रदेश, सिक्किम, मध्य प्रदेश, जम्मू-कश्मीर, महाराष्ट्र एवं उत्तराखंड के पहाड़ी क्षेत्रों में इस प्रकार के वनों का विस्तार है। यहाँ वनों का घनत्व 62.99 प्रतिशत है।

3. खुले वन– 2.59 करोड़ हेक्टेयर भूमि पर इस वर्ग के वनों का विस्तार है, यह कुल भौगोलिक क्षेत्र का 7.12 प्रतिशत है कर्नाटक, तामिलनाडु, केरल, आंध्रप्रदेश, उड़ीसा के कुछ जिलों एवं असम के 16 आदिवासी जिलों में इस प्रकार के वनों का विस्तार है। असम के आदिवासी जिलों में वृक्षों क घनत्व 23.89 प्रतिशत है।

4. झाड़ियां एवं अन्य वन राजस्थान का मरुस्थलीय क्षेत्र एवं अर्द्ध शुष्क क्षेत्र में इस प्रकार के वन पाए जाते है। पंजाब, हरियाणा, उत्तरप्रदेश, बिहार एवं पश्चिमी बंगाल के मैदानी भागों में वृक्षों का घनत्व 10 प्रतिशत से भी कम है इसलिए यह क्षेत्र इसी वर्ग में सम्मिलित है। इसके अन्तर्गत 2.459 करोड़ हेक्टेयर भूमि आते हैं, जो कुछ भौगोलिक क्षेत्र का 8.68 प्रतिशत है।

5. मैंग्रोव (तटीय वन)- विश्व के तटीय वन क्षेत्र (मैंग्रोव्स) का मात्र 5 प्रतिशत (4,500 कि०मी० क्षेत्र ही भारत में है, जो समुद्र तटीय राज्यों मे फैला है, जिसमें आधा क्षेत्र पश्चिमी बंगाल के सुंदरवन में है, इसके बाद गुजरात और अंडमान-निकोबार द्वीप समूह आते हैं, कुल मिलाकर 12 राज्यों केन्द्रप्रशासित प्रदेशों में मैंग्रोव्स वन हैं, जिन में आंध्रप्रदेश, गुजरात, कर्नाटक, महाराष्ट्र, ओडिशा, तमिलनाडु, पश्चिमी बंगाल, अंडमान-निकोबार, पुदुचेरी, केरल एवं दमन-दीव शामिल हैं।

देश के कुल भौगोलिक क्षेत्र का मात्र 0.14 प्रतिशत क्षेत्र (4.4 लाख हेक्टेयर) में ही मैंग्रोव है। पश्चिमी बंगाल में सबसे बड़ा क्षेत्र अर्थात 47.6 प्रतिशत क्षेत्र इसके अन्तर्गत है जबकि गुजरात दूसरे स्थान पर है, यहाँ 21 प्रतिशत क्षेत्र में मैंग्रोव्स का विस्तार है और तीसरे स्थान पर अंडमान निकोबार द्वीप समूह है, जहाँ मात्र 14 प्रतिशत क्षेत्र में मैंग्रोव्स फैला है।

क्या आप जानते हैं ?

- देश के कुल वनाच्छादित क्षेत्र का 25.11 प्रतिशत वन क्षेत्र पूर्वोत्तर के सात राज्यों में हैं।
- भारत में 188 आदिवासी जिलों में कुल वन क्षेत्र का 60.11 प्रतिशत पाया जाता है।
- देश में वनाच्छादित क्षेत्र के मामले में मध्यप्रदेश का प्रथम स्थान है, जहाँ देश के कुल वनाच्छादित क्षेत्र का 11.22 प्रतिशत वन है । दूसरे स्थान पर अरूणाचल प्रदेश (10.01 प्रतिशत), तीसरे स्थान पर छत्तीसगढ़ (8.25 प्रतिशत), चौथे स्थान पर उड़ीसा (7.18 प्रतिशत) है जबकि महाराष्ट्र का स्थान पाँचवाँ है जहाँ (7.01) प्रतिशत) वन क्षेत्र है ।
- संसार में मात्र 3.च बिलियन हेक्टेयर में वन रह गया है, लगभग 800 वर्ष पूर्व से 6 बिलियन हेक्टेयर वनों की कटाई हो चुकी है।
- हाल के वर्षो में वन विकास में भारत चीन के बाद दूसरे स्थान पर है।

बिहार विभाजन के बाद वन विस्तार में बिहार राज्य दैनीय स्थिति में आ गया हैं, क्योंकि वर्तमान बिहार में अधिकतर भूमि कृषि योग्य हैं। मात्र 6764.14 हेक्टेयर में वन क्षेत्र बच गया है, यह भौगोलिक क्षेत्र का मात्र 7.1 प्रतिशत है। बिहार के 38 जिलों में से 17 जिलों से वन क्षेत्र

समाप्त हो गया है। पश्चिमी चम्पारण, मुंगेर, बांका, जमुई, नवादा, नालन्दा, गया, रोहतास, कैमूर, और औरंगाबाद जिलों के वनों की स्थिति कुछ बेहतर है, जिसका कुल क्षेत्रफल 3700 वर्ग किलोमीटर है। शेष में अवक्रमित वन क्षेत्र हैं, वन के नाम पर केवल झाड़ झुरमुट बच गए हैं।

प्रशासकीय दृष्टि से वनों को निम्नांकित वर्गों में रखा गया है :

(क) आरक्षित वन (Reserved Forest)- जो वन जलवायु की दृष्टि से महत्वपूर्ण होते हैं उनहें आरक्षित वन कहते हैं। इसमें ना तो लकड़ियां ही काटी जा सकती हैं और ना ही पशुचारण होता है। बाढ़ नियंत्रण, भूमि संरक्षण, मरूस्थल प्रसार को रोकने तथा जलवायु नियमित रहने हेतु इसकी आवश्यकता होती है। वन एवं वन्य जीवों के संरक्षण के लिए आरक्षित वनों को सबसे अधिक मूल्यवान माना जाता है। देश में आधे से अधिक वन क्षेत्र (54प्रतिशत) आरक्षित वन घोषित किए गऐ हैं।

(ख) रक्षित वन (Protected Forest)- इस वन क्षेत्र में विशेष नियमों के अधिन पशुओं को चराने और सीमित रूप में लकड़ी काटने की सुविधा दी जाती है। वनों के अत्यधिक नष्ट होने से बचाने के लिए इसकी सुरक्षा की जाती हैं। वन विभाग के अनुसार कुल वन क्षेत्र का लगभग एक तिहाई हिस्सा (29 प्रतिशत) रक्षित वन है।

(ग) अवर्गीकृत वन (Unclassified Forest)- शेष सभी प्रकार के वन और बंजर भूमि जो सरकार, व्यक्तियों, समुदायों के स्वामित्व में होते हैं, स्वतंत्र एवं अवर्गीकृत वन के अन्तर्गत रखा गया है। इस प्रकार के वनों में लकड़ी काटने और पशुओं को चराने पर सरकार की ओर से कोई प्रतिबंध नहीं है। सरकार इसके लिए शुल्क लेती है। कुल वन क्षेत्र का 17 प्रतिशत अवर्गीकृत वन है।

आरक्षित एवं रक्षित वन का सबसे अधिक विस्तार मध्यप्रदेश में है। जहाँ कुल वन क्षेत्र का 75 प्रतिशत है। इसके अतिरिक्त जम्मू कश्मीर, आंध्रप्रदेश, उत्तराखण्ड, केरल, तमिलनाडु, पश्चिम बंगाल और महाराष्ट्र में भी कुल वनों का एक बड़ा अनुपात आरक्षित वनों का है, जबकि बिहार, हरियाणा, पंजाब, हिमाचल प्रदेश, ओडिशा और राजस्थान में कुल वनों में रक्षित वनों का एक बड़ा अनुपात रक्षित है। पूर्वोत्तर के सभी राज्यों में और गुजरात में अधिकतर वन क्षेत्र अवर्गीकृत हैं और स्थानीय समुदायों के प्रबंधन में हैं।

वन सम्पदा तथा वन्य जीवों का ह्रास एवं संरक्षण :

वन सम्पदाओं के ह्रास उपनिवेश काल से ही शुरू हो गया था क्योंकि अंग्रेजों ने प्रशासनिक एवं व्यापारिक उद्देश्य से रेल मार्गों एवं सड़कों का विकास किया जिसके कारण वनों का विदोहन होने लगा था, लेकिन आजादी के बाद से वन एवं वन्य जीवों पर लगातार आक्रमण होने लगा। दरअसल विकास के नाम पर वनों का विनाश होना शुरू हुआ। बीसवीं सदी के मध्य तक 24 प्रतिशत क्षेत्र पर वन विस्तार था, जो इक्कीसवीं सदी के आरम्भ में ही संकुचित होकर 19 प्रतिशत क्षेत्र में रह गया है। इसका मुख्य कारण मानवीय हस्तक्षेप, पालतू पशुओं के द्वारा अनियंत्रित चारण एवं विविध तरीकों से वन सम्पदा का दोहन है। भारतीय वन सर्वेक्षण की अद्यतन रिपोर्ट के अनुसार भारत में वनों की उत्पादकता 0.5 घन मीटर प्रतिवर्ष है, जबकि विस्तार की दृष्टि से यह 2.1 घन मीटर है।

भारत में वनों के ह्रास का एक बड़ा कारण कृषिगत भूमि का फैलाव है। एक सर्वेक्षण के अनुसार 1951 और 1980 के बीच लगभग 26,200 वर्ग किलोमीटर वन क्षेत्र कृषि में परिवर्तित हो गया। विशेष रूप से पूर्वोत्तर और मध्य भारत में जनजातीय क्षेत्र में स्थानान्तरी (झूम) खेती अथवा 'स्लैश और बर्न' खेती के चलते वनों का ह्रास हुआ है।

बड़ी विकास योजनाओं से भी वनों को बहुत नुकसान हुआ है। 1952 ई० से नदी घाटी परियोजनाओं के कारण 5000 वर्ग किमी० से अधिक वन क्षेत्रों को नष्ट करना पड़ा। इस प्रकार अभी भी कई परियोजनाएँ चल रही हैं, जिससे वनों के विनाश का क्रम जारी है। तेजी से खनन कार्य के कारण भी वनों का क्षरण होता रहा है। पश्चिमी बंगाल मे टाईगर रिजर्व डोलोमाई के खनन के कारण भारी खतरे में है। इस खनन से कई प्रजातियों के प्राकृतिक आवासों को नुकसान हुआ है।

वनों एवं वन्य जीवों के विनाश में पशुचारण और ईंधन के लिए लकड़ियों के उपयोग की भी काफी भूमिका रही है। रेल-मार्ग, सड़क मार्ग निर्माण, औद्योगिक विकास एवं नगरीकरण ने भी वन विस्तार को बड़े पैमाने पर तहस नहस किया है।

कुछ पर्यावरण विशेषज्ञों के अनुसार भारत के कई क्षेत्रों में संवर्द्धन (Enrichment) 'वृक्षारोपण' अर्थात् वाणिज्य की दृष्टि से एकल वृक्ष रोपण करने से पेड़ों की दूसरी प्रजातियाँ खत्म

हो गई। उदाहरण के तौर पर सागवान के एकल रोपण से दक्षिण भारत में अन्य प्राकृतिक वन बर्बाद हो गए और हिमालय में चीड़ पाईन के रोपन से हिमालय ओक और रोडोडेंड्रोन (Rhododendron) वनों का नुकसान हुआ।

हिमालय यव (Yew) संकट में-

हिमालय यव (चीड़ के प्रकार का सदाबहार वृक्ष) एक औषधीय पौधा है जो हिमाचल प्रदेश और अरूणाचल प्रदेश के कई क्षेत्रों में पाया जाता है। पेड़ों की छाल, पत्तियाँ, टहनियों और जड़ों से टैक्सोल (Taxol) नामक रसायन निकाला जाता है तथा इसे कैंसर रोगों के उपचार के लिए प्रयोग किया जाता है। इस से बनाई गई दवाई विश्व में सबसे अधिक बिकने वाली कैंसर औषधि है। इसके अत्यधिक निष्कासन से इस वनस्पति जाति के लिए अस्तित्व का संकट पैदा हो गया है। पिछले एक दशक में हिमाचल प्रदेश और अरूणाचल प्रदेश में विभिन्न क्षेत्रों में यव के हजारों पेड़ विलुप्त हो चुके हैं।

क्या आप जानते हैं?

हमारे देश में लगभग 81,000 वन्य प्राणी उपजातियाँ और लगभग 47,000 वनस्पति उपजातियाँ पायी जाती हैं। वनस्पति उपजातियों में से लगभग 15,000 भारतीय मूल की हैं।

जैसे-जैसे वनों का दामन सिकुड़ा, वैसे-वैसे वन जीवों का आवास भी तंग होता गया। भोजन सुरक्षा, एवं आनन्द के लिए वन्य जीवों का शिकार वनीय जीवों के विनाश का एक बड़ा कारण है। आज स्थिति यह है कि बहुत से वन्य प्राणी लुप्त हो गए हैं या लुप्त प्राय हैं। भारत में चीता और गिद्ध इसके उदाहरण हैं। यदि हम गौर से अवलोकन करें तो पता चलेगा कि पर्यावरण के प्रति हमारी संवेदनहीनता के ही कारण कई दशकों से वन एवं जीवों पर विनाशकारी दबाव बढ़ा है।

क्रिया कलाप :

अपने गाँव एवं मुहल्ले में मानव और प्रकृति प्रेम सम्बंधी प्रचलित किस्से, कहानियाँ एवं गीत का वर्णन करें।

आज भारत में 744 प्रजातियाँ विलुप्त हो चुकी हैं और 22,531 प्रजातियाँ विलुप्त होने के कगार पर है। तालिका 1.1 से लुप्त हो चुके प्रजाति और लुप्त होने वाले प्रजातियों का विवरण मिलता है।

तालिका -1.1

भारत में विलुप्त हो रहे जीव जंतुओं की संख्या

प्रजाति		विलुप्त हो चुकी	विलुप्त होने का खतरा
1.	पेड़-पौधे	384	19079
2.	मछलियाँ	21	343
3.	उभयचर	02	50
4.	सरीसृप	21	170
5.	बिना रीढ़ वाले जन्तु	98	1355
6.	पक्षी	133	1037
7.	स्तनपाई	83	497
		कुल 742	2,2531

विलुप्त होने के खतरे से घिरे कुछ प्रमुख प्राणी हैं, कृष्णा सार (Black Buck), चीतल (Chinkara), भेड़िया (Wolf), अनूप मृग (Swamp deer), नील गाय (Nilgai), भारतीय कुरंग (Indian Gazelle), बारहसिंगा (Antelope), चीता (Panther), गैंडा (Rhinos) गिर सिंह (Gir lion), मगर (Corocodile), हसावर (Flamingo), हवासिल (Pelican), सारंग (Bustard), श्वेत सारस (White crane), धूसर बगुला (Gray heron), पर्वतीय बटेर (Mountain quil), मोर (Peacock), हरा सागर कछुआ (Green Sea Turtle), कछुआ (Tortoise), डियूगाँग (Dug-ong), लाल पाण्डा (Red Panda) आदि।

वन्य जीवों के अधिवास पर प्रतिकूल मानवीय प्रभाव के तीन प्रमुख कारण हैं, जो निम्नांकित हैं :

(i) प्राकृतिक आवासों का अतिक्रमण वन्य जीवों के प्राकृतिक आवास जंगल, मैदानी क्षेत्र, नदियाँ, तालाब, वेट लैंड, पहाड़ी एवं तराई आदि हैं। जन संख्या में हो रही अनियंत्रित वृद्धि, औद्योगिक विकास, शहरीकरण, बड़े बाँध या अन्य परियोजनाएं इनके आवास की अतिक्रमण कर रही है। यातायात की सुविधाओं में वृद्धि के कारण भी वन्य जीवों के प्राकृतिक आवासों का अतिक्रमण हुआ है। प्राकृतिक निवास स्थान के छिन जाने के दबाव से वन्य जीवों की सामान्य वृद्धि तथा प्रजनन क्षमता में कमी आ गई है।

> **क्या आप जानते हैं?**
> निम्न तलीय जल जमाव वाले क्षेत्र को वेट लैंड कहा जाता है। स्थानीय तौर पर इसे, चौर, मागर मोंन, टाल भी कहा जाता है।

(ii) प्रदूषण जनित समस्या- बढ़ते प्रदूषणों ने कई समस्याओं को जन्म दिया है। इन में वन्य जीवों की संख्या में कमी के प्रमुख कारक पराबैंगनी किरणें, अम्लवर्षा और हरित गृहप्रभाव हैं। इसके अतिरिक्त वायु, जल एवं मृदा प्रदूषण के कारण वन एवं वन्य जीवों का जीवन चक्र गंभीर रूप से प्रभावित हो रहा है। जीवन चक्र को पूर्ण किए बिना नए पौधे या जंतु का जन्म ही नहीं हो सकता है। फलत: वास स्थान उपलब्ध रहने के बावजूद वन्य जीव धीरे-धीरे विलुप्त हो रहे हैं।

(iii) आर्थिक लाभ- रंग-बिरंगी तितलियों से लेकर मेढ़कों, पक्षियों और जंगली जानवरों, कछुआ, तोता एवं अन्य स्थानीय परिंदों का अवैध शिकार कर इन्हें बेचा जाता है। इसकी राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर काला बाजारी होती है। चीन ऐसे वन्य जीवों के काला बाजारी का मुख्य केन्द्र है।

आर्थिक लाभ के लिए योजनाबद्ध तरीके से खास प्रजातियों के पेड़-पौधे एवं जीव-जन्तुओं को स्थानीय, क्षेत्रीय या राज्यस्तर पर दोहित किये जाने से कई प्रजातियाँ संकट ग्रस्त हो गई हैं।

निरंतर शिकार भी वन्य जीवों के लिए एक बड़ी चुनौती है।

वर्तमान में यह एक वैश्विक मुद्दा के रूप में एक बड़े चिन्तन का विषय बना है। इसे अब सामाजिक, सांस्कृतिक, नैतिक, आर्थिक तथा धार्मिक स्तर पर स्वीकारा गया है। यही नहीं

साहित्यविदों, कवियों एवं कलाकारों में इसकी चेतना के लिए अपनी रचनाओं में मुख्य रूप से स्थान दिया है। भारत में तो आदि काल से वन एवं वन्य प्राणियों के महत्व को स्वीकारा गया है।

प्रत्येक धार्मिक कृत्यों में तथा विभिन्न पौराणिक एवं कर्मकाण्ड साहित्य में वनों और प्राणियों को महत्व दिया गया है। ग्रामीण लोग कई धार्मिक अनुष्ठानों में 100 से अधिक पौधों की प्रजातियों का प्रयोग करते हैं और इन पौधों को अपने खेतों में भी उगाते हैं। भारत के शासकों ने भी प्रकृति संरक्षण पर बल दिया है ईसा पूर्व तीसरी शताब्दी में सम्राट अशोक ने इस ओर ध्यान आकृष्ट किया था शायद यह विश्व का पहला ऐतिहासिक साक्ष्य है कि अशोक ने प्रकृति के महत्व को स्वीकारते हुए वन्य जीव-जन्तुओं के शिकार पर अंकुश और सम्बंधित संरक्षण के नियम को अपने शिलालेखों में अंकित कराया। मध्यकालीन भारत में मुगल साम्राज्य के संस्थापक जहीर उद्दीन बाबर और जहांगीर के आलेखों में भी प्रकृति संरक्षण वाद का उल्लेख मिलता है। मुगल चित्रकला की कृतियों में भी वन एवं वन्य प्राणियों से प्रेम का सम्बोधन होता है।

क्या आप अमृता देवी वन्य संरक्षण के विषय में जानते हैं ?

अमृता देवी राजस्थान के बिशनोई गाँव (जोधपुर जिला) की रहनेवाली थी। उसने 1731 ई० में राजा के आदेश को दरकिनार कर वनों से लकड़ी काटनेवालों का विरोध किया था। राजा के लिए नवीन महल निर्माण हेतु लकड़ी काटा जाना था। अमृता देवी के साथ गाँव वालों ने भी राजा के आदमियों का विरोध किया। महाराजा को जब इसकी जानकारी मिली तो उन्हें काफी पश्चाताप हुआ और अपने राज्य में वनों की कटाई पर रोक लगा दी।

वर्तमान समय में वन एवं वन्य जीवों के संरक्षण के लिए राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर कई कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं। भारत की संकटापन्न पादप प्रजातियों की सूची बनाने का काम सर्वप्रथम 1970 में बॉटेनिकल सर्वे ऑफ इंडिया (BSI) तथा वन अनुसंधान संस्थान (FRI) देहरादून द्वारा संयुक्त रूप से किया गया। इन्होंने जो सूची बनाई उसे 'रेड डेटा बुक' (Red Data book) का नाम दिया गया। इसी क्रम में असाधारण पौधों (Rare Plants) के लिए 'ग्रीन बुक' (GreenBook) तैयार किया गया।

रेड डेटा बुक क्या है ?

इसमें सामान्य प्रजातियों के विलुप्त होने के खतरे से अवगत किया जाता है।

संकटग्रस्त प्रजातियाँ सर्वमान्य रूप से चिह्नित होते हैं।

विश्व स्तर पर, संकटग्रस्त प्रजातियों की एक तुलनात्मक स्थिति के प्रति चेतावनी देती है।

स्थानीय स्तर पर संकटग्रस्त प्रजातियों की पहचान एवं उनके संरक्षण से संबंधित कार्यक्रम को प्रोत्साहन देना।

अंतर्राष्ट्रीय प्राकृतिक संरक्षण एवं प्राकृतिक संसाधन संरक्षण संघ (International Union for the Conservation of Nature and Natural Resources) ने संकटग्रस्त प्रजातियों के संरक्षण एवं संवर्धन की दिशा में कार्य कर रही एक महत्वपूर्ण अन्तर्राष्ट्रीय संस्था है।

International union for the Conservation of Nature and Natural Resources (IUCN) को अब विश्व संरक्षण संघ (World Conservation Union) भी कहा जाता है।

इस संस्था ने विभिन्न प्रकार के पौधों और प्राणियों के जातियों को चिह्नित कर निम्नलिखित श्रेणियों में विभाजित किया है :

(क) सामान्य जातियाँ- ये वे जातियाँ हैं जिनकी संख्या जीवित रहने के लिए सामान्य मानी जाती हैं जैसे पशु, साल, चीड़ और कृतक (रोडेंटस) इत्यादि ।

(ख) संकटग्रस्त जातियाँ- ये वे जातियाँ हैं जिनके लुप्त होने का खतरा है। जिन विषम परिस्थितियों के कारण इनकी संख्या कम हुई है, यदि वे जारी रहती हैं तो इन जातियों का जीवित रहना कठिन है। काला हिरण, मगरमच्छ, भारतीय जंगली गधा, गैंडा, पूंछ वाला बंदर, संगाई (मणिपुरी हिरण) इत्यादि इस प्रकार की जातियों के उदाहरण हैं।

(ग) सुभेद्य जातियाँ- इसके अन्तर्गत ऐसी जातियों को रखा गया है, जिनकी संख्या घट रही है। यह वैसी जातियाँ हैं जिनपर ध्यान नहीं दिया गया तो यह संकटग्रस्त जातियों की श्रेणी में आ सकते हैं। नीली भेड़, एशियाई हाथी, गंगा की डॉल्फिन आदि इस प्रकार की जातियों के उदाहरण हैं।

(घ) दुर्लभ जातियाँ- इन जातियों की संख्या बहुत कम या सुभेद्य हैं और यदि इनको प्रभावित करने वाली विषम परिस्थितियाँ नहीं परिवर्तित होती हैं तो यह संकटग्रस्त जातियों की श्रेणी में आ सकती हैं।

(ङ) स्थानिक जातियाँ- प्राकृतिक या भौगोलिक सीमाओं से अलग विशेष क्षेत्रों में पाई जाने वाली जातियाँ, अंडमानी टील (teal) निकोबारी कबूतर, अंडमानी जंगली सुअर और अरूणाचल के मिथुन इसी वर्ग में आते हैं।

(च) लुप्त जातियाँ- ये वे जातियाँ हैं जो इनके रहने के आवासों में खोज करने पर अनुपस्थित पाई गई हैं। ये उपजातियाँ स्थानीय क्षेत्र, प्रदेश, देश, महाद्वीप, या पूरी पृथ्वी से लुप्त हो गई हैं। एशियाई चीता और गुलाबी सर वाली बत्तख एवं डोडो पंछी इसके अच्छी उदाहरण हैं।

संकटग्रस्त वन एवं वन्य जीवों, पर्यावरण तथा प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण के लिए अन्य कई अन्तर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय संस्थान भी कार्यक्रम चला रही हैं। इनमें वर्ल्ड वाइल्ड फंड फॉर नेचर (WWF) विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण हैं।

भारत में वन एवं पर्यावरण मंत्रालय (Ministry of Forests and Environment) द्वारा वन एवं वन्य जीवों के संरक्षण के अनेक कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं।

वन्य जीवों को उनके प्राकृतिक आवास में संरक्षित करने का प्रयास सफल हो रहा है। इसे इन सीटू (In Situ) प्रयास कहते हैं। इसके अन्तर्गत विस्तृत भूखंड को संरक्षित क्षेत्र घोषित किया जाता है। इसी प्रकार इन्हें संकट से बचाने के लिए कृत्रिम आवासीय संरक्षण का विकास किया जाता है, इसे एक्स सीटू (Ex-Situ) कहते हैं। एक्स सीटू के प्रयास से जिन प्रजातियों के विलुप्त होने का खतरा है उनहें संग्रहित किया जाता है।

वन्य प्राणीयों के संरक्षण के लिए संरक्षित क्षेत्रों में (i) राष्ट्रीय उद्यान, (ii) विहार या अभ्यारण्य तथा (iii) जैवमंडल सम्मिलित हैं।

(i) राष्ट्रीय उद्यान (National Part) : ऐसे पार्कों का उद्देश्य वन्य प्राणियों के प्राकृतिक आवास में वृद्धि एवं प्रजनन की परिस्थितियों को तैयार करना है। इस उद्यान में बाहरी हस्तक्षेप वर्जित होता है, जैसे कृषि कार्य, वन उत्पादों को एकत्र करना, पशु चारण तथा निर्माण कार्य। हमारे देश में राष्ट्रीय उद्यान की संख्या 85 है। प्रमुख राष्ट्रीय उद्यान एवं अभ्यारण्य को तालिका सं० 2 में दर्शाया गया है।

चित्र-7

(ii) विहार क्षेत्र या अभ्यारणय (Sanctuary) : यह एक ऐसा सुरक्षित क्षेत्र होता है जहाँ वन्य जीव सुरक्षित ढंग से रहते हैं। यह निजी सम्पत्ति हो सकती है। इस क्षेत्र में कृषि, वन उत्पाद को एकत्र करने, मछली पकड़ने आदि की सीमित छूट होती है। वन्य जीवों के स्वाभाविक जैविक क्रियाएँ, जैसे घोंसला बनाना, जोड़ा बनाना, अंडे या बच्चे सेवना आदि पर बाधा पहुँचाने पर मालिकाना अधिकार को सीमित किया जा सकता है। भारत में इनकी संख्या 448 है। बिहार में बेगूसराय का काँवर झील और दरभंगा का कुशेश्वर इसके लिए चिह्नित किया गया है।

(iii) जैवमण्डल (Biosphere Reserves) : यह वह क्षेत्र है जहाँ प्राथमिकता के आधार पर जैव-विविधता के संरक्षण के कार्यक्रम चलाए जाते हैं। इन क्षेत्रों में जैव विविधता के अनुवांशिकी विविधता के रूप में संरक्षित कार्यक्रम चलाया जाता है। विश्व के 65 देशों में करीब 243 सुरक्षित जैवमंडल क्षेत्र हैं। भारत में इनकी संख्या 18 है।

तालिका संख्या – 2

भारत में राज्यानुसार प्रमुख राष्ट्रीय उद्यान तथा अभ्यारण्यों

राज्य	राष्ट्रीय उद्यान एवं अभ्यारण्य
मध्य प्रदेश	बांधवगढ़ राष्ट्रीय उद्यान (उमरिया) फासिल राष्ट्रीय उद्यान (मण्डला) कान्हा राष्ट्रीय उद्यान (मण्डला और बालाघाट) माधव राष्ट्रीय उद्यान (शिवपुरी) पन्ना राष्ट्रीय उद्यान (पन्ना/छतरपुर) पेंच राष्ट्रीय उद्यान (होशंगाबाद) सतपुड़ा राष्ट्रीय उद्यान (भोपाल) संजय डुबरी राष्ट्रीय उद्यान (सीधी)
कर्नाटक	गाँधी सागर अभयारण्य (मन्दसौर) बान्दीपुर राष्ट्रीय उद्यान भद्रा अभयारण्य (चिकमंगलूर) दण्डेली वन्य जीव अभयारण्य (दक्षिणी कन्नड़) शरावती वन्य जीव अभयारण्य (शिवामोग्गा)
राजस्थान	रणथम्भौर राष्ट्रीय उद्यान (सवाई माधोपुर) घना पक्षी विहार (भरतपुर) दर्रा अभयारण्य (कोटा) सरिस्का वन्य जीव अभयारण्य (अलवर) डेजर्ट अभयारण्य (जैसलमेर, बाड़मेर)
आन्ध्र प्रदेश	कावला वन्य जीव अभयारण्य (आदिलाबाद) किन्नरसानी वन्य जीव अभयारण्य नेलापट्टू पक्षी विहार (नेल्लोर)
केरल	परम्बिकुलम वन्य जीव अभयारण्य (पालघाट) पेरियार राष्ट्रीय उद्यान विनायड वन्य जीव अभ्यारण्य

उत्तराखण्ड	कार्बेट राष्ट्रीय उद्यान (नैनीताल) नन्दा देवी राष्ट्रीय उद्यान (चमोली) केदारनाथ अभयारण्य (चमोली) चीला अभयारण्य (गढ़वाल)
उत्तर प्रदेश	दुधवा राष्ट्रीय उद्यान (लखीमपुर खीरी) चन्द्रप्रभा अभयारण्य (वाराणसी)
असम	काजीरंगा राष्ट्रीय उद्यान (शिवसागर, नौगाँव) मानस वन्य जीव अभयारण्य (ग्वालपाड़ा) सोनाईरूपा वन्य जीव अभयारण्य (दरांग)
झारखण्ड	हजारीबाग वन्य जीव अभयारण्य पलामू वन्य जीव अभयारण्य (पलामू) डाल्मा वन्य जीव अभयारण्य
तमिलनाडु	मुदुमलाई वन्य जीव अभयारण्य अन्नामलाई बाघ अभयारण्य गुन्डी राष्ट्रीय उद्यान (चेन्नई)
महाराष्ट्र	बोरीवली राष्ट्रीय उद्यान (मुम्बई) टेडोबा राष्ट्रीय उद्यान (चन्द्रपुर) ढाकना अभयारण्य (अमरावती)
गुजरात	गिरि राष्ट्रीय उद्यान (जूनागढ़) वल्पाडर राष्ट्रीय उद्यान (भावनगर)
हिमाचल प्रदेश	रोहिला राष्ट्रीय उद्यान (कुल्लू) शिकारी देवी वन्य जीवन अभयारण्य (मण्डी)
पश्चिम बंगाल	जलदापारा वन्य जीव अभयारण्य (जलपाइगुड़ी) सुन्दरवन टाइगर रिजर्व (चौबीस परगना)
अरूणाचल प्रदेश	अरूणाचल प्रदेश वन्य जीवन अभयारण्य (कामेंग) नान्दफा वन्य जीव अभयारण्य (तिरप)
ओडिशा	सिमिलीपाल राष्ट्रीय उद्यान (मयूरभंज) चिल्का अभयारण्य (पुरी)

छत्तीसगढ़	इन्द्रावती राष्ट्रीय उद्यान (बस्तर) कांकेर राष्ट्रीय उद्यान (कांकेर) कुटरू उद्यान (बस्तर) उदयन्ती अभयारण्य (रायपुर) तमोर पिंगला राष्ट्रीय उद्यान (सरगुजा)
जम्मू-कश्मीर	दिनपोंव राष्ट्रीय उद्यान (श्रीनगर)
सिक्किम	कंचनजंगा राष्ट्रीय उद्यान
मिजोरम	डम्पा वन्य जीव अभयारण्य (आइजोल)
नागालैण्ड	इंटंगी वन्य जीव अभयारण्य (कोहिमा)

चित्र

भारत सरकार के पर्यावरण एवं वन मंत्रालय के वार्षिक रिपोर्ट 2004 05 के अनुसार राष्ट्रीय उद्यान, विहार (अभयारण्यों) एवं जैवमंडलों की सूची तालिका-2 में प्रमुख राष्ट्रीय उद्यानों, विहारों एवं जैवमंडल क्षेत्र को दर्शाया गया है ।

प्रजनन केन्द्र : प्रतिकूल परिस्थितियों में जीवों के प्रजनन दर में कमी आती है। ऐसी कई प्रजातियाँ हैं जिनकी प्रजनन दर कम होने के कारण संकटग्रस्त सूची में शामिल हैं। इसलिए जीवों के लिए प्रजनन केन्द्र की सुविधा विकसित होनी चाहिए। हमारे देश में मध्य प्रदेश में पर्यावरण परिवर्तन के कारण घड़ियालों की संख्या में भारी कमी हो गई, इसलिए इनके संरक्षण के लिए मुरैना (मध्य प्रदेश) में एक घड़ियाल प्रजनन केन्द्र स्थापित किया गया है। इसी प्रकार उड़ीसा के नन्दनकानन में उजले बाघ का प्रजनन केन्द्र स्थापित किया गया है।

शिकार पर रोक : वन्य प्राणियों के ह्रास का एक प्रमुख कारण इनका शिकार और इन्हें विभिन्न उद्देश्यों के लिए फंसाना है। इनका आर्थिक महत्त्व होने के कारण इनका दोहन होता है। यद्यपि फंसाना, शिकार करना, व्यापार करना कानूनी रूप से वर्जित है, किन्तु स्थानीय राज्य एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर इनकी काला बजारी एवं तस्करी हो रही है। जिसके कारण वन्य जीव का तेजी से दोहन हो रहा है। इसपर सरकार द्वारा सख्त कानूनी कार्रवाई भी की जा रही है। स्वयं सेवी संस्थाओं को भी आगे लाया जा रहा है और स्थानीय जनता में जागरूकता लाने की भी जरूरत है। बिहार के दरभंगा जिला का कुशेश्वर स्थान अभयारण्य (पक्षी विहार क्षेत्र) एक अच्छा उदाहरण है, जहाँ प्रवासी पक्षियों के शिकार एवं व्यापार पर रोकथाम के लिए स्थानीय नागरिकों के सहयोग से जन-जागरण के कार्यक्रम चलाए गए हैं। जिला प्रशासन के सहयोग से स्थानीय यूनेस्को क्लब द्वारा पक्षियों के शिकार पर प्रतिबंध लगाया गया है, जिसके अच्छे परिणाम प्राप्त हुए हैं। जिला प्रशासन द्वारा इसके लिए वहाँ एक वाच टावर (Watch Tower) का निर्माण कराया गया है।

जैव अपहरण की समस्या (Bio Piracy Problem) : यह आधुनिक अनुवंशिक इंजिनियरिंग एवं जैव तकनीकी का प्रतिफल (output) है। यह केवल वन्य प्राणियों के लिए गम्भीर समस्या नहीं है वरन सम्पूर्ण मानव समाज के लिए एक बड़ी समस्या

> **जैव अपहरण क्या है ?**
> प्रकृतिजनित तथा करोड़ों वर्षों के विकास की क्रिया में स्थापित अनुवांशिक गुणों में हेराफेरी को जैव अपहरण (Bio Piracy) कहते हैं।

बनती जा रही है। विभिन्न प्रकार के जीवों और वनस्पतियों के अनुवांशिक गुणों का पता लगाकर दूसरे जीवों में एवं पौधों में प्रत्यारोपण के द्वारा अन्य प्रकार के जीव एवं पौधा विकसित किया जाता है, इस कार्य के लिए विभिन्न देशों से जैव अपहरण होता है यानी अनुवांशिक गुणों की हेराफेरी की जाती है।

विकासशील देशों की जैव संपदा का विकसित देशों द्वारा अपनायी गयी Bio Piracy के कई उदाहरण देखने में आये हैं। उपयोगी जर्म प्लाज्म (Germ Plasm) की पहचान तथा उसमें आवश्यक परिवर्तन एवं प्रतिस्थापन कर ऐसा सम्भव है। अमेरिका में उगाई जाने वाली धान की एक प्रजाती का जर्म प्लाज्म, भारत के बासमती चावल के जर्म प्लाज्म के समान है।

पश्चिमी अफ्रीका में पाये जाने वाला पेन्डिपलान्ड्रा ब्राजिएनी ब्रैजीन (Pendiplandra brazzeane Brazzein) नाम का पौधा इसी प्रभाव में आ गया है, इस पौधे में पाये जाने वाले एक प्रकार के प्रोटीन की मिठास चीनी से 2000 गुना अधिक होती है। इसमें कैलोरी भी कम होती है अमेरिका द्वारा मिठास उत्पन्न करने वाले जीन की पहचान कर ली गई है। इस जीन को मक्का के पौधे में प्रतिस्थापित कर मकई के पौधा से चीनी से भी अधिक मिठास तथा कम कैलोरी वाला जैविक उत्पाद प्राप्त करने की दिशा में शोध किये जा रहे हैं। आप समझ सकते हैं कि गन्ने से चीनी का उत्पादन तथा निर्यात करने वाले देशों के लिए यह जैव अपहरण एक प्रकार की चुनौती है। इसके लिए अब कई राष्ट्रों द्वारा कठोर कदम उठाए जा रहे हैं। और हॉट स्पॉट (Hot Spot) चिह्नित कर जैव सम्पदा पर पाबंदी लगाई जा रही है।

हॉट स्पाट्स (Hot Spots) : नॉर्मन मायर्स (Normen Mayers) ने 1988 में इन संदृ संरक्षण को प्राथमिकता के आधार पर हॉट स्पाट्स के पहचान पर जोर दिया।

"The hot spots are the richest and the most threatened reservoir of plant and animal life on the earth".

हॉट स्पॉट्स के निर्धारण के लिए मुख्य शर्तें हैं–

(i) देशज प्रजातियों की संख्या का निर्धारण–ऐसी प्रजातियां जो अन्य और कहीं नहीं पायी जाती हैं।

(ii) अधिवास पर अतिक्रमण की सीमा निर्धारित करना।

बाघ परियोजना (Project Tiger) :

वन्य जीवन संरचना में बाघ (टाइगर) एक महत्वपूर्ण जंगली जाति है। 1973 में अधिकारियों ने पाया कि देश में 20वीं शताब्दी के आरंभ में बाघों की संख्या अनुमानित संख्या 5500 से घटकर मात्र 1827 रह गई है। बाघों को मारकर उनको व्यापर के लिए चोरी करना, आवासीय स्थलों का सिकुड़ना, भोजन के लिए आवश्यक जंगली उपजातियों की संख्या कम होना और जनंसख्या में वृद्धि बाघों की घटती संख्या के मुख्य कारण हैं। बाघों के खाल का व्यापार और इनकी हड्डियों का एशियाई देशों में परंपरागत औषधियों में प्रयोग के कारण यह जाति विलुप्त होने के कगार पर पहुँच गई है। चूँकि भारत और नेपाल दुनिया की दो तिहाई बाघों को आवास उपलब्ध कराते हैं, अतः ये देश ही शिकार, चोरी और गैर-कानूनी व्यापार करने वालों के मुख्य निशाने पर हैं।

क्या आप जानते हैं?
कि कैमरून के बोरोरो जनजाति के लोग स्वयं शिकार करने के बदले शेरों द्वारा किए गए शिकार पर धावा बोलते हैं इस से शेरों की संख्या में कमी आती है। इस प्रकार के शिकार को 'क्लेप्टोपैरासाईटिज्म' कहते हैं।

बाघ परियोजना (Project Tiger) विश्व की बेहतरीन वन्य जीव परियोजनाओं में से एक है और इसकी शुरूआत 1973 में हुई। शुरु में इसमें बहुत सफलता प्राप्त हुई क्योंकि बाघों की संख्या बढ़कर 1985 में 4002 और 1989 में 4334 हो गयी। परन्तु 1993 में इसकी संख्या घटकर 3600 तक पहुँच गई भारत में 37,761 वर्ग किमी० पर फैले हुए 27 बाघ रिजर्व हैं। बाघ संरक्षण मात्र एक संकटग्रस्त जाति को बचाने का प्रयास नहीं है, अपितु इसका उद्देश्य बहुत बड़े आकार के जैव जाति को भी बचाना है। उत्तरांचल में कॉरबेट राष्ट्रीय उद्यान, पश्चिम बंगाल में सुन्दरवन राष्ट्रीय उद्यान, मध्य प्रदेश में बांध गढ़ राष्ट्रीय उद्यान, राजस्थान में सारिस्का वन्य जीव पशुविहार, असम में मानस बाघ रिजर्व और केरल में पेरियार बाघ रिजर्व, भारत में बाघ संरक्षण परियोजना के उदाहरण हैं।

समुदाय और वन संरक्षण :

भारत के कुछ क्षेत्रों में स्थानीय समुदाय सरकारी अधिकारियों के साथ मिलकर वन्य जीवों के आवास स्थलों के संरक्षण में जुटे हैं क्योंकि ये वन और वनस्पतियों से दीर्घकाल से इनकी आवश्यकताओं की पूर्ति हो रही है। सरिस्का बाघ रिजर्व में राजस्थान के गाँवों के लोग वन्य जीव संरक्षण अधिनियम के तहत वहां से खनन कार्य बन्द करवाने के लिए संघर्षरत हैं। कई क्षेत्रों में तो लोग स्वयं वन्य जीव आवासों की रक्षा कर रहे हैं। राजस्थान के अलवर जिले में 5 गाँवों के लोगों ने तो 1,200 हेक्टेयर वन भूमि 'भैरोदेव डाकव' विहार चोरी' घोषित कर दी जिसके अपने ही नियम कानून हैं, जो शिकार वर्जित करते हैं तथा बाहरी लोगों की घुसपैठ से यहाँ के वन्य जीवन को बचाते हैं।

आदिवासी लोग अपनी आवश्यकताओं के लिए आस-पास के परिवेश पर निर्भर करते हैं। वह वन जीवों का आखेट, मछली पकड़ना, जंगली फल, कंद, बीज प्राप्त करना एवं सीमित मात्रा में कृषि साधन आदि से ही अपने भोजन की आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं। लेकिन आदिवासी (जनजाति) को अपने क्षेत्र में पाये जाने वाले पेड़-पौधों तथा वन्य जीवों से भावनात्मक एवं आत्मीय लगाव होता है। अपने परिवेश में पाये जाने वाले संसाधनों के संरक्षण के प्रति ये अत्यंत सक्रिय तथा सचेत होते हैं। ये जंगली पौधों के बीज आदि के अंकुरण के मौसम में वन क्षेत्रों में नहीं जाते हैं और अपने पालतू पशुओं को भी जंगल में प्रवेश से रोकते हैं। प्रजनन काल में मादा वन पशुओं का शिकार नहीं करते हैं। वन संसाधनों का उपयोग चक्रीय पद्धति से करते हैं। वन के खास क्षेत्रों को सुरक्षित रख उसमें प्रवेश नहीं करते हैं। समय-समय पर आवश्यकतानुसार वृक्षारोपण तथा उनकी रक्षा करते हैं। इस प्रकार से जनजातीय क्षेत्रों के वन को स्वभाविक संरक्षण प्राप्त हो जाता है।

हिमालय में प्रसिद्ध चिपको आंदोलन कई क्षेत्रों में वन कटाई रोकने में ही सफल नहीं रहा बल्कि यह भी दिखाया की स्थानीय पौधों का प्रयोग करके सामुदायिक वनीकरण अभियान को सफल बनाया जा सकता है। पारंपरिक संरक्षण तरीकों की कृषकों में क्रमशः परिस्थैतिक के अनुरूप कृषि की जागृति आयी है। जैसे टेहरी में किसानों के बीच भूमि बचाओ आंदोलन ने दिखा दिया है कि रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग के बिना भी विविध फसल उत्पादन द्वारा आर्थिक रूप से लाभकारी कृषि संभव है।

चिपको आंदोलन (Chipko Movement) :

उत्तर प्रदेश टेहरी–गढ़वाल पर्वतीय जिले में सुन्दर लाल बहुगुणा के नेतृत्व में अनपढ़ जनजातियों द्वारा 1972 में यह आंदोलन प्रारम्भ हुआ था। इस आन्दोलन में स्थानीय लोग ठेकेदारों की कुल्हाड़ी से हरे-भरे पौधों को काटते देख, उसे बचाने के लिए अपने आगोश में पौधा को घेर कर इसकी रक्षा करते थे। इसे कई देशों में स्वीकारा गया।

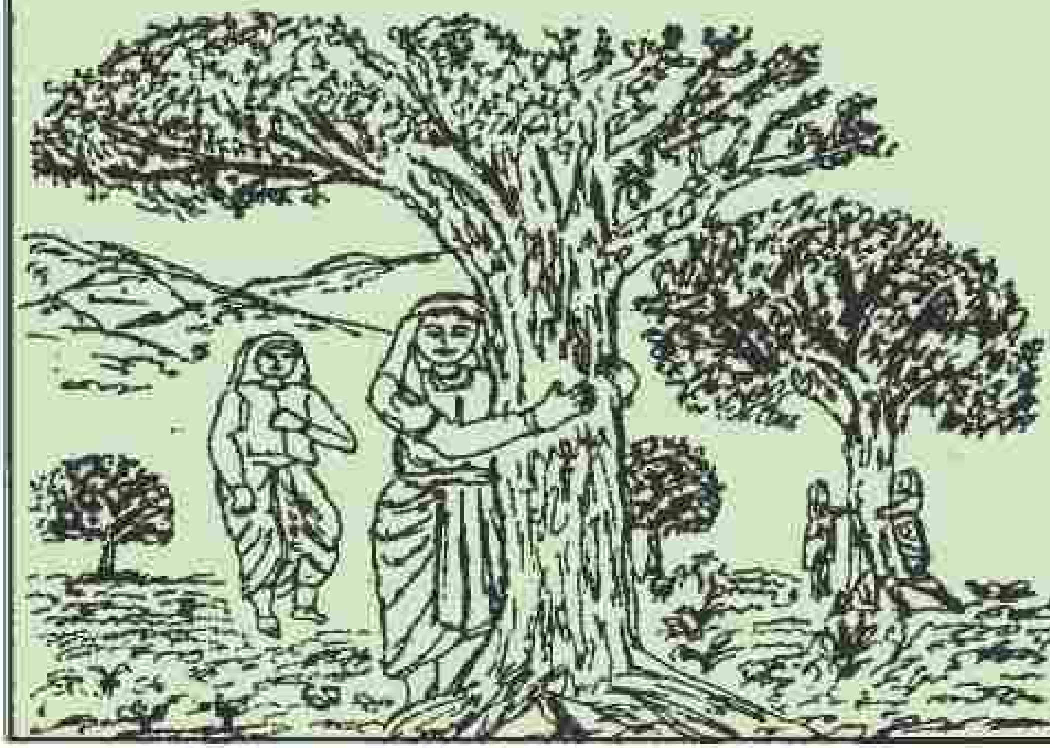

चित्र : चिपको आन्दोलन का एक दृश्य

भारत में संयुक्त वन प्रबंधन क्षरित वनों के प्रबंध और पुनर्निर्माण में स्थानीय समुदायों की भूमिका के महत्व को उजागर करते हैं। औपचारिक रूप में इन कार्यक्रमों की शुरुआत 1988 में हुई जब ओडिशा राज्य में संयुक्त वन प्रबंधन का पहला प्रस्ताव पास किया। वन विभाग के अंतर्गत संयुक्त वन प्रबंध क्षरित वनों को बचाने के लिए कार्य करता है। और इसमें गाँव के स्तर पर संस्थाएँ बनाई जाती हैं जिसमें ग्रामीण और वन विभाग के अधिकारी संयुक्त रूप से कार्य करते हैं।

भारत में जैन एवं बौध धर्म के अनुयायी अहिंसा प्रेमी होते हैं ये धर्म 'अहिंसा परमो धर्म' पर आधारित हैं, जैन समुदाय के बीच सूक्ष्म जीव की भी हत्या वर्जित है। अतः वन एवं वन्य प्राणियों के संरक्षण में इनका काफी योगदान रहता है।

महात्मा बुद्ध ने 487 ई० पू० कहा था–"पेड़ एक विशेष असीमित दयालु और उदारपूर्ण जीवधारी हैं, जो अपने सतत् पोषण के लिए कोई मांग नहीं करता और दानशीलतापूर्वक अपने जीवन की क्रियाओं को भेंट करता है। यह सभी की रक्षा करता है और स्वयं पर कुल्हाड़ी चलाने वाले पर भी छाया प्रदान करता है।

वन्य जीवों के संरक्षण के लिए कानूनी प्रावधान (Legal provision for conservation of wild life) :

वन्य जीवों के संरक्षण के लिए बनाए गए नियमों तथा कानूनी प्रावधानों को दो वर्गों में बाँट सकते हैं, ये हैं–

(अ) अन्तर्राष्ट्रीय नियम (International Laws) :

वन्य जीवों के संरक्षण के लिए दो या दो से अधिक राष्ट्र समूहों के द्वारा (अन्तर्राष्ट्रीय समझौते के अन्तर्गत) नियम तथा कानूनी प्रावधान बनाए गए हैं। प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण पर 1968 में अफ्रीकी कनवेंशन, अन्तर्राष्ट्रीय महत्व के वेटलैंड्स का कनवेंशन (Ramsar Convention) 1971 तथा विश्व प्राकृतिक एवं सांस्कृतिक धरोहर संरक्षण एवं रक्षा अधिनियम 1972 के अंतर्गत बनाए गए अन्तर्राष्ट्रीय नियमों के द्वारा वन्य जीवों के संरक्षण के प्रयास किये जा रहे हैं। इस पर सख्ती से अनुपालन करके वन्य जीवों की रक्षा की जा सकती है।

(ब) राष्ट्रीय कानून (National Laws) :

भारत विश्व के उन देशों में से है जिसमें पर्यावरण तथा वन्य जीवन की रक्षा का प्रावधान संविधान में किया गया है। संविधान की धारा 21 के अन्तर्गत अनुच्छेद 47, 48, तथा 51ए (जी) वन्य जीवों तथा प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण के नियम हैं।

वर्ष 1952 में भारतीय वन्य जीव बोर्ड (Indian wild life Board) के गठन के बाद वन्य जीवों के संरक्षण के प्रति सरकार का रूख गंभीर हुआ है। प्रान्तीय स्तर पर भी वन्य जीव बोर्ड का गठन किया गया है।

वन्य जीव सुरक्षा एक्ट 1972, नियमावली 1973 एवं संशोधित एक्ट 1991 के अंतर्गत पक्षियों तथा जानवरों के शिकार पर प्रतिबंध लगाया गया है।

वनों के संरक्षण के लिए बनाए गए वन संरक्षण एक्ट 1980 एवं नियमावली 1981 के भी कानूनी प्रावधान बड़े प्रभावशाली हैं। जैव विविधता अधिनियम 2002 के अन्तर्गत जैव विविधता के संरक्षण के लिए स्थानीय/प्रखण्ड/जिला और राज्य स्तर पर कमिटियां गठित करने का प्रावधान किया गया है। वन्य जीवों के संरक्षण को ही ध्यान में रख कर प्रत्येक राज्य से कहा गया है कि वे राज्य स्तरीय जानवर और पंक्षी की घोषणा करें। राष्ट्रीय स्तर पर बाघ राष्ट्रीय जानवर और मयूर राष्ट्रीय पंक्षी घोषित किया गया है।

वन्यजीव एवं जैव विविधता की उपयोगिता :

प्राकृतिक अधिवासीय वातावरण में विकसित होने वाले पौधों और जंतुओं को वन्य जीव (Wild life) कहते हैं। इस प्रकार 'पादप' (Flora) और 'जंतु' (Fauna) वन्य जीव के दो भाग हैं और ये जैवमंडल के अभिन्न अंग हैं। यह हमारी धरा पर अमूल्य धरोहर है। वन्य जीव सदियों से हमारे सांस्कृतिक एवं आर्थिक क्षेत्र में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इनमें हमें भोजन, वस्त्र के लिए रेशे, खालें, आवास आदि सामग्री एवं अन्य उत्पादन प्राप्त होते हैं। इनकी चहक और महक हमारे जीवन में स्फूर्ति प्रदान करते हैं। पारिस्थिकी के लिए श्रृंगार के समान हैं। भारत में इन्हें सदैव आदर भाव एवं पूज्य समझा गया। मनिषियों के लिए प्रेरणा का स्रोत तो सैलानियों के लिए आकर्षण का विषय रहा है।

पादप (Flora) :

हमारे देश की जलवायु विषम है, वस्तुतः संसार में जितने भी प्रकार की जलवायु है, वह सभी जलवायु यहाँ मिलती है, यही कारण है कि हमारे देश में अनेक प्रकार की वनस्पतियाँ पायी जाती हैं। हम इन्हें मोटे तौर पर आठ वनस्पतिक क्षेत्र (Botanical Region) में बांट सकते हैं।

1. पश्चिमी हिमालय वनस्पतिक क्षेत्र : इस क्षेत्र का विस्तार कश्मीर से कुमाऊँ तक है। यहाँ चीड़, देवदार और कोणधारी वृक्ष का फैलाव है, ऊँचाई के साथ-साथ वृक्षों की प्रजातियों में भी परिवर्तन देखने को मिलता है, अधिक ऊँचे क्षेत्रों (4750 मी०) में अल्पाईन वनों का विस्तार है।

2. पूर्वी हिमालय वनस्पतिक क्षेत्र : इस क्षेत्र में ओक, छोटी बेंत तथा फूलों वाले सदाबहार वृक्ष मिलते हैं।

3. असम वनस्पतिक क्षेत्र : यह ब्रह्मपुत्र और सुरमाघाटी के बीच का क्षेत्र है, यहाँ मुख्य रूप से सदाबहार वन मिलते हैं सदाबहार वनों के बीच-बीच में घने बाँसों एवं लम्बी घासों के झुरमुट मिलते हैं।

4. सिन्धु मैदान वनस्पतिक क्षेत्र : इस क्षेत्र में पंजाब, पश्चिमी राजस्थान और उत्तरी गुजरात के मैदान को शामिल किया गया है। बबूल, नागफनी, खेजरी, आक आदि यहाँ के मुख्य पौधे हैं।

5. गंगा की मैदानी वनस्पतिक क्षेत्र : अरावली से बंगाल और ओडिशा के बीच के क्षेत्र इसके अन्तर्गत रखा गया है। यह क्षेत्र कृषि प्रधान क्षेत्र है इसलिए यहाँ वन बहुत कम विस्तृत है जहाँ-तहाँ बाँस साल, खैर, तेन्दू के वृक्ष पाए जाते हैं।

6. दक्षिण का पठारी वनस्पतिक क्षेत्र: इसमें पूरा दक्षिण का पठारी क्षेत्र सम्मिलित किया गया है। यहाँ पतझड़ वाले वृक्ष पाए जाते हैं इसके अतिरिक्त विभिन्न प्रकार की जंगली झाड़ियाँ देखने को मिलती हैं।

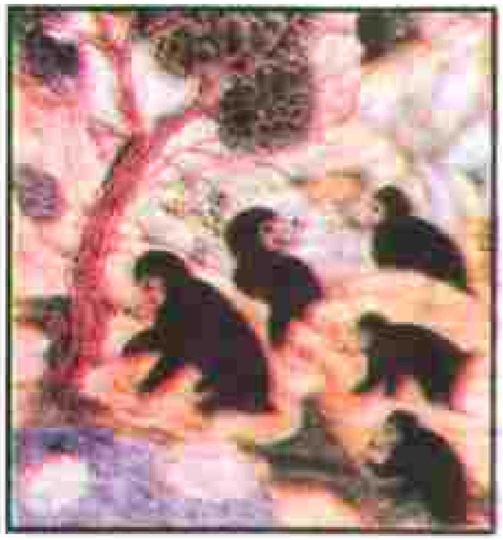

चित्र-8

7. मालाबार वनस्पतिक क्षेत्र : के अंतर्गत पश्चिमी तटीय क्षेत्र को रखा गया है। यहाँ पर गर्म मसाले, सुपारी, नारियल, रबर के वृक्ष के अलावा काजू, चाय एवं कॉफी के वृक्ष पाए जाते हैं।

8. अंडमान वनस्पतिक क्षेत्र : यहाँ पर सदाबहार, अर्द्ध सदाबहार, एवं समुद्रीतटीय जंगलों की प्रमुखता है।

भारतीय वनस्पतिक सर्वेक्षण (Botanical Survey of India, BSI) के अनुसार यहाँ 47,000 पेड़-पौधों की प्रजातियाँ हैं जिसमें 15,000 प्रजातियां वाहिनी वनस्पति (Vascular Plant) के अन्तर्गत आते हैं। इनमें 35% प्रजातियां देशी (Endemic) हैं, जो विश्व में और कहीं नहीं पायी जाती हैं।

जन्तु (Fauna) : भारतीय प्राणी सर्वेक्षण, कोलकाता (Zoological Survey of India,ZSI) के सर्वेक्षण के अनुसार हमारे यहाँ 89,451 जीव-जन्तुओं की प्रजातियां पायी जाती हैं, जिनको निम्नांकित वर्गों में रखा गया है।

अद्यजीव (प्रोटिस्टा)	2577 प्रजातियां
आर्थ्रोपोडा	68,389 प्रजातियां
मोलस्क	5000 प्रजातियां
अन्य अकशेरूकी	8,329 प्रजातियां
प्रोटोकॉर्डेटा	119 प्रजातियां
मछलियाँ	2,546 प्रजातियां
उभयचर	209 प्रजातियां
सरीसृप	456 प्रजातियां
पक्षी	1,232 प्रजातियां
स्तनपायी	390 प्रजातियां

इनमें कई लुप्त होने के कगार पर हैं। इनके संरक्षण के लिए सरकार ने कई कदम उठाए हैं। इनके लिए 89 उद्यान तथा 400 वन्य प्राणी उद्यान का विकास प्रमुख है। इसके अंतर्गत सम्मिलित रूप से 1.56 लाख किलोमीटर क्षेत्रफल है।

जैव-विविधता की उपयोगिता के ज्ञान के पूर्व आप यह जान लें कि **जैव-विविधता (Biodiversity)** क्या है?

आपने पटना का संजय गांधी जैविक उद्यान का भ्रमण किया होगा। वहाँ एक ओर धनवन्तरी पार्क में छोटे-छोटे विभिन्न प्रकार के औषधीय पौधे देखा होगा, तो दूसरी ओर बड़े-बड़े विभिन्न प्रकार के वृक्ष इसी वनों में उछलते कुदते बंदरों का आवास, तो कहीं सिंह, गेंडा और मगर को देखकर आनंदित होंगे, छोटी-बड़ी सुंदर पक्षियों की चह-चहाहट सुनकर भाव विभोर होए होंगे, तो कहीं रेंगने वाले जीव साँप दिखाई पड़ा होगा, वास्तव में स्थानीय स्तर पर यह जैविक उद्यान जैव-विविधता का ही प्रतिनिधित्व करता है। यह भूमंडल जो हम सबों का आवास है, सूक्ष्म जीवाणु से लेकर वट-वृक्ष हाथी और ब्लूव्हेल तक करोड़ों जीव धारी का अधिवास है, सही अर्थों में यह पृथ्वी जैव विविधता का भंडार है।

विगत 250 वर्षों से जीव वैज्ञानिक जीवों एवं पादपों की पहचान एवं नामों का पता लगाने का प्रयास कर रहे हैं, हमारे वैज्ञानिकों ने तो कई हजार वर्ष पूर्व में ही जन्तुओं एवं पेड़-पौधों पर शोध करके इसकी सूची तैयार कर नाम एवं प्रजातियों की खोज की थी। प्रथम शताब्दी में आयुर्वेद के जनक चरक ने चरक संहिता में 200 प्रकार के पशुओं और 340 प्रकार के पौधों का उल्लेख किया है।

अठारहवीं शताब्दी में स्वीडन के वैज्ञानिक कैरोलस लिनाईस ने लगभग 5900 प्रकार के पौधों तथा 4200 प्रकार के पशुओं की पहचान की थी। अब तक 17 लाख प्रजातियों का नामाकरण किया जा चुका है, इनमें दस लाख से अधिक पशु हैं और 7 लाख पौधों की प्रजातियां हैं। एक अनुमान के अनुसार विश्व में 50 लाख से अधिक प्रजातियां हैं। कुल प्रजातियों में से आधा से अधिक प्रजातियां विश्व के अज्ञात उष्ण कटीबंध वर्षा वनों में पायी जाती हैं, जबकि वर्षा वन विश्व के स्थलीय भू-भाग का 8 प्रतिशत से भी कम क्षेत्रफल है।

हमारा देश जैव-विविधता के संदर्भ में विश्व के सर्वाधिक समृद्ध देशों में से एक है, इसकी गणना विश्व के 12 विशाल जैविक-विविधता वाले देशों में की जाती है, यहाँ विश्व की सारी जैव उप जातियों का आठ प्रतिशत संख्या (लगभग 16 लाख) पाई जाती है।

क्या आप जानते हैं ?

- विश्व की एक लाख कीट पतंगों की जातियों में से 60 हजार जातियां भारत में हैं।
- 41 सौ मछलियों की प्रजातियों में से भारत में 1693 प्रजातियां हैं।
- विश्व की 9 हजार पक्षियों की जातियों में से लगभग 12 सौ भारत में पाई जाती हैं। इसी प्रकार 4 हजार स्तनपाई जीवों का 10% भारत में है।
- पादप बहुल देशों में भारत का दसवां स्थान है।
- भारत एक महत्वपूर्ण वैवोलिवियन सेंटर ऑफ डाईवरसिटी (Vavilavion Centre of Dirversity) है, जहाँ 167 महत्वपूर्ण कृष्य पादप प्रजातियां (Cultivated plant species) है।
- चावल, गन्ना, जूट आम, नींबू, केला, बाजरा, ज्वार, फसलों का उद्भव भारत में हुआ।

जैव विविधता के संदर्भ में अभी भी हमारा ज्ञान बहुत कम है। इस भूमंडल पर पेड़-पौधे एवं जीव-जन्तु की जातियां-प्रजातियां, उपजातियां संख्या से कहीं अधिक होने की सम्भावनाएँ हैं, आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि प्रत्येक वर्ष 10,000 (मोटे तौरपर) नवीन प्रजातियों की उत्पत्ति हो रही है।

क्या आप जानते हैं?

- हमें भूमंडल पर अधिवास करने वाले प्रजातियों का सही-सही पता नहीं है।
- एक अनुमान के अनुसार प्रजातियों की संख्या चार से सौ मिलियन तक पहुँच सकती है।
- विश्व में सबसे अधिक जातियां कीड़े-मकोड़े (Insects) और अतिसूक्ष्म परजीवों की है, जिन्हें हम खुली आँखों से नहीं देख सकते हैं।

हमारा देश जैविक विविधता में समृद्ध देश है। सबसे समृद्ध जैव-विविधता वाला क्षेत्र पश्चिमी घाट और उत्तरी पूर्वी भारत है। इनमें क्रमशः भारत का 4% और 5.2% भौगोलिक क्षेत्रफल है, विश्व के 25 हॉट स्पॉट में इन्हें भी रखा गया है। इनमें असंख्य प्रकार के जैविक समूह रहते हैं। भारत में 33% पुष्पीय पौधे भारतीय मूल के हैं। इसी प्रकार 53% स्वच्छ जल मछली 60% एमफेबियन्स 30% रेंगनेवाली प्रजातियां और 10% स्तनपायी प्रजातियां भारतीय मूल (endemic) के हैं। पूर्वोत्तर भारत पश्चिमी घाट, उत्तर पश्चिम हिमालय और अंडमान निकोबार द्वीप समूह मुख्य रूप से देशज (endemic) क्षेत्र के रूप में प्रसिद्ध हैं। कुछ (Amphibian) पश्चिमी घाट में भारतीय मूल के हैं।

क्या आप जानते हैं?

- कम से कम 136 फसल प्रजातियां और 320 वन सम्बंधी प्रजातियां मूलतः भारतीय हैं।
- हमारे यहाँ बड़ी संख्या में घरेलू प्रजातियां है, इसका सबसे अच्छा उदाहरण चावल है, जिसकी 50,000 से 60,000 किस्में भारत में पायी जाती है।

यूनेस्को के सहयोग से भारत में 14 जैवमण्डल आरक्षित क्षेत्र की स्थापना की गई है, यह क्षेत्र अगले पृष्ठ की तालिका में प्रदर्शित है।

तालिका-3

क्रम सं०	जैवमंडल रिज़र्व क्षेत्र का नाम	कुल भौगोलिक क्षेत्र (वर्ग किमी)	स्थिति (राज्य)
1.	नीलगिरि	5,520	वायनाड, नागरहोल, बांदीपुर, मुदुमलाई, निलम्बूर, सायलेंट वैली और सिरुवानी पहाड़ियाँ (तमिलनाडु, केरल और कर्नाटक)
2.	नन्दा देवी	2,236.74	चमोली, पिथौरागढ़ और अल्मोड़ा जिलों का भाग (उत्तराखंड)
3.	नोकरेक	820	गारो पहाड़ियों का भाग (मेघालय)
4.	मानस	2,837	कोकराझार, बोंगाईगाँव, बारपेटा, नलबाड़ी कामरूप व दारंग जिलों के हिस्से (असम)
5.	सुन्दरवन	9,630	गंगा-ब्रह्मपुत्र के डेल्टा और इसका भाग (पश्चिमी बंगाल)
6.	मन्नार की खाड़ी	10,500	भारत और श्रीलंका के बीच स्थित मन्नार की खाड़ी का भारतीय हिस्सा (तमिलनाडु)
7.	ग्रेट निकोबार	885	अंडमान निकोबार के सुदूर दक्षिणी द्वीप (अंडमान निकोबार द्वीप समूह)
8.	सिमिलीपाल	4,374	मयूरभंज जिले के भाग (ओडिशा)
9.	डिब्रू साईकोवा	765	डिब्रूगढ़ और तिनसुकिया जिले के भाग (असम)
10.	दिहांग-देबांग	5,111.5	अरुणाचल प्रदेश में सियांग और देबांग जिलों के भाग
11.	कंचनजंगा	2,619.92	उत्तर और पश्चिम सिक्किम के भाग
12.	पचमढ़ी	4,926.28	बेतूल, होशंगाबाद और छिंदवाड़ा जिलों के भाग (मध्य प्रदेश)
13.	अगस्त्यमलाई	1,701	केरल में अगस्त्यमलाई पहाड़ियाँ
14.	अचानकमार-अमरकंटक	3,835.51	मध्य प्रदेश में अनुपपुर और डिण्डौरी जिलों के भाग और छत्तीसगढ़ में बिलासपुर जिले के भाग

स्रोत : वार्षिक रिपोर्ट 2004-05 पर्यावरण एवं वन मंत्रालय, भारत सरकार।

चित्र-7

राष्ट्र के स्वस्थ जैव मंडल एवं जैविक उद्योग के लिए समृद्ध जैव-विविधता अनिवार्य है। जैव विविधता से हम-आप परोक्ष एवं अपरोक्ष लाभ उठाते हैं। जैव विविधता हमारे लिए भोजन, औषधियाँ, भैषज्य दवाईयाँ, रेशों, रबर और लकड़ियों का साधन है। कई सूक्ष्म जीवों का उपयोग बहुमूल्य उत्पाद तैयार करने के लिए उद्योगों में प्रयोग होता है। यह हमें मुफ्त में बहुत सारे पारिस्थैतिकीय सेवा प्रदान करता है, जैव विविधता की मुख्य उपयोगिताएँ निम्नलिखित हैं।

(i) आधुनिक कृषि तीन प्रकार से जैव विविधता का उपयोग करता है।

(क) नवीन फसल के साधन के रूप में।

(ख) अच्छे प्रकार के नस्ल के लिए सामग्री के रूप में।

(ग) नये जैव विनाश, पीड़ानाशी के रूप में।

मानव के भोजन पूर्णतः जैविक संसार से प्राप्त होता है। कई हजार प्रजातियाँ खाद्य योग्य पौधों की हैं, किन्तु लगभग 85 प्रतिशत संसार का भोजन 20 से भी कम पौधे की प्रजातियों से खेती द्वारा उत्पन्न किया जाता है। शेष 15 प्रतिशत पशुओं से उत्पन्न किया जाता है। नई प्रजातियां (पौधे एवं जन्तु) की खोज बढ़ती जनसंख्या के भोजन के लिए सहायक होंगे।

विकसित पौधों एवं घरेलू जानवरों की कुशल नस्ल आधुनिक खेती की रीढ़ की हड्डी है। बहुत सारी विकसित प्रकार की फसलें और अन्य उपयोगी पौधे प्रजनन-क्रिया योजना के द्वारा विकसित किए गए हैं। जंगली प्रजातियों का अनुवांशिकी (Genes) का उपयोग नये गुणों के लिए होता है, जैसे रोग-रोधी अथवा विकसित घरेलू प्रजातियों की उपज के लिए। उदाहरण के लिए एशिया में धान की खेती का चार प्रमुख रोगों से संरक्षण एक अकेला जंगली भारती चावल प्रजाति ओर्जिया निवारा (Orzya nivara) से कियाजाता है।

जैव विविधता का उपयोग बहुत सारे औषधीय उपयोग में होता है। बहुत सारे तत्व से रोग उपचार गुणों को पौधों से प्राप्त किया जाता है। जैसे मार्फीन (Morphine) का उपयोग दर्द निरोधक के लिए किया जाता है और इसे पापाव्हर सोनीफेरम (Papaver Sonniferem) से प्राप्त किया जाता है। क्यूनाईन (Quinine) मलेरिया के लिए उपयोगी है यह चिनचोना लेडजेनरियाना (Chinchona Ledgenriana) से प्राप्त होता है। टेक्सोल (Taxol) कैंसर रोधी औषधी है जो एक प्रकार के सदाबहार वृक्षों के छाल टैक्सस बेक्केटा एवं टी० ब्रवीफोलिया (Taxus baccota and T. brevifolia) से प्राप्त किया जाता है। अधिकतर परम्परागत दवाईयों का निर्माण पौधों से होता है। लगभग 25% भैषज्य दवाईयाँ केवल 120 पौधीय प्रजातियों से तैयार किया जाता है।

क्या आप दिसम्बर 1987 की एक सच्ची कहानी के बारे में जानते हैं? ट्रॉपीकल

क्या आप जानते हैं?

- आयुर्वेदिक एवं यूनानी दवाईयाँ पादप जन्तु एवं खनिजों से तैयार की जाती है।
- आयुर्वेदिक जनक चरक ने हजारों वर्ष पूर्व पादप, जन्तु एवं खनिज का उपयोग रोग उपचार के रूप में किया था।
- आयुर्वेद भारतीय इलाज पद्धती है और विश्व की प्राचीन पद्धतियों में से एक है।

> **क्रियाकलाप**
> - एक पीपल या बरगद के वृक्ष के पास अपने साथियों के साथ जाईए और बैठ कर इसके गुणों, लाभों एवं उपयोगिताओं पर विचार कीजिए।
> - वन एवं वन्य प्राणियों के संरक्षण सम्बंधी विषयों पर विद्यालय में एक संगोष्ठी का आयोजन कीजिए।
> - अपने आस-पास लगे शीशम के वृक्ष के आर्थिक लाभ एवं औषधीय गुण के सम्बंध में लोगों को जागृत करें और यह भी बताएँ कि इसके बुरादे (चूर्ण) एवं पत्तियाँ किन-किन रोग के लिए उपयोगी है।

बॉटनीकल गार्डेन एण्ड रिसर्च इंस्टीच्यूट (TBGRI) नामक संस्था की एक टीम केरल में पश्चिमी घाट के जैविकीय अभियान पर थी, इस टीम के कानी आदिवासियों के कुछ सदस्यों को मार्ग दर्शन के रूप में साथ में लिया। वैज्ञानिकों ने देखा कि यह लोग एक फल खा रहे थे जिससे उन्हें दुलर्भ मार्ग चलने के बावजूद काफी उर्जावान बना दिया। जब वैज्ञानिकों ने इसका भोग किया तो उन्हें भी अचानक ऊर्जा एवं शक्ति की अनुभूति हुई।

वैज्ञानिकों में इस फल के प्रति जिज्ञासा बढ़ी और मार्गदर्शक से जानकारी चाही किन्तु ये इनकार करते रहे, इसे वह केवल पावन और रहस्यमय फल बताते रहे और यह भी कहा कि यह फल हमलोगों के लिए है, बाह्य लोगों के लिए नहीं है। जब काफी आग्रह किया तो मार्गदर्शक ने इस पौधे को दिखाया जो इनके फल का साधन था और इसका नाम 'आरोग्यपाचा' बताया।

जब वैज्ञानिकों ने इसकी जानकारी प्राप्त करली तो इस पर शोध किया तो पाया कि यह तनाव रोधक है, और इसमें अन्य लाभकारी एवं गुणकारी सक्रिय तत्व हैं। 'आरोग्यपाचा एवं अन्य तीन औषधीय पौधों के मिश्रण से एक औषधी तैयार किया और उसका नाम 'जीवानी' दिया गया TBGRI ने इसे बनाने के लिए एक प्राईवेट कम्पनी आर्यवैद्य फार्मेसी (AVP) को दिया। इसके लिए 10,00,000/- रूपये पंजियन शुल्क लिया और दो प्रतिशत रॉयलीटी तय हुई इस प्रकार कानी समुदाय ने इससे आधी रॉयलीटी प्राप्त कर अपने समुदाय के कल्याण हेतु एक ट्रस्ट स्थापित किया।

देखा आपने एक पौधे ने कितना कमाल किया।

अभ्यास-प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न :

1. भारत में 2011 में कितने प्रतिशत भौगोलिक क्षेत्र में वन का विस्तार था?

   (क) 25 (ख) 21.05

   (ग) 20 (घ) 20.60

2. वन स्थिति रिपोर्ट के अनुसार भारत में वन का विस्तार है।

   (क) 20.60 प्रतिशत भौगोलिक क्षेत्र में (ख) 20.55 प्रतिशत भौगोलिक क्षेत्र में

   (ग) 20 प्रतिशत भौगोलिक क्षेत्र में (घ) इनमें से कोई नहीं।

3. बिहार में कितने प्रतिशत भौगोलिक क्षेत्र में वन का फैलाव है?

   (क) 15 (ख) 20

   (ग) 20 (घ) 7

4. पूर्वोत्तर राज्यों के 188 आदिवासी जिलों में देश के कुल क्षेत्र का कितना प्रतिशत वन है?

   (क) 75 (ख) 80.05

   (ग) 90.03 (घ) 60.11

5. किस राज्य में वन का सबसे अधिक विस्तार है ?

   (क) केरल (ख) कर्नाटक

   (ग) मध्य प्रदेश (घ) उत्तर प्रदेश

6. वन संरक्षण एवं प्रबंधन की दृष्टि से वनों को वर्गीकृत किया गया है-

   (क) 4 वर्गों में (ख) 3 वर्गों में

   (ग) 5 वर्गों में (घ) इनमें से कोई नहीं

7. 1951 से 1980 तक लगभग कितना वर्ग किलोमीटर वन क्षेत्र कृषि भूमि में परिवर्तित हुआ?

   (क) 30,000 (ख) 26,200

   (ग) 25,200 (घ) 35,500

8. संविधान की धारा 21 का संबंध है–

   (क) वन्य जीवों तथा प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण

   (ख) मृदा संरक्षण

   (ग) जल संसाधन संरक्षण

   (घ) खनिज सम्पदा संरक्षण

9. एक एन० जी० ओ० की वानिकी रिपोर्ट के अनुसार 1948 में विश्व में कितने हेक्टेयर भूमि पर वन का विस्तार था।

   (क) 6 अरब हेक्टेयर (ख) 4 अरब हेक्टेयर

   (ग) 8 अरब हेक्टेयर में (घ) 5 अरब हेक्टेयर में

10. प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण 1968 में कौन सा कनवेंशन हुआ था?

   (क) अफ्रीकी कनवेंशन (ख) नेटलैंड्स कनवेंशन

   (ग) विश्व आपदा कनवेंशन (घ) इनमें से कोई नहीं

11. इनमें कौन सा जीव है जो केवल भारत ही में पाया जाता है?

   (क) घड़ियाल (ख) डॉलफिन

   (ग) ह्वेल (घ) कछुआ

12. भारत का राष्ट्रीय पंक्षी है–

   (क) कबूतर (ख) हंस

   (ग) मयूर (घ) तोता

13. मैंग्रोव्स का सबसे अधिक विस्तार है–

(क) अण्डमान-निकोबार द्वीप समूह के तटीय भाग में

(ख) सुन्दरवन में

(ग) पश्चिमी तटीय प्रदेश में

(घ) पूर्वोत्तर राज्य में

14. टेक्सोल का उपयोग होता है–

(क) मलेरिया में (ख) एड्स में

(ग) कैंसर में (घ) टी०बी० के लिए

15. 'चरक' का सम्बंध किस देश से था?

(क) म्यांमार से (ख) श्रीलंका से

(ग) भारत से (घ) नेपाल से

लघुउत्तरीय प्रश्न :

1. बिहार में वन सम्पदा की वर्तमान स्थिति का वर्णन कीजिए।
2. वन विनाश के मुख्य कारकों को लिखिये।
3. वन के पर्यावरणीय महत्व का वर्णन कीजिए।
4. वन्य-जीवों के ह्रास के चार प्रमुख कारकों का उल्लेख कीजिए।
5. वन और वन्य जीवों के संरक्षण में सहयोगी रीति रिवाजों का उल्लेख कीजिए।
6. चिपको आन्दोलन क्या है?
7. कैंसर रोग के उपचार में वन का क्या योगदान है?
8. दस लुप्त होने वाले पशु-पक्षियों का नाम लिखिए।
9. वन्य-जीवों के ह्रास में प्रदूषण जनित समस्याओं पर अपना विचार स्पष्ट कीजिए।
10. भारत के दो प्रमुख जैवमंडल क्षेत्र का नाम, क्षेत्रफल एवं राज्यों का नाम बताएँ।

दीर्घउत्तरीय प्रश्न :

1. वन एवं वन्य जीवों के महत्व का विस्तार से वर्णन कीजिए।
2. वृक्षों के घनत्व के आधार पर वनों का वर्गीकरण कीजिए और सभी वनों का वर्णन विस्तार से कीजिए।
3. जैव विविधता क्या है? यह मानव के लिए क्यों महत्वपूर्ण है? विस्तार से लिखिए।
4. विस्तार पूर्वक बतायें कि मानव-क्रियाएँ किस प्रकार प्राकृतिक वनस्पति और प्राणीजात के ह्रास के कारक हैं।
5. भारतीय जैवमंडल क्षेत्रों की चर्चा विस्तार से कीजिए।

(घ) खनिज संसाधन

खनिज संसाधन आधुनिक सभ्यता एवं संस्कृति के आधार स्तम्भ हैं। भारत में लगभग 100 से अधिक खनिज मिलते हैं तथा कुछ खनिजों के उत्पादन एवं भण्डार में यह विश्व के अग्रणी देशों में एक है। स्वतंत्रता के बाद खनिजों के सर्वेक्षण एवं विकास की ओर काफी ध्यान दिया गया है। जियोलॉजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया, (GSI) तेल एवं प्राकृतिक गैस आयोग एवं निजी क्षेत्र की कम्पनियाँ इस दिशा में महत्वपूर्ण कार्य कर रही हैं।

खनिज निश्चित अनुपात में रासायनिक एवं भौतिक विशिष्टताओं के साथ निर्मित एक प्राकृतिक पदार्थ है। दूसरे शब्दों में, खनिज निश्चित रासायनिक संयोजन एवं विशिष्ट आंतरिक परमाणविक संरचना वाले ठोस प्राकृतिक पदार्थ को कहा जाता है। हमारा स्थलमण्डल चट्टानों से बना है तथा चट्टान खनिजों के संयोग से बनी है। अभी तक लगभग 2000 से अधिक खनिजों की पहचान की जा चुकी हैं किन्तु 30 खनिज ही आर्थिक दृष्टि से विशिष्ट महत्व रखते हैं।

खनिजों के प्रकार :

खनिजों सामान्यतः दो प्रकार के होते हैं :-

1. धात्विक खनिज : इन खनिजों में धातु होता है जैसे लौह अयस्क, तांबा, निकिल, मैंगनीज आदि। पुनः इसे दो भागों में विभक्त किया जा सकता है :-

(क) लौहयुक्त खनिज : जिन धात्विक खनिजों में लोहे का अंश अधिक पाया जाता है वे लौह युक्त खनिज कहलाते हैं, जैसे–लौह अयस्क, मैंगनीज, निकिल, टंगस्टन आदि।

(ख) अलौहयुक्त खनिज : जिन धात्विक खनिजों में लोहे का अंश न्यून होता है या नहीं होता है वे अलौहयुक्त खनिज कहलाते हैं, जैसे–सोना, चांदी, शीशा, बॉक्साइट, टिन, ताँबा आदि।

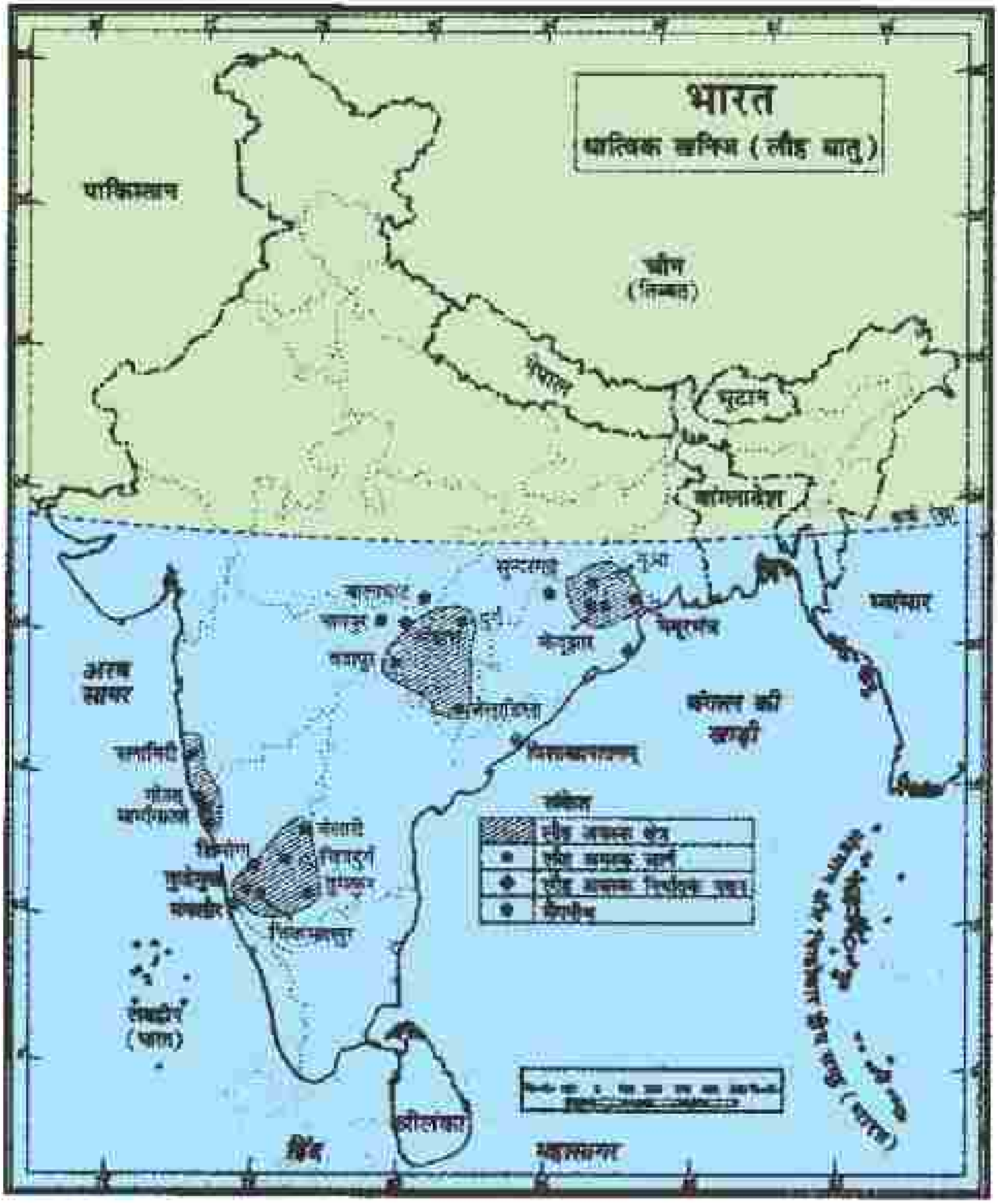

चित्र-1 (घ).1 : धात्विक खनिज (लौह धातु)

2. अधात्विक खनिज : इन खनिजों में धातु नहीं होते हैं, जैसे–चुना-पत्थर, डोलोमाइट, अभ्रक, जिप्सम आदि। अधात्विक खनिज भी दो प्रकार के होते हैं–

(क) कार्बनिक खनिज: इसमें जीवाश्म होते हैं। ये पृथ्वी में दबे प्राणी एवं पादप जीवों के परिवर्तित होने से बनते हैं, जैसे–कोयला, पेट्रोलियम आदि।

(क) अकार्बनिक खनिज : इनमें जीवाश्म नहीं होते हैं, जैसे–अभ्रक, ग्रेफाइट आदि।

खनिजों का वर्गीकरण

- खनिज
  - धात्विक खनिज
    - लौहयुक्त खनिज, जैसे-लोहा निकिल, मैंगनीज, कोबाल्ट आदि
    - अलौहयुक्त खनिज, जैसे-सीसा, जस्ता, बाक्साइट आदि
  - अधात्विक खनिज
    - कार्बनिक या ईंधन खनिज जैसे-कोयला, पेट्रोलियम आदि
    - अकार्बनिक खनिज जैसे-अभ्रक, ग्रेफाइट आदि

धात्विक एवं अधात्विक खनिजों में अंतर :

धात्विक खनिज	अधात्विक खनिज
1. धात्विक खनिज को गलाने पर धातु प्राप्त होता है।	1. अधात्विक खनिज को गलाने पर धातु प्राप्त नहीं हो सकता।
2. ये कठोर एवं चमकीले होते हैं।	2. इनकी अपनी चमक होती है।
3. ये प्राय: आग्नेय चट्टानों में मिलते हैं।	3. ये प्राय: परतदार चट्टानों में मिलते हैं।
4. इन्हें पीट कर तार बनाया जा सकता है। ये पीटने पर टूटता नहीं है।	4. इन्हें पीट कर तार नहीं बनाया जा सकता। ये पीटने पर चूर-चूर हो जाते हैं।

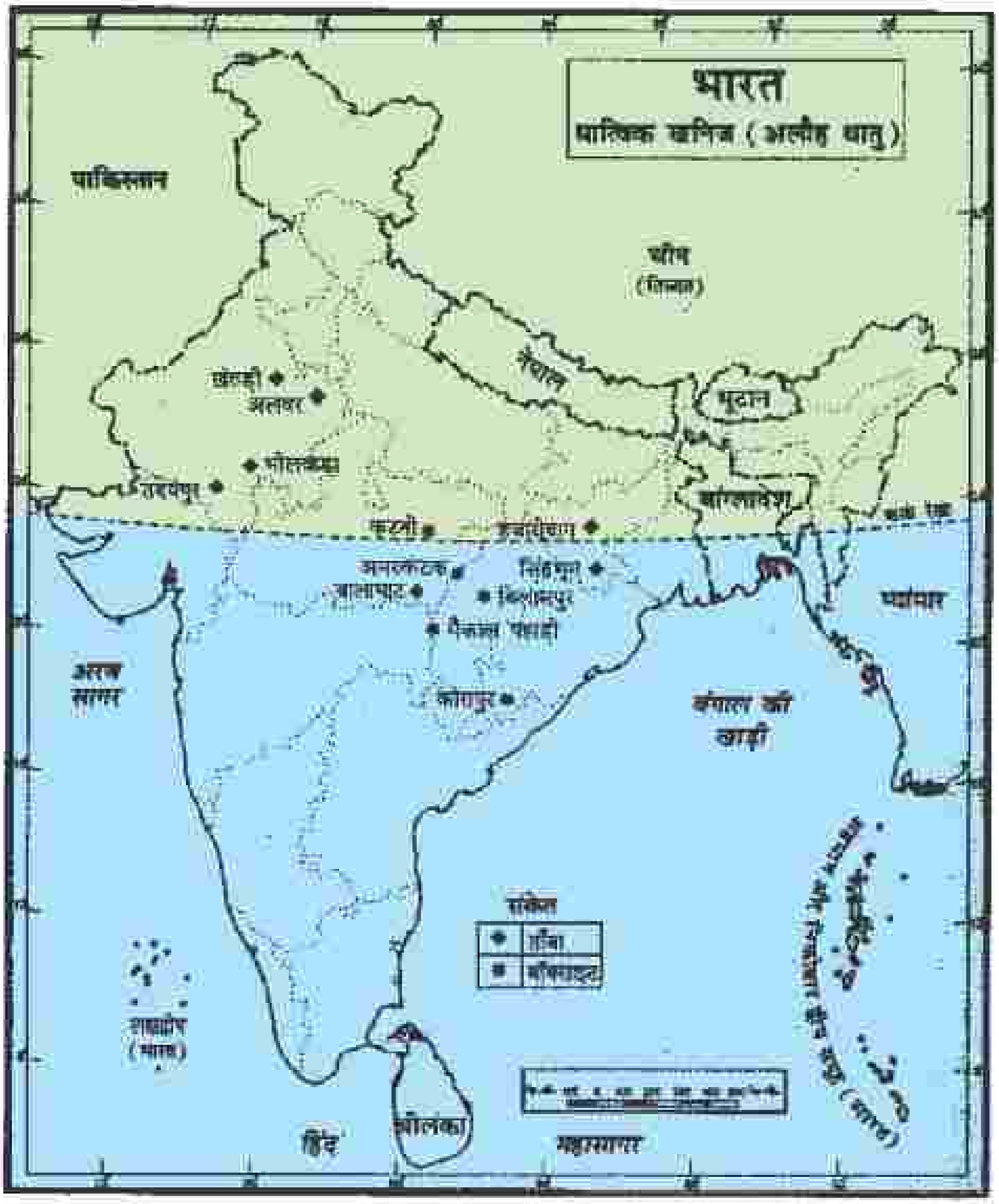

चित्र-1 (घ)2 : धात्विक खनिज (अलौह धातु)

लौह एवं अलौह खनिजों में अंतर :

लौह खनिज	अलौह खनिज
1. जिन खनिजों में लोहे का अंश पाया जाता है तथा उनका उपयोग लोहा एवं इस्पात बनाने में किया जाता है, वे लौह खनिज कहलाते हैं, जैसे लौह अयस्क, निकिल, टंगस्टन, मैंगनीज़ आदि	1. जिन खनिजों में लोहे का अंश न्यून या बिल्कुल नहीं होता वे अलौह खनिज कहलाते हैं, जैसे- सोना, सीसा, अभ्रक आदि ।
2. ये स्लेटी, धूसर, मटमैला आदि रंग के होते हैं।	2. ये अनेक रंग के हो सकते हैं
3. ये रवेदार चट्टानों में पाये जाते हैं।	3. ये सभी प्रकार के चट्टानों में मिल सकते हैं।

खनिजों की विशेषताएँ :

खनिजों का वितरण असमान होता है। अधिक गुणवत्ता वाले खनिज कम तथा कम गुणवत्ता वाले खनिज ज्यादा मात्रा में पाये जाते हैं। खनिज समाप्य संसाधन हैं। एक बार उपयोग करने के बाद पुनः उपयोग नहीं किया जा सकता है। अतः इसके संरक्षण की परम आवश्यकता है।

खनिजों का वितरण :

भारत के विभिन्न भागों में भिन्न-भिन्न भूगर्भिक संरचनाएँ पायी जाती हैं, जिनके कारण खनिजों का वितरण बहुत ही असमान है। अधिकतर खनिज प्राचीन चट्टान समूहों में ही पाये जाते हैं। जैसे–लौह–अयस्क एवं मैंगनीज के भण्डार देश के कैम्ब्रियन पूर्व की चट्टानों के धारवाड़ समूह में पाये जाते हैं तो दूसरी ओर तांबा, सीसा एवं जस्ता अरावली श्रेणी में पाई जाती है। चूना-पत्थर, डोलोमाइट, जिप्सम एवं कैलसियम सल्फेट कडप्पा और ऊपरी विन्ध्यन समूहों तक सीमित हैं। अधिकांश खनिज धारक चट्टानें प्रायद्वीपीय भारत में ही पायी जाती हैं। भारत के उत्तरी मैदान की आधार चट्टानों को जलोढ़ की मोटी पर्त ने पूर्णतः ढक लिया है अतः वहाँ खनिजों का अभाव है। देश का अधिकांश खनिज निम्नलिखित तीन पटियों में पाई जाती हैं।

1. उत्तर पूर्वी पठार : यह देश की सबसे धनी खनिज पेटी है जिसमें छोटानागपुर का पठार, उड़ीसा का पठार, छत्तीसगढ़ का पठार तथा पूर्वी आन्ध्र प्रदेश का पठार अवस्थित है। इस पेटी में लौह अयस्क, मैंगनीज, अभ्रक, बॉक्साइट, चूना-पत्थर, डोलोमाइट, तांबा, थोरियम, यूरेनियम क्रोमियम, सिलिमैनाइट तथा फास्फेट के विशाल भण्डार हैं।

2. दक्षिण-पश्चिम पठार : यह पेटी कर्नाटक के पठार एवं निकटवर्ती तमिलनाडु के पठार पर फैली हुई है। यहाँ लौह अयस्क, मैंगनीज, बॉक्साइट आदि भारी मात्रा में पाये जाते हैं। देश की सभी तीनों सोने की खानें इसी पेटी में मौजूद हैं।

ज्ञातव्य हो कि शक्ति संसाधनों की विस्तृत चर्चा अलग अध्याय में किया गया है, अत: उनकी चर्चा इस अध्याय में नहीं किया जा रहा है।

3. उत्तर पश्चिम प्रदेश : इस पेट्टी का विस्तार खम्भात की खाड़ी से लेकर अरावली की श्रेणियों तक है। यहाँ अनेक अलौह धातुएँ, जैसे–चाँदी, सीसा, जस्ता, तांबा आदि मिलते हैं। बालु–पत्थर, ग्रेनाइट, संगमरमर, जिप्सम, मुल्तानी मिट्टी, डोलोमाइट, चूना पत्थर, नमक आदि के भी पर्याप्त भण्डार हैं।

हिमालय एक अन्य खनिज पेटी है, जहाँ तांबा, सीसा, जस्ता, कोबाल्ट आदि प्राप्य हैं।

धात्विक खनिज (लौह) :

लौह अयस्क, मैंगनीज, क्रोमाइट पाइराइट, निकिल आदि धात्विक खनिजों के सुन्दर उदाहरण हैं। ये अधिकतर उद्योगों के आधार होते हैं।

लौह-अयस्क :

लोहा आधुनिक सभ्यता की रीढ़ है। यह उद्योगों की जननी है। लोहा खान से शुद्ध रूप में नहीं मिलता बल्कि लौह अयस्क (Iron-Ore) के रूप में निकलता है। शुद्ध लोहे की मात्रा के आधार पर भारत में पाये जाने वाले लौह अयस्क तीन प्रकार के हैं–हेमाटाइट, मैग्नेटाइट और लिमोनाइट। भारत में पूरे विश्व के लौह भण्डार का एक चौथाई भाग आंकलित है।

चित्र-1 (घ).3 भारत में लौह अयस्क का वितरण

भारत के लौह-अयस्क के मुख्य तथ्य

प्रकार	लौह अंश % में	उपनाम	भण्डार (करोड़ टन में)
1. हेमाटाइट	68	लाल अयस्क	1231.7
2. मैग्नेटाइट	60	काला अयस्क	54.0
3. लिमोनाइट	40	पीला अयस्क	परीक्षणाधीन (अभी तक निश्चित नहीं)

भारत में लौह-अयस्क का उत्पादन

वर्ष	उत्पादन हजार टन में
2005 - 06	165230
2006 - 07	180917
2007 - 08	206939

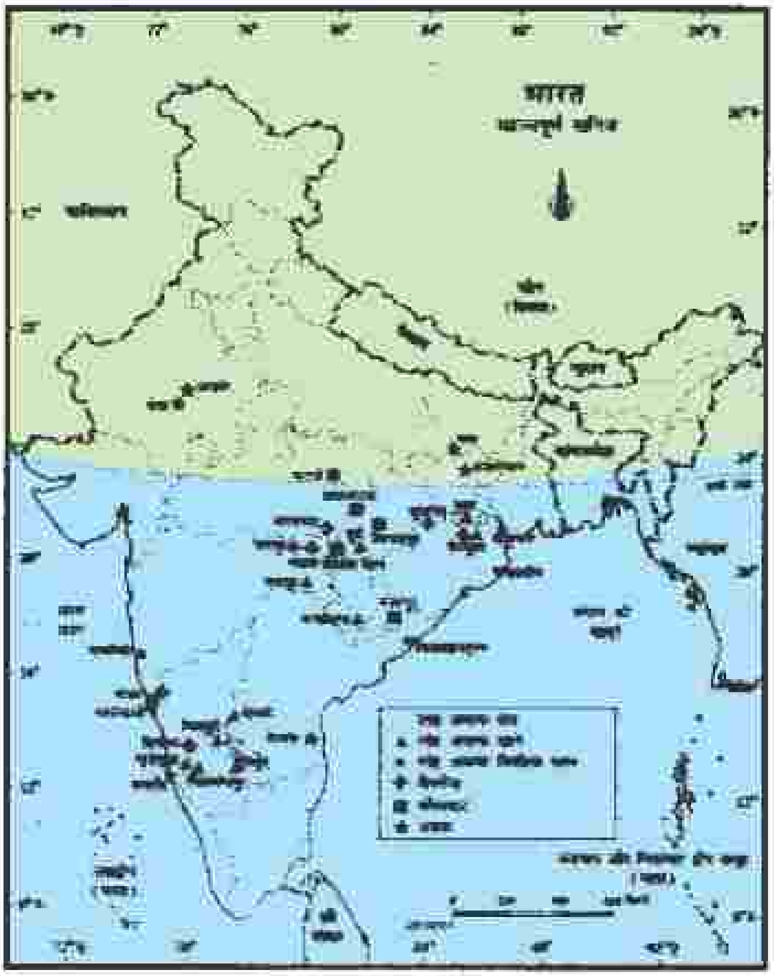

चित्र 1 (घ).4 : महत्वपूर्ण खनिजों का वितरण

वितरण :

भारत में लौह अयस्क प्रायः सभी राज्यों में पाया जाता है परन्तु यहाँ के कुल भण्डार का 96 प्रतिशत कर्नाटक, छत्तीसगढ़, ओडिशा, गोवा, झारखंड राज्यों में सीमित है। शेष भण्डार तमिलनाडु, आन्ध्र प्रदेश, महाराष्ट्र एवं अन्य राज्यों में अवस्थित है। भारत में 1950-51 में 42 लाख टन लोहे का उत्पादन हुआ था जो 2004-05 में बढ़कर 1427.1 लाख टन हो गया। अतः लोहे के उत्पादन में भारी विकास हुआ है।

कर्नाटक राज्य भारत का लगभग एक चौथाई लोहा उत्पादन करता है। यहाँ बेल्लारी, हास्पेट, संदूर आदि क्षेत्रों में लौह अयस्क की खानें हैं। चिकमंगलूर जिले में बाबाबूदन, कालाहांडी, एवं कुमनगुडी की पहाड़ियों में लोहे की अनेक खानें हैं।

छत्तीसगढ़ देश का दूसरा उत्पादक राज्य है जो देश का करीब 20 प्रतिशत लोहा उत्पादन करता है। दंतेवाड़ा जिले का बैलाडिला तथा दुर्ग जिले के डल्ली एवं राजहरा प्रमुख उत्पादक हैं। रायगढ़ बिलासपुर तथा सरगुजा अन्य उत्पादक जिले हैं। यहाँ का अधिकांश लोहा विशाखापट्नम बंदरगाह से जापान को निर्यात किया जाता है।

ओडिशा देश का 19 प्रतिशत लोहा उत्पादन करता है। यहाँ की प्रमुख खानें-गुरू महिषानी, बादाम पहाड़ (मयूरगंज) एवं किरिबुरू हैं।

गोवा देश का चौथा बड़ा लोहा उत्पादक राज्य है तथा देश का 16 प्रतिशत लोहा यहीं से प्राप्त होता है। यहाँ की प्रमुख खानें साहक्वालिम, संगुम, क्यूपेम, सतारी, पोंडा एवं बिचोलिम में स्थित हैं। यहाँ के मर्मागांव पत्तन से लोहा का निर्यात किया जाता है।

झारखण्ड देश का पाँचवाँ बड़ा लौह अयस्क उत्पादक राज्य है और 15 प्रतिशत से अधिक लोहे का उत्पादन करता है। यहाँ के पू० एवं प० सिंहभूम, सरायकेला, पलामू, धनबाद, हजारीबाग, लोहरदगा तथा राँची मुख्य उत्पादक जिले हैं।

महाराष्ट्र में लौह अयस्क की खानें चन्द्रपुर, रत्नागिरी और भण्डारा जिलों में स्थित हैं।

आन्ध्र प्रदेश के करीमनगर, वारंगल, कुर्नूल, कड़प्पा आदि जिले लौह अयस्क उत्पादक हैं, जबकि **तामिलनाडु** की तीर्थ मल्लई पहाड़ियों (सलेम) एवं बादमल्ली (नीलगिरि) क्षेत्र में लोह के भण्डार हैं।

मैंगनीज अयस्क :

> **क्या आप जानते हैं?**
> 1 टन इस्पात बनाने में लगभग 10 किलोग्राम मैंगनीज का उपयोग किया जाता है।

मैंगनीज के उत्पादन में भारत का स्थान विश्व में रूस एवं दक्षिण अफ्रीका के बाद तीसरा है। यह मुख्य रूप से जंगरोधी इस्पात बनाने तथा लोहा एवं मैंगनीज के मिश्र धातु बनाने के उपयोग में आता है। इसका उपयोग शुष्क बैटरियों के निर्माण, फोटोग्राफी, चमड़ा एवं माचिस उद्योग में भी होता है। साथ ही इसका उपयोग पेंट तथा कीटनाशक दवाओं के बनाने में भी किया जाता है। भारत के कुल उत्पादन का 85 प्रतिशत मैंगनीज का उपयोग मिश्र धातु बनाने में किया जाता है।

वितरण :

भारत में मैंगनीज का संचित भण्डार 1670 लाख टन है। विश्व में जिम्बाब्वे के बाद भारत में ही मैंगनीज का सबसे बड़ा संचित भण्डार है जो विश्व के कुल संचित भण्डार का 20 प्रतिशत है।

भारत में उत्पादन के मुख्य क्षेत्र उड़ीसा, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, कर्नाटक एवं आन्ध्र प्रदेश हैं। भारत का 78 प्रतिशत से ज्यादा मैंगनीज अयस्क का भण्डार महाराष्ट्र के नागपुर तथा भण्डारा जिलों से लेकर मध्य प्रदेश के बालाघाट एवं छिन्दवाड़ा जिलों तक फैली पेटी में मिलते हैं।

मैंगनीज उत्पादन

वर्ष	हजार टन में
2005-06	1906.35
2006-07	2145
2007-08	2512

ओडिशा भारत में मैंगनीज के उत्पादन में अग्रणी है। यहाँ देश के कुल उत्पादन का 37 प्रतिशत मैंगनीज उत्पादन होता है। यहाँ मैंगनीज की मुख्य खदानें–सुन्दरगढ़, कालाहांडी, रायगढ़, बोलांगिर, क्योंझर, जाजपुर एवं मयूरभंज जिलों में है।

महाराष्ट्र भारत के कुल उत्पादन का लगभग एक चौथाई मैंगनीज उत्पादन करता है। इस राज्य की मुख्य मैंगनीज उत्पादन पेटी नागपुर तथा भण्डारा जिले में है। इस पेटी में उत्तम कोटि के मैंगनीज अयस्क मिलते हैं। रत्नागिरी में उच्च कोटि के मैंगनीज का उत्पादन होता है।

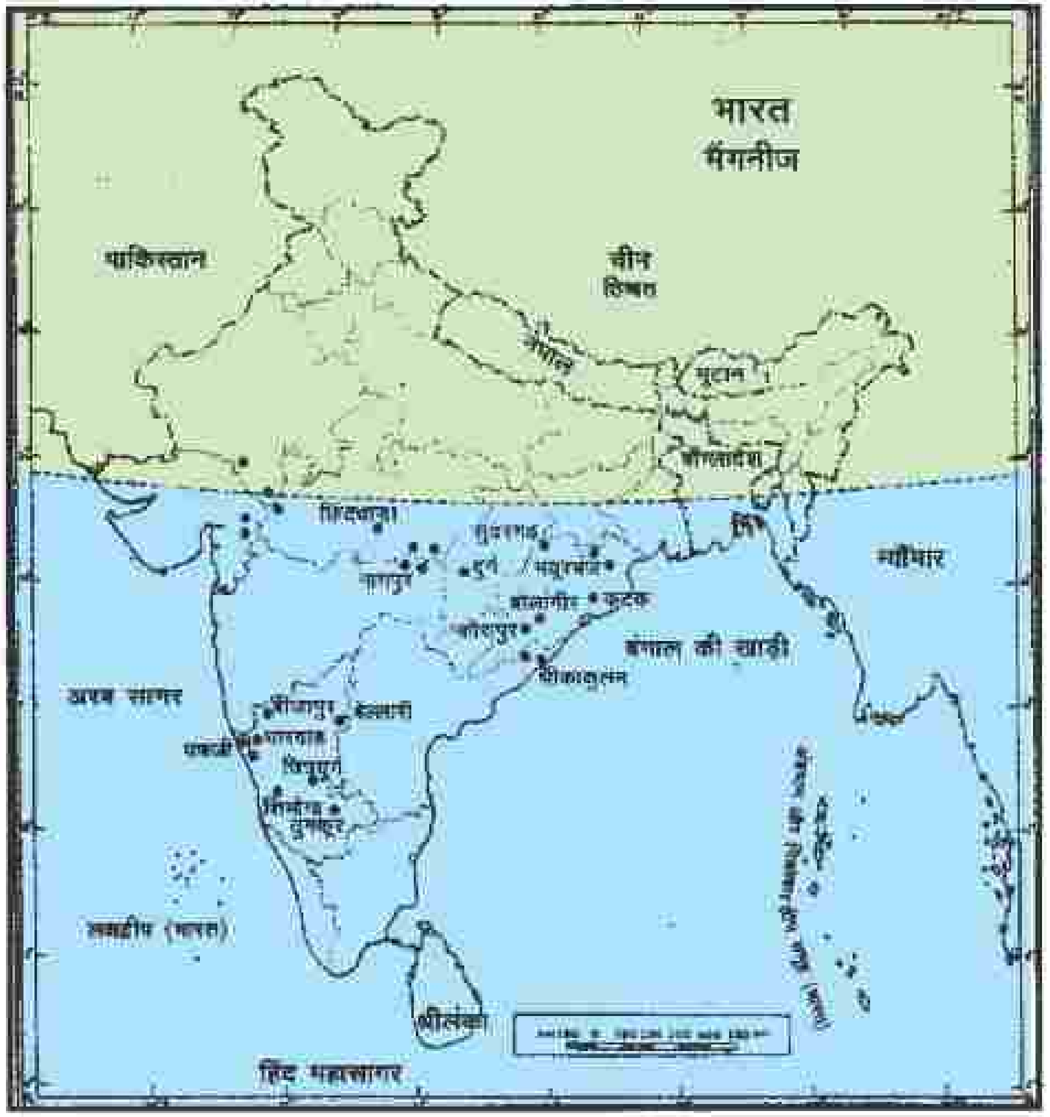

चित्र- 1 (घ), 5 भारत में मैंगनीज अयस्क का वितरण

मध्य प्रदेश 21 प्रतिशत मैंगनीज पैदाकर देश का तीसरा बड़ा उत्पादक राज्य है। बालाघाट तथा छिन्दवाड़ा जिलों में मैंगनीज का उत्पादन होता है।

कर्नाटक में मैंगनीज शिमोगा, चित्रदुर्ग, तुमकुर, बेलारी, उत्तरी कनारा, धारवाड़, चिकमंगलूर और बीजापुर जिले मुख्य उत्पादक हैं। पहले यहाँ देश का एक चौथाई मैंगनीज उत्पादन होता था किन्तु अब उत्पादन कम हो रहा है।

आन्ध्र प्रदेश में देश के सकल उत्पादन का 6 प्रतिशत ही मैंगनीज का उत्पादन होता है। यहाँ मुख्य उत्पादक जिला श्रीकाकुलम है। अन्य उत्पादक जिलों में विशाखापत्तनम, कडप्पा, विजयनगर तथा गुंटूर हैं।

धात्विक खनिज (अलौह) :

इसके अंतर्गत बॉक्साइट, सोना, चाँदी, ताँबा, टिन, सीसा, जस्ता आदि आते हैं। ये खनिज दैनिक जीवन में बड़े काम के हैं किन्तु भारत में इन खनिजों का अभाव है।

बॉक्साइट : यह एक अलौह धातु निक्षेप है जिससे अल्यूमिनियम नामक धातु निकाली जाती है। भारत में बॉक्साइट का इतना भण्डार है, कि अल्यूमिनियम में हम आत्मनिर्भर हो सकते हैं। इसका बहुमुखी उपयोग वायुयान निर्माण, विद्युत उपकरण निर्माण, घरेलु साज-सज्जा के सामानों का निर्माण, बर्तन बनाने, सफेद सीमेंट तथा रासायनिक वस्तुएँ बनाने में किया जाता है। भारत में बाक्साइट का अनुमानित भण्डार 3037 मिलियन टन है।

भारत में बाक्साइट उत्पादन :

वर्ष	उत्पादन हजार टन में
1951	68.4
1961	475.9
1971	1517.1
1981	1954.6
1991	4977.0
2004-05	11598.0
2005-06	12596
2006-07	15661
2007-08	24678 (अनुमानित)

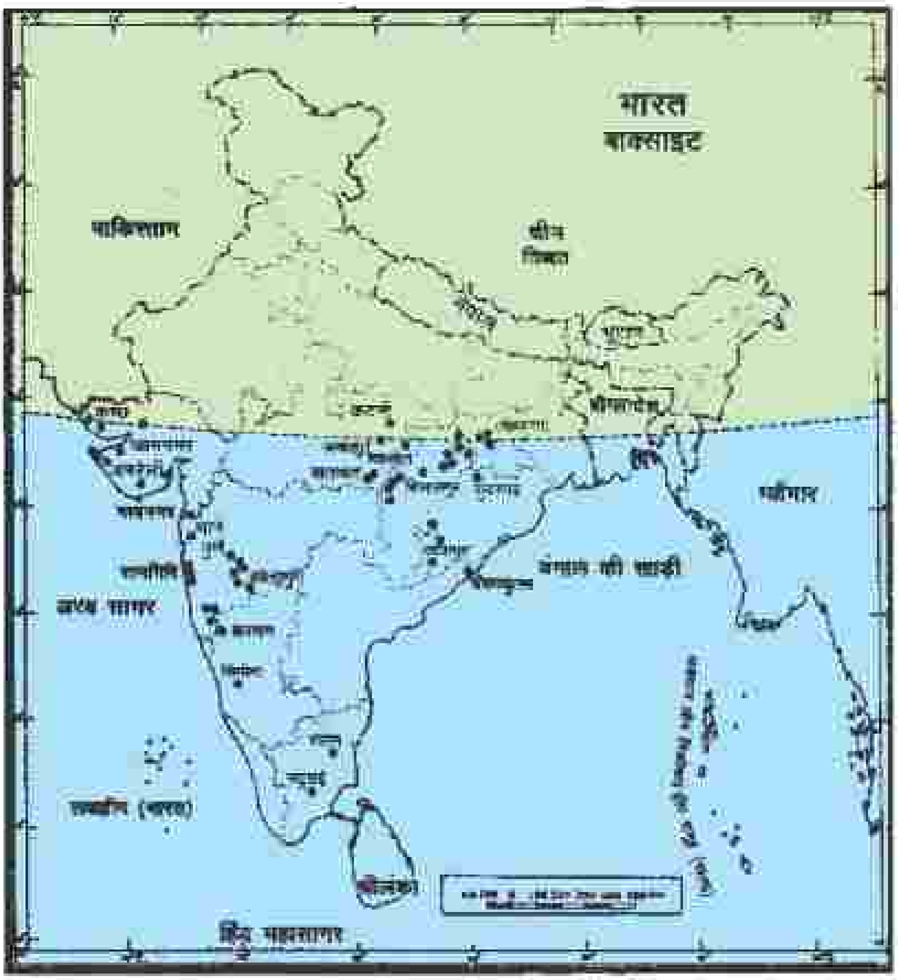

चित्र-1 (घ).6 : भारत में बाक्साइट का वितरण

वितरण :

बाक्साइट भारत के अनेक क्षेत्रों में मिलता है किन्तु मुख्य रूप से इसका भंडार उड़ीसा, गुजरात, झारखण्ड, महाराष्ट्र, छत्तीसगढ़, कर्नाटक, तमिलनाडु एवं उत्तर प्रदेश में अवस्थित है। देश का आधा से अधिक बाक्साइट का भंडार उड़ीसा राज्य में है। उड़ीसा भारत के कुल उत्पादन का 42 प्रतिशत बाक्साइट उत्पादन करता है। कालाहांडी, बोलंगीर, कोरापुट, सुन्दरगढ़ तथा संभलपुर बाक्साइट के मुख्य उत्पादक जिले हैं।

गुजरात भारत का 17.35 प्रतिशत बाक्साइट उत्पादन करके दूसरे स्थान पर है। जामनगर, कैरा, सबरकंठ, कच्छ तथा सूरत महत्वपूर्ण उत्पादक जिले हैं।

झारखण्ड बाक्साइट के उत्पादन में तीसरा स्थान रखता है तथा देश का 14 प्रतिशत बाक्साइट उत्पादन करता है। इसके लोहरदगा, राँची, लातेहार एवं पलामू मुख्य उत्पादक जिले हैं।

महाराष्ट्र के कोलाबा, रत्नागिरी तथा कोल्हापुर जिलों में बाक्साइट का खनन होता है तथा देश का 12 प्रतिशत उत्पादन करता है।

छत्तीसगढ़ भारत का 6 प्रतिशत से अधिक बॉक्साइट उत्पादन करता है। सरगुजा का पठारी प्रदेश, रायगढ़ तथा बिलासपुर जिले इसके उत्पादन के लिए प्रसिद्ध है।

अन्य उत्पादक राज्यों में **कर्नाटक** बाक्साइट के प्रमुख निक्षेप बेलगाम जिले में पाये जाते हैं। **तामिलनाडु** के नीलगिरि, सलेम, मदुरई और कोयम्बटूर जिले, **उत्तर प्रदेश** के बांदा जिले बॉक्साइट के अल्प उत्पादक है। **जम्मू और कश्मीर** के पुंछ एवं उधमपुर जिलों में उत्तम कोटि के बॉक्साइट पाए जाते हैं। भारत विभिन्न देशों को बॉक्साइट निर्यात करता है। मुख्य आयातक देश इटली, यू०के० जर्मनी एवं जापान हैं।

तांबा :

तॉबा एक अति उपयोगी अलौह धातु है। यह बिजली का अच्छा संचालक है जिससे इसका ज्यादा उपयोग विद्युत उपकरण बनाने में किया जाता है। इससे बर्तन एवं सिक्के भी बनाये जाते हैं। इसे अन्य धातुओं में मिलाकर अनेक सामान बनाये जाते हैं। भारत में तांबा का अभाव है। देश में ताँबे का कुल भण्डार 125 करोड़ टन है। 1951 में मात्र 3.75 लाख टन ताँबे का उत्पादन हुआ। 1990–91 में यह बढ़ कर 52.49 लाख टन हो गया, किन्तु 2000–01 में इसका उत्पादन घटकर कर 30.85 लाख टन रह गया है। हिन्दुस्तान कॉपर लिमिटेड तांबा का खनन एवं प्रगलन का कार्य करती है। झारखंड का पु० एवं प० सिंहभूम जिले ताँबा का सबसे बड़ा उत्पादक है। इसके अतिरिक्त झारखण्ड में हजारीबाग, पलामू आदि जिलों में अल्प

ताँबा उत्पाद

वर्ष	हजार टन में
2005–06	125
2006–07	150
2007–08	175

मात्रा में तांबा पाया जाता है। राजस्थान के खेतड़ी-सिंघाना मेखला में तांबे का विस्तृत क्षेत्र है। मध्य प्रदेश में बालाघाट तथा छत्तीसगढ़ में दुर्ग जिलों में तांबे की खानें हैं। इसके साथ ही आन्ध्र प्रदेश में खम्मन, गुंटूर तथा करनूल जिले, कर्नाटक में चित्रदुर्ग एवं हासन जिले और महाराष्ट्र के चंद्रापुर जिला में भी तांबा निकाले जाते हैं।

अधात्विक खनिज

भारत में धात्विक खनिजों के अतिरिक्त अनेक प्रकार के अधात्विक खनिजों के भण्डार हैं। इन खनिजों का औद्योगिक विकास में बड़ा ही योगदान है। देश में 2000-01 में 40 से अधिक अधात्विक खनिजों का व्यापारिक पैमाने पर उत्पादन हुआ है। आर्थिक रूप से अभ्रक, चूना-पत्थर, डोलोमाइट, फास्फेट, ग्रेफाइट, जिप्सम, मैग्नेसाइट आदि महत्वपूर्ण है।

अभ्रक

भारत विश्व में शीट अभ्रक का अग्रणी उत्पादक है। अब तक इलेक्ट्रॉनिक्स उद्योगों में इसका उपयोग होता रहा है, किन्तु कुछ कृत्रिम विकल्प आ जाने से अभ्रक के उत्पादन एवं निर्यात दोनों पर बुरा असर पड़ा है। वैसे तो प्राचीन काल से अभ्रक का उपयोग आयुर्वेदिक दवाओं के लिए किये जाते रहे हैं लेकिन विद्युत उपकरण में इसका खास उपयोग होता है क्योंकि यह विद्युत रोधक होने के कारण उच्च विद्युत शक्ति को सहन कर सकता है।

भारत में उत्पादन की दृष्टि से, अभ्रक निक्षेप की तीन पेटियाँ हैं, जो बिहार, झारखंड, अन्ध्र प्रदेश तथा राजस्थान राज्यों के अंतर्गत आती हैं। भारत में अभ्रक के कुल भण्डार 59065 टन है। 2002-03 में इसका उत्पादन 1217 टन था। बिहार झारखण्ड में उत्तम कोटि के रूबी अभ्रक का उत्पादन होता है। पश्चिम में गया जिले से हजारीबाग, मुंगेर होते हुए पूर्व में भागलपुर तक फैला हुआ है। इसके अतिरिक्त धनबाद, पलामू, राँची एवं सिंहभूम जिलों मे भी अभ्रक के भण्डार मिले हैं। बिहार झारखंड भारत का 80 प्रतिशत अभ्रक का उत्पादन करता है। आन्ध्रप्रदेश के नेल्लोर जिले में अभ्रक का उत्पादन होता है। राजस्थान देश का तीसरा अभ्रक उत्पादक राज्य है। यहाँ जयपुर, उदयपुर, भीलवाड़ा, अजमेर आदि जिलों में अभ्रक की पेटी फैली हुई है। संयुक्त राज्य अमेरिका भारतीय अभ्रक का मुख्य आयातक है।

चूना-पत्थर :

भारत के चूना पत्थर का 76 प्रतिशत सीमेंट 16 प्रतिशत लौह इस्पात तथा 4 प्रतिशत रसायन उद्योग में उपयोग किया जाता है। शेष 4 प्रतिशत का उपयोग उर्वरक, कागज एवं चीनी उद्योगों में होता है। देश का 35 प्रतिशत चूना पत्थर मध्यप्रदेश में पाया जाता है। अन्य उत्पादक राज्यों में - छत्तीसगढ़,आन्ध्र प्रदेश, गुजरात, राजस्थान, कर्नाटक, महाराष्ट्र,ओडिशा, बिहार, झारखंड, उत्तर प्रदेश आदि हैं।

खनिजों का आर्थिक महत्व :

पृथ्वी पर जैसे जल और थल अतिमहत्वपूर्ण खजाने हैं ठीक उतने ही महत्वपूर्ण खनिज संसाधन भी हैं। खनिज संसाधन के अभाव में देश के औद्योगिक विकास को गति एवं दिशा नहीं दे सकते। फलत: देश का आर्थिक विकास अवरूद्ध हो सकता है। विश्व के बहुत से देशों में खनिज संपदा राष्ट्रीय आय के प्रमुख स्रोत बने हुए हैं। खनिजों की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि एक बार उपयोग में आने के पश्चात ये लगभग समाप्त हो जाते हैं। इसका संबंध हमारे वर्तमान एवं भविष्य के कल्याण से है। खनिज ऐसे क्षयशील संसाधन हैं, जिन्हें दोबारा नवीनीकृत नहीं किया जा सकता। अत: खनिजों के संरक्षण की परम आवश्यकता है।

खनिजों का संरक्षण :

खनिज क्षयशील एवं अनवीकरणीय संसाधन हैं। इनकी मात्रा सीमित है। इनका पुनर्निमाण असंभव है। खनिज उद्योगों का आधार है, किन्तु औद्योगिक विकास के लिए खनिजों का अतिशय दोहन एवं उपयोग उनके अस्तित्व के लिए संकट है। अत: खनिजों का संरक्षण एवं प्रबंधन आवश्यक है। खनिज संसाधन के विवेक पूर्ण उपयोग तीन बातों पर निर्भर है- खनिजों के निरंतर दोहन पर नियंत्रण, उनका बचत पूर्वक उपयोग तथा कच्चे माल के रूप में सस्ते विकल्पों की खोज। खनिजों पर नियंत्रण के अलावे उनके विकल्पों को खोजना, खनिजों के अपशिष्ट पदार्थों का बुद्धिमत्तापूर्ण उपयोग, पारिस्थितिकी पर पड़ने वाले कुप्रभाव पर नियंत्रण, खनिज निर्माण के लिए चक्रीय पद्धति को अपनाना प्रबंधन कहलाता है। अगर खनिजों के संरक्षण के साथ-साथ प्रबंधन पर ध्यान दिया जाये तो खनिज संकट से निबटा जा सकता है।

अभ्यास-प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न :-

1. भारत में लगभग कितने खनिज पाये गये हैं ?

(क) 50 (ख) 100

(ग) 150 (घ) 200

2. इन में से कौन लौह युक्त खनिज का उदाहरण है?

(क) मैंगनीज (ख) अभ्रक

(ग) बॉक्साइट (घ) चूना-पत्थर

3. निम्नलिखित में कौन अधात्विक खनिज का उदाहरण है?

(क) सोना (ख) टिन

(ग) अभ्रक (घ) ग्रेफाइट

4. किस खनिज को उद्योगों की जननी माना गया है ?

(क) सोना (ख) तांबा

(ग) लोहा (घ) मैंगनीज

5. कौन लौह अयस्क का एक प्रकार है?

(क) लिगनाइट (ख) हेमाटाइट

(ग) बिटुमिनस (घ) इन में से सभी।

6. कौन भारत का सबसे बड़ा लौह उत्पादक राज्य है?

(क) कर्नाटक (ख) गोवा

(ग) उड़ीसा (घ) झारखंड

7. छत्तीसगढ़ भारत का कितना प्रतिशत लौह अयस्क उत्पादन करता है?

(क) 10 (ख) 20

(ग) 30 (घ) 40

8. मैंगनीज उत्पादन में भारत का विश्व में क्या स्थान है?

(क) प्रथम (ख) द्वितीय

(ग) तृतीय (घ) चतुर्थ

9. एक टन इस्पात बनाने में कितने मैंगनीज का उपयोग होता है?

(क) 5 कि०ग्रा० (ख) 10कि०ग्रा०

(ग) 15कि०ग्रा० (घ) 20कि०ग्रा०

10. उड़ीसा किस खनिज का सबसे बड़ा उत्पादक है?

(क) लौह अयस्क (ख) मैंगनीज

(ग) टिन (घ) ताँबा

11. अल्युमिनियम बनाने के लिए किस खनिज की आवश्यकता पड़ती है?

(क) मैंगनीज (ख) टिन

(ग) लोहा (घ) बॉक्साइट

12. देश में तांबे का कुल भण्डार कितना है

(क) 100 करोड़ टन (ख) 125 करोड़

(ग) 150 करोड़ टन (घ) 175 करोड़ टन

13. बिहार-झारखण्ड में देश का कितना प्रतिशत अभ्रक का उत्पादन होता है?

(क) 60 (ख) 70

(ग) 80 (घ) 90

14. सीमेंट उद्योग का सबसे प्रमुख कच्चा माल क्या है?

(क) चूना-पत्थर (ख) बाक्साइट

(ग) ग्रेनाइट (घ) लोहा

लघु उत्तरीय प्रश्न :

1. खनिज क्या है?
2. धात्विक खनिज के दो प्रमुख पहचान क्या हैं?
3. खनिजों की विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।
4. लौह अयस्क के प्रकारों के नाम लिखिए।
5. लोहे के प्रमुख उत्पादक राज्यों के नाम लिखिए।
6. झारखंड के मुख्य लौह उत्पादक जिलों के नाम लिखिए।
7. मैंगनीज के उपयोग पर प्रकाश डालिए।
8. अल्यूमिनियम के उपयोग का उल्लेख कीजिए।
9. अभ्रक का उपयोग क्या है?
10. चूना-पत्थर की क्या उपयोगिता है?
11. खनिजों की मुख्य विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।
12. खनिजों के संरक्षण एवं प्रबंधन से क्या समझते हैं?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न :

1. खनिज कितने प्रकार के होते हैं? प्रत्येक का सोदाहरण परिचय दीजिये।
2. धात्विक एवं अधात्विक खनिजों में क्या अंतर है? तुलना कीजिये।
3. भारत की खनिज पेटियों का नाम लिखकर किन्हीं दो का वर्णन कीजिये ।
4. लौह अयस्क का वर्गीकरण कर उनकी विशेषताओं को लिखिये।
5. भारत में लौह अयस्क के वितरण पर प्रकाश डालिये।
6. मैंगनीज अथवा बाक्साइट की उपयोगिता तथा देश में इनके वितरण का वर्णन कीजिये।
7. अभ्रक की उपयोगिता एवं वितरण पर प्रकाश डालिये।
8. खनिजों के संरक्षण के उपाय सुझाइये।

मानचित्र कार्य

1. भारत के एक मानचित्र पर महत्वपूर्ण खनिजों के वितरण को दर्शाइये।
2. लौह अयस्क के मुख्य उत्पादक केन्द्रों को भारत के मानचित्र में अंकित कीजिये।
3. पूरे पृष्ठ पर भारत का मानचित्र बनाकर निम्नलिखित को दिखाइये:-

   मैंगनीज, बाक्साइट तथा ताँबा उत्पादक क्षेत्र ।
4. विभिन्न चट्टानों तथा खनिजों के टुकड़े उपलब्ध कर भूगोल प्रयोगशाला में संग्रह कीजिये।

प्रयोग कीजिये :-

(क) प्लाईउड या गत्ते पर निर्मित भारत का मानचित्र तैयार कर विभिन्न खनिजों के उत्पादक स्थान पर अलग-अलग रंग का बल्ब लगाइये तथा प्रत्येक खनिज हेतु एक एक स्वीच लगाइये। अब किसी एक खनिज का स्वीच दबाने पर वह मानचित्र में बल्ब जल उठेगा और हम समझ सकते हैं कि कौन खनिज कहाँ पाया जाता है।

(ख) खनिजों की महत्ता, उपलब्धता एवं संरक्षण के संबंध में अपने भूगोल शिक्षक से विमर्श कीजिये।

(ग) शिक्षक-अभिभावक की आज्ञा लेकर अपने पड़ोसी राज्यों के खनिज बहुल क्षेत्रों का भ्रमण, खनिजों का अवलोकन तथा उनका संग्रह कीजिये।

(ङ) शक्ति (ऊर्जा) संसाधन

शक्ति अर्थात ऊर्जा विकास की कुंजी है। मानव सदियों से अपने विभिन्न क्रिया-कलाप हेतु शक्ति (Energy) के जैव एवं अजैव रूपों का प्रयोग करते आ रहा है। मानव ने प्रारम्भिक चरणों में अपने शारीरिक शक्ति का प्रयोग किया, फिर पशुओं को परिवहन के कार्य में प्रयुक्त किया। मानव के आर्थिक क्रिया-कलाप के वर्धन के साथ ही ऊर्जा या शक्ति के नये-नये स्रोतों की खोज हुई। मशीनों को चलाने के लिए पवन चक्की का उपयोग किया जाने लगा। शक्ति के साधनों का वास्तविक विकास 18 वीं शताब्दी में औद्योगिक क्रान्ति के साथ शुरू हुआ। कोयले का उपयोग कर वाष्प-शक्ति का विकास इंग्लैण्ड में हुआ। शीघ्र ही इसका प्रसार यूरोप के अन्य देशों में हो गया। समय बीतने के साथ ऊर्जा के नये स्रोत विकसित हुए। पेट्रोलियम ने कोयले का स्थान ले लिया। कालांतर में परमाणु शक्ति का विकास किया गया। आज शक्ति अथवा ऊर्जा के स्रोत ही विकास एवं औद्योगिकरण के आधार हैं। यही कारण है कि कोयला, पेट्रोलियम, प्राकृतिक गैस, जल विद्युत एवं आणविक ऊर्जा स्रोतों को "वाणिज्यिक ऊर्जा स्रोत" कहा जाता है।

शक्ति संसाधन के प्रकार :

शक्ति संसाधन के वर्गीकरण के विविध आधार हो सकते हैं। उपयोग स्तर के आधार पर शक्ति के दो प्रकार हैं- सतत् शक्ति एवं समापनीय शक्ति। सौर किरणें, भूमिगत उष्मा, पवन, प्रवाहित जल आदि सतत् शक्ति स्रोत हैं जबकि कोयला, पेट्रोलियम, प्राकृतिक गैस एवं विखण्डनीय तत्व समापनीय शक्ति स्रोत के उदाहरण हैं।

उपयोगिता के आधार पर ऊर्जा को दो भागों में विभक्त किया जाता है। पहला प्राथमिक ऊर्जा, जैसे- कोयला, पेट्रोलियम, प्राकृतिक गैस तथा रेडियोधर्मी खनिज आदि तथा दूसरा गौण ऊर्जा, जैसे- विद्युत, क्योंकि यह प्राथमिक ऊर्जा से प्राप्त किया जाता है।

स्रोत की स्थिति के आधार पर शक्ति संसाधन को दो भागों में वर्गीकृत किया जाता है। पहला क्षयशील शक्ति संसाधन जैसे-कोयला, पेट्रोलियम, प्राकृतिक गैस तथा आण्विक खनिज आदि

तथा दूसरा अक्षयशील शक्ति संसाधन, जैसे- प्रवाही जल, पवन, लहरें, सौर शक्ति आदि। संरचनात्मक गुणों के आधार पर ऊर्जा के दो स्रोत हैं- जैविक ऊर्जा स्रोत तथा अजैविक ऊर्जा स्रोत। मानव एवं प्राणी शक्ति को जैविक तथा जल शक्ति, पवन-शक्ति, सौर शक्ति तथा ईंधन शक्ति (खनिज ऊर्जा) आदि को अजैविक शक्ति स्रोत के अन्तर्गत रखा जाता है। शक्ति के स्रोतों को समय के आधार पर पारम्परिक तथा गैर पारम्परिक शक्ति संसाधन के रूप में वर्गीकृत किया जाता है। कोयला, पेट्रोलियम तथा प्राकृतिक गैस पारम्परिक तथा सूर्य, पवन, ज्वार, परमाणु ऊर्जा तथा गर्म झरने आदि गैर पारम्परिक शक्ति संसाधन के उदाहरण हैं।

आधुनिक काल में शक्ति के मुख्य स्रोतों में कोयला, पेट्रोलियम, प्राकृतिक गैस, प्रवाहित जल एवं आण्विक खनिज के अध्ययन के साथ-साथ सौर शक्ति, पवन शक्ति, ज्वारीय शक्ति, भूतापीय शक्ति तथा जैव शक्ति का भी अध्ययन आवश्यक हो गया है।

पारम्परिक ऊर्जा (शक्ति) स्रोत :

कोयला, पेट्रोलियम, प्राकृतिक गैस जैसे खनिज ईंधन जो जीवाश्म ईंधन के नाम से भी जाने जाते हैं ये पारम्परिक शक्ति संसाधन हैं तथा ये समाप्य संसाधन है।

कोयला (Coal) :

कोयला शक्ति और ऊर्जा का महत्वपूर्ण स्रोत है। 1 जनवरी 2008 तक भारत में 1200 मीटर की गहराई तक पाये जाने वाले कोयले का कुल अनुमानित भण्डार 26,454 करोड़ टन आंका गया है। 2007-08 में कोयले का कुल उत्पादन 456.373 मिलियन टन था।

भूगर्भिक दृष्टि से भारत के समस्त कोयला भण्डार को दो मुख्य भागों में बांटा जा सकता है:-

1. गोंडवाना समूह : इस समूह में भारत के 96 प्रतिशत कोयले का भण्डार है तथा कुल उत्पादन का 99 प्रतिशत भाग प्राप्त होता है। यहाँ के कोयले का निर्माण लगभग 20 करोड़ वर्ष पूर्व में हुआ था। गोंडवाना कोयला क्षेत्र मुख्यतः चार नदी-घाटियों में पाये जाते हैं- 1. दामोदर घाटी, 2. सोन घाटी, 3. महानदी घाटी तथा 4. वार्धा-गोदावरी घाटी।

2. टर्शियरी समूह : गोंडवाना समूह के बाद टर्शियरी समूह के कोयले का निर्माण हुआ। यह 5.5 करोड़ वर्ष पुराना है। टर्शियरी कोयला मुख्यतः असम, अरूणाचल प्रदेश, मेघालय और नागालैण्ड में पाया जाता है।

कोयले का वर्गीकरण :

कार्बन की मात्रा के आधार पर कोयला को चार वर्गों में रखा गया है :

1. एंथ्रासाइट (Anthracite) : यह सर्वोच्च कोटि का कोयला है जिसमें कार्बन की मात्रा 90% से अधिक होती है। जलने पर यह धुआँ नहीं देता तथा देर तक अत्यधिक उष्मा देता है। इसे कोकिंग कोयला भी कहा गया है तथा धातु गलाने में काम आता है।

2. बिटुमिनस (Bituminus) : यह 70 से 90% कार्बन की मात्रा धारण किये हुए रहता है तथा इसे परिष्कृत कर कोकिंग कोयला बनाया जा सकता है। भारत का अधिकतर कोयला इस श्रेणी का है।

3. लिग्नाइट (Lignite) : यह निम्न कोटि का कोयला माना जाता है जिसमें कार्बन की मात्रा 30 से 70% होता है। यह कम उष्मा तथा अधिक धुआँ देता है। इसे भूरा-कोयला भी कहते हैं।

4. पीट (Peat) : इसमें कार्बन की मात्रा 30% से भी कम पाया जाता है। यह पूर्व के दलदली भागों में पाया जाता है।

वर्ष	उत्पादन मिलियन टन में
2005-06	407
2006-07	431
2007-08	456
2021-22	778

गोंडवाना समूह का कोयला क्षेत्र

झारखण्ड - कोयले के भण्डार एवं उत्पादन की दृष्टि से झारखण्ड का देश में पहला स्थान है। यहाँ देश का 30 प्रतिशत से भी अधिक कोयला का सुरक्षित भण्डार है तथा उत्पादन 23 प्रतिशत से अधिक है। झरिया, बोकारो, गिरिडीह, कर्णपुरा, रामगढ़ इस राज्य के प्रमुख उत्पादक क्षेत्र हैं। पश्चिम बंगाल के रानीगंज कोयला क्षेत्र का कुछ भाग इसी राज्य में पड़ता है।

धातु उद्योग में उपयोग किया जाने वाला कोयला इन्हीं दामोदर घाटी क्षेत्र से ही प्राप्त किया जाता है। लोहा इस्पात कारखाने को अधिकतर कोकिंग कोल भी इन्हीं क्षेत्रों से प्राप्त होता है। इस कोयला क्षेत्र का महत्व अब घटता जा रहा है। 1970 में इस क्षेत्र से देश का 47 प्रतिशत कोयले का उत्पादन हुआ जबकि 2004-05 में यह घट कर मात्र 23 प्रतिशत रह गया है।

चित्र-1 (ङ).1 भारत के प्रमुख कोयला क्षेत्र

छत्तीसगढ़ – सुरक्षित भण्डार की दृष्टि से इस राज्य का स्थान तीसरा किन्तु उत्पादन में यह भारत का दूसरा बड़ा राज्य है। यहाँ देश का 15 प्रतिशत सुरक्षित भण्डार है लेकिन उत्पादन 16 प्रतिशत होता है। उत्तरी छत्तीसगढ़ के मुख्य कोयला क्षेत्र चिरिमिरी, कुरसिया, विश्रामपुर, झिलमिली, सोनहाट, लखनपुर आदि हैं। हासदो-अरंड कोरबा एवं मांड्-रायगढ़ दक्षिणी छत्तीसगढ़ के कोयला क्षेत्र हैं।

उड़ीसा - उड़ीसा में देश का एक चौथाई कोयले का भण्डार है पर उत्पादन मात्र 14.6 प्रतिशत ही होता है। तालचर में कोयले का विशाल भण्डार है पर यह उच्च कोटि के न होने के कारण भाप एवं गैस बनाने के काम में आता है।

महाराष्ट्र - यहाँ भारत का मात्र 3 प्रतिशत कोयला सुरक्षित है पर उत्पादन देश का 9 प्रतिशत से भी अधिक होता है। इस राज्य में अधिकतर कोयला चाँदा-वर्धा, कांपटी तथा बंदेर से प्राप्त होता है।

मध्य प्रदेश - इस राज्य में देश का मात्र 7 प्रतिशत कोयले का भण्डार है क्योंकि अधिकांश कोयला क्षेत्र छत्तीसगढ़ में चला गया है। यहाँ अब प्रमुख कोयला उत्पादन सिंगरौली, सोहागपुर, जोहिल्ला तथा उमरिया में होता है। दूसरा कोयला उत्पादक सतपुड़ा क्षेत्र का पेंच-कान्हन, पथखेड़ा एवं मोहपानी हैं।

पश्चिम बंगाल - यह राज्य सुरक्षित भण्डार की दृष्टि से देश का चौथा एवं उत्पादन में सातवाँ स्थान रखता है। रानीगंज सबसे महत्वपूर्ण कोयला क्षेत्र है जिसका कुछ भाग झारखण्ड में पड़ गया है । कुछ कोयला दार्जिलिंग में भी पैदा किया जाता है।

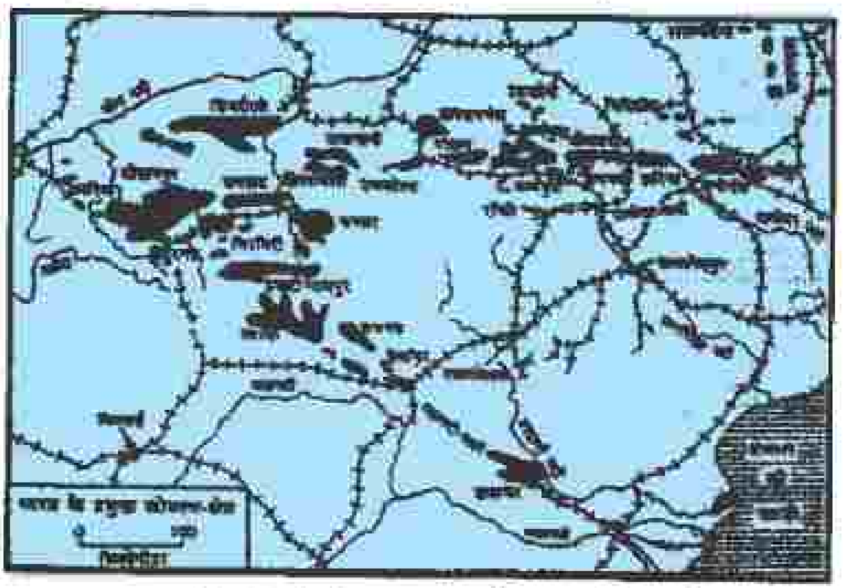

चित्र-1 (ङ).2 : भारत के प्रमुख कोयला क्षेत्र

टर्शियरी कोयला क्षेत्र :

टर्शियरी युग में बना कोयला नया एवं घटिया किस्म का होता है। यह कोयला मेघालय में दारागिरी, चेरापूंजी, लेतरिंग्यू, माओलौंग और लांगरिन क्षेत्र से निकाला जाता है। ऊपरी असम में माकुम, जयपुर, नजिरा आदि कोयले के क्षेत्र हैं। अरूणाचल प्रदेश में नामचिक और नामरूक कोयला क्षेत्र है। जम्मू और कश्मीर में कालाकोट से कोयला निकाला जाता है।

चित्र-1 (ङ).3 : परंपरागत ऊर्जा स्रोत

लिग्नाइट कोयला क्षेत्र :

यह एक निम्न कोटि का कोयला होता है। इसमें नमी ज्यादा तथा कार्बन कम होता है अतः धुआँ अधिक देता है। लिग्नाइट कोयले का भण्डार मुख्य रूप से तमिलनाडु के लिग्नाइट बेसिन में पाया जाता है। यहाँ देश का ९४ प्रतिशत लिग्नाइट कोयले का सुरक्षित भण्डार है। यहाँ नेवेली लिग्नाइट कार्पोरेशन लिमिटेड कोयले का खनन करती है। यह कोयला राजस्थान, गुजरात एवं जम्मू एवं काश्मीर में पाया जाता है।

पेट्रोलियम :

पेट्रोलियम शक्ति के समस्त साधनों में सर्वाधिक महत्वपूर्ण एवं व्यापक रूप से उपयोगी संसाधन है। आधुनिक युग में कोई भी राष्ट्र इसके बिना अपने अस्तित्व को कायम नहीं रख सकता। पेट्रोलियम शक्ति के स्रोत के साथ-साथ अनेक उद्योगों का कच्चा माल भी है। इससे विभिन्न प्रकार की वस्तुएँ जैसे–गैसोलीन, डीजल, किरासन तेल, स्नेहक, कीटनाशक दवाएँ, दवाएँ, पेंट्रोल, साबुन, कृत्रिम रेशा, प्लास्टिक आदि बनाए जाते हैं।

भारतीय भूगर्भ सर्वेक्षण विभाग के अनुमान के अनुसार भारत में पेट्रोलियम और प्राकृतिक गैस के कुल भण्डार 17 अरब टन हैं। भारत विश्व का मात्र 1 प्रतिशत पेट्रोलियम उत्पादन करता है। भारत में प्रथम बार 1866 में ऊपरी असम घाटी में तेल के कुँए खोदे गये। 1890 में डिगबोई क्षेत्र में तेल मिल गया था। 1959 में खम्भात के तेल क्षेत्र की खोज हुई। 1975 ई० में मुम्बई हाई में तेल का पता चल गया। इसके बाद भारत में पेट्रोलियम के उत्पादन में वृद्धि होने लगी।

तेल क्षेत्रों का वितरण :

भारत में मुख्यतः पाँच तेल उत्पादक क्षेत्र हैं :

1. **उत्तरी-पूर्वी प्रदेश** : यह देश का सबसे पुराना तेल उत्पादक क्षेत्र है, जहाँ 1866 ई० में तेल के लिए खुदाई शुरू की गई थी। लगभग एक शताब्दी तक यह भारत का एक मात्र तेल उत्पादक क्षेत्र था। ऊपरी असम घाटी, अरूणाचल प्रदेश, नागालैण्ड आदि के विशाल तेल क्षेत्र इसके अन्तर्गत आते हैं। इस क्षेत्र के महत्वपूर्ण उत्पादक डिगबोई, नहरकटिया, मोरान, रुद्रसागर आदि हैं। अरूणाचल प्रदेश का निगरू और नागालैण्ड का बोरहोल्ला तेल क्षेत्र उल्लेखनीय हैं।

2. गुजरात क्षेत्र : यह क्षेत्र खम्भात के बेसिन तथा गुजरात के मैदान में विस्तृत है। यहाँ पहलीबार 1958 में तेल का पता चला था। इसके मुख्य उत्पादक अंकलेश्वर, कलोल, नवगाँव, कोसांबा, मेहसाना आदि हैं।

3. मुम्बई हाई क्षेत्र : यह क्षेत्र मुम्बई तट से 176 किलोमीटर दूर उत्तर-पश्चिम दिशा में अरब सागर में स्थित है। यहाँ 1975 में तेल खोजने का कार्य शुरू हुआ। यहाँ समुद्र में सागर सम्राट

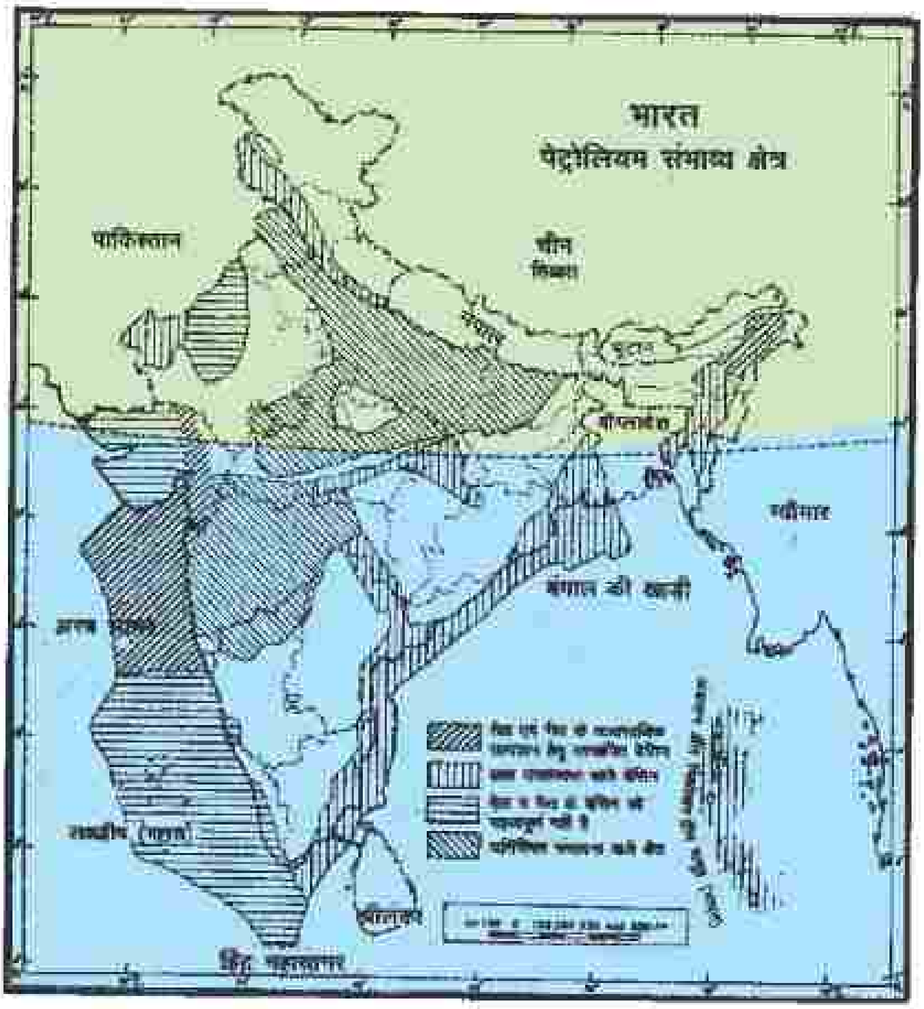

चित्र-1(ङ).4 : भारत : पेट्रोलियम संभाव्य क्षेत्र

नामक मंच बनाया गया है जो एक जलयान है और पानी के भीतर तेल के कुएँ खोदने का कार्य करता है। यहाँ 80 करोड़ टन तेल के भण्डार का अनुमान है। यहाँ का कच्चा तेल पाइप द्वारा स्थल पर पहुँचाकर परिष्कृत किया जाता है। इस क्षेत्र से 2004-05 में 22,424 हजार टन तेल का उत्पादन हुआ जो भारत के कुल उत्पादन का 66 प्रतिशत है।

इस क्षेत्र के दक्षिण एक और तेल क्षेत्र का पता चला है जिसका भण्डार मुम्बई हाई से भी बड़ा है।

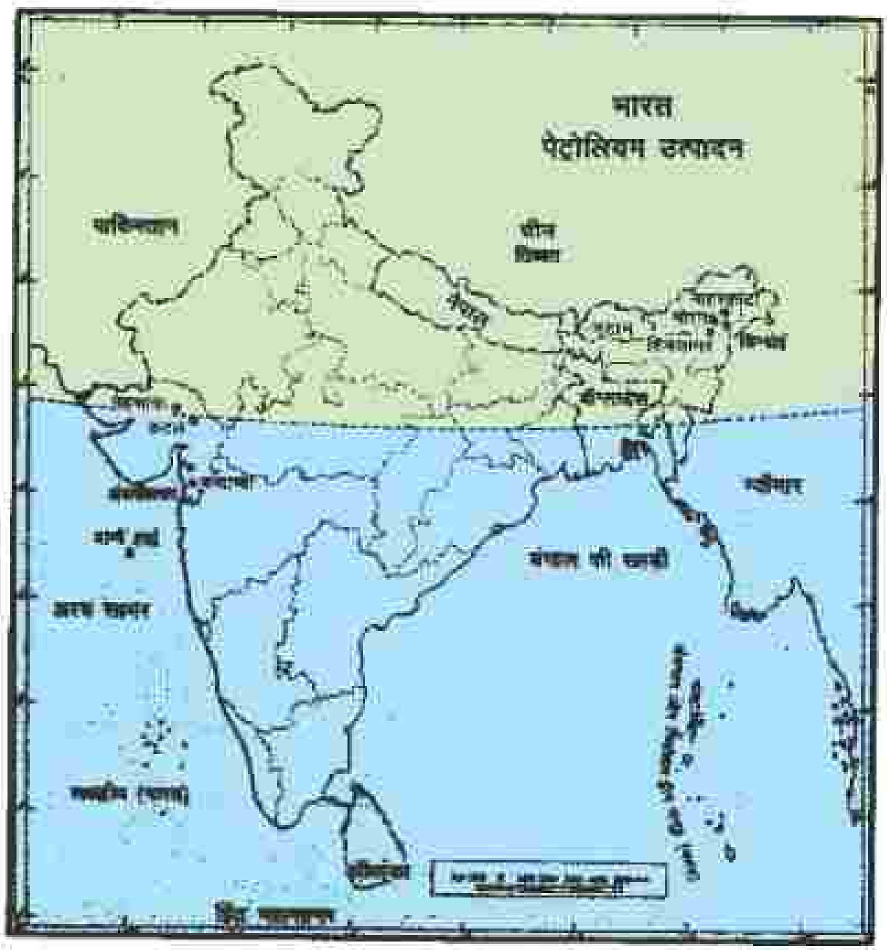

चित्र-1 (छ).5 : भारत में पेट्रोलियम उत्पादन क्षेत्र

4. पूर्वी तट प्रदेश : यह कृष्णा-गोदावरी और कावेरी नदियों के बेसिन तथा मुहाने के समुद्री क्षेत्र में फैला हुआ है। नारीमनम और कोविलतपल कावेरी प्रदेश के मुख्य तेल क्षेत्र हैं। कुछ समय पूर्व गोदावरी-कृष्णा क्षेत्र में भी तेल की खोज हुई है।

5. बाड़मेर बेसिन : इस बेसिन के मंगला तेल क्षेत्र से सितम्बर 2009 से उत्पादन शुरू हो गया है। यहाँ प्रतिदिन 56000 बैरल तेल का उत्पादन हो रहा है। 2012 तक यह क्षेत्र भारत का 20 प्रतिशत पेट्रोलियम उत्पादन करेगा।

तेल परिष्करण :

कुओं से निकाला गया कच्चा तेल अपरिष्कृत एवं अशुद्ध होता है अतः उपयोग के पूर्व उसे तेल शोधक कारखानों में परिष्कृत किया जाना आवश्यक होता है। उसके बाद ही डीजल, पेट्रोल, किरासन तेल, स्नेहक पदार्थ तथा अन्य कई वस्तुएँ प्राप्त होती हैं। 1901 ई० में भारत का प्रथम तेल शोधक कारखाना असम के डिगबोई में स्थापित हुआ था। 1954 ई० में दूसरी परिष्करणशाला मुम्बई में स्थापित किया गया। इसके बाद तेल शोधन में भारत ने काफी विकास किया है। आज देश में 18 तेल परिष्करणकेन्द्र कार्य कर रही हैं।

प्राकृतिक गैस :

प्राकृतिक गैस हमारे वर्तमान जीवन में बड़ी तेजी से एक महत्वपूर्ण ईंधन बनता जा रहा है। इसका उपयोग विभिन्न उद्योगों में मशीन को चलाने में, विद्युत उत्पादन में, खाना पकाने में तथा मोटर गाड़ियाँ चलाने में किया जा रहा है।

भारत में एक अनुमान के अनुसार प्राकृतिक गैस की संचित राशि 700 अरब घन मीटर है। वर्ष 1984-85 में कुल उत्पादन 723 करोड़ घन मीटर था जो 2004-05 में बढ़कर 3082 करोड़ घन मीटर हो गया। वहीं 2021-22 में 28.67 बिलियन घन मीटर प्राकृतिक गैस का उत्पादन हुआ ।

प्रायः पेट्रोलियम उत्पादन क्षेत्र में से ही प्राकृतिक गैस भी मिलते हैं। 1984 में प्राकृतिक गैस प्राधिकरण की स्थापना देश के प्राकृतिक गैसों के परिवहन, वितरण एवं विपणन हेतु किया गया जो 5340 किलोमीटर गैस पाइप लाइन द्वारा देश भर में फैले उपभोक्ताओं की आवश्यकता की पूर्ति करता है।

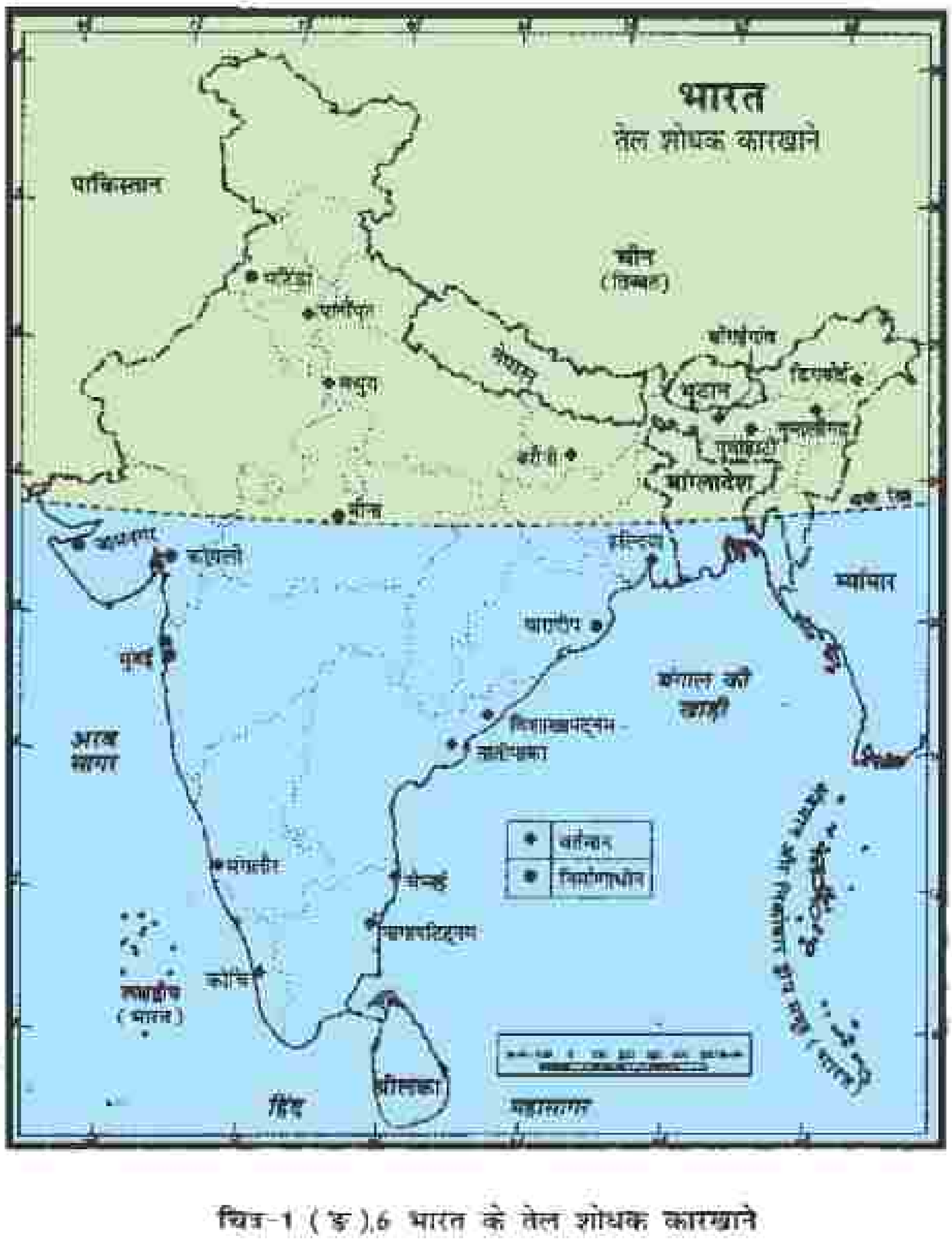

चित्र-1 (ङ).6 भारत के तेल शोधक कारखाने

विद्युत शक्ति :

विद्युत शक्ति ऊर्जा का एक महत्वपूर्ण स्रोत वर्तमान विश्व में विद्युत के प्रति-व्यक्ति उपभोग को विकास का एक सूचकांक माना जाता है। प्रवहमय जल स्रोत से उत्पन्न शक्ति को जल विद्युत कहते हैं। जब विद्युत के उत्पादन में कोयला, पेट्रोलियम या प्राकृतिक गैस से प्राप्त ऊष्मा का उपयोग किया जाता है तो उसे ताप विद्युत कहते हैं। इसके अतिरिक्त विद्युत का उत्पादन आण्विक खनिजों के विखण्डन से भी किया जाता है। जिसे परमाणु विद्युत कहा जाता है। यह भी ताप विद्युत का ही एक रूप है।

जल विद्युत :

परम्पराओं से जल का प्रयोग शक्ति संसाधन के रूप में किया जाता रहा है। प्रारम्भ में जल से ऊर्जा प्राप्त करने की प्रक्रिया पवन चक्रियों द्वारा की जाती थी। किन्तु 20वीं सदी में सीमेंट, डायनेमो तथा पोर्टलैण्ड सीमेंट द्वारा नदियों को बाँधने की प्रक्रिया का आविष्कार ने जल विद्युत के विकास को तीव्रतर बना दिया। जल एक अक्षयशील एवं नवीकरणीय संसाधन है जिससे उत्पन्न शक्ति प्रदूषण मुक्त होती है।

जल विद्युत उत्पादन के लिए सदावाहिनी नदी में प्रचुर जल की राशि, नदी मार्ग में ढाल, जल का तीव्र वेग, प्राकृतिक जल-प्रपात का होना अनुकूल भौतिक दशाएँ हैं जो पर्वतीय एवं हिमानीकृत क्षेत्रों में पाया जाता है। इसके उत्पादन की आर्थिक दशाएँ, जैसे–सघन औद्योगिक, विकास, वाणिज्यिक विकास एवं आबाद क्षेत्रों, जैसे, बाजार, पर्याप्त पूंजी निवेश, परिवहन के साधन, प्राविधिक ज्ञान एवं ऊर्जा के अन्य स्रोतों का अभाव प्रमुख है।

भारत में सन् 1897 ई० में दार्जिलिंग में प्रथम जल विद्युत संयंत्र की स्थापना हुई थी। इसके बाद कर्नाटक के शिवसमुद्रम् में कावेरी नदी के जल प्रपात पर दूसरे जल विद्युत संयंत्र की स्थापना हुई। 1930 तक पश्चिम घाट पर्वतीय क्षेत्र, उत्तर प्रदेश, हिमाचल प्रदेश, तमिलनाडु एवं कर्नाटक आदि राज्यों में कई जल विद्युत संयंत्र स्थापित हो चुके थे। 1947 तक भारत में 508 मेगावाट बिजली उत्पादन की जाने लगी। इसके पश्चात स्वतंत्र भारत में पंचवर्षीय योजनाओं के तहत इस दिशा में सघन प्रयास किये गये। कई बहुउद्देशीय योजनाओं को संचालित किया गया ताकि विद्युत शक्ति का समुचित और शीघ्र विकास हो सके।

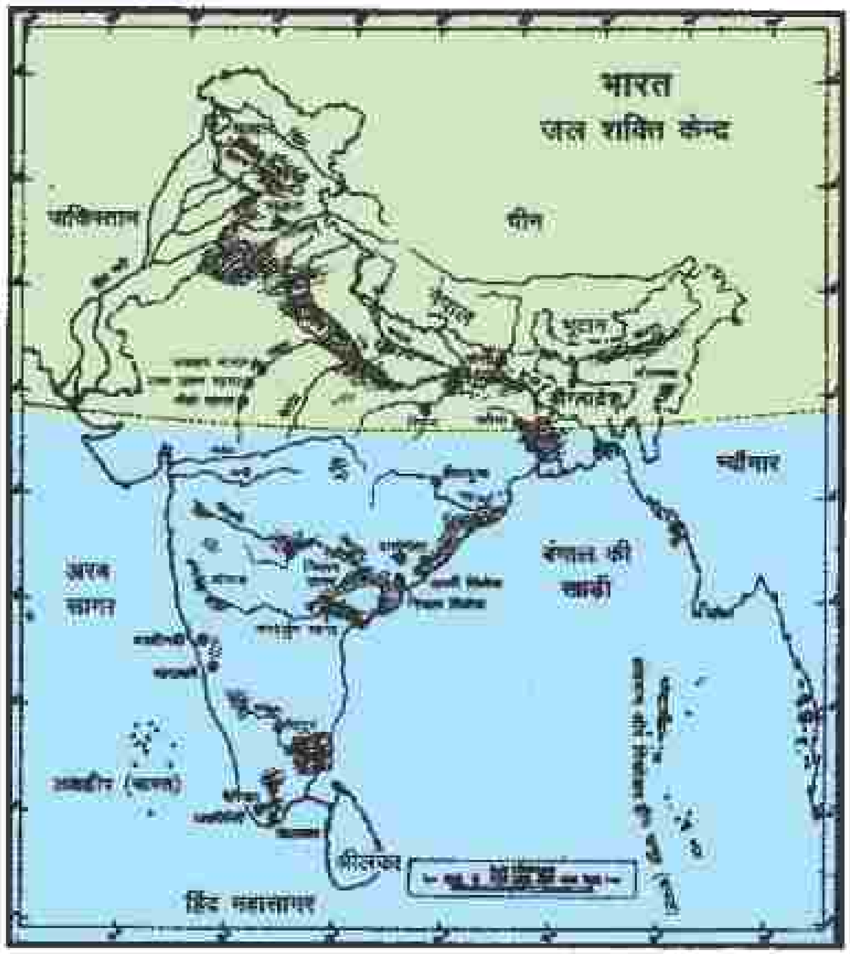

मानचित्र जल शक्ति केन्द्र

वितरण एवं मुख्य जल-विद्युत परियोजनाएँ :

2003-04 में विद्युत उत्पादन (बिलियम यूनिटन में)	
तापीय विद्युत	467
जल विद्युत	64
परमाणु	17
कुल	548

नदियों पर बराज बनाकर ऐसा उपाय करना जिससे सिंचाई के साथ बिजली उत्पन्न करना (पन बिजली), बाढ़ को रोकथाम करना, मिट्टी का कटाव रोकना, मछली पालन, नहर के निर्माण द्वारा यातायात की सुविधा बढ़ाना और पर्यटन उद्योग हेतु

रमणिक स्थानों का निर्माण आदि अनेक लाभ एक ही समय साथ-साथ लिए जा सकें तो ऐसी परियोजना बहुमुखी, बहुधंधी या बहुउद्देशीय परियोजना कहलाती है। भारत में ऐसी मुख्य परियोजनाओं का अध्ययन जल शक्ति के वितरण पर प्रकाश डालते हैं।

क्या आप जानते हैं?
विद्युत के यथार्थ स्थापित क्षमता और वास्तविक उत्पादन के बीच अन्तर बना रहता है। विद्युत उत्पादन और उपयोग को यूनिट में भी बताया जा सकता है। एक यूनिट का अर्थ है 1000 वाट बिजली का एक घंटा तक इस्तेमाल।

1. भाखड़ा-नंगल परियोजना : सतलज नदी पर हिमालय क्षेत्र में विश्व के सर्वोच्च बांधों में एक भाखड़ा बाँध की ऊँचाई 225 मीटर है। यह भारत की सबसे बड़ी परियोजना है, जहाँ चार शक्ति-गृह बनाये गये हैं। एक भाखड़ा में, दो गंगुवाल में और एक कोटला में स्थापित होकर 7 लाख किलोवाट विद्युत उत्पादन कर पंजाब, हरियाणा, दिल्ली, उत्तराखण्ड, उत्तर प्रदेश, हिमाचल प्रदेश, राजस्थान तथा जम्मू व कश्मीर राज्यों के कृषि एवं उद्योगों में क्रांतिकारी परिवर्तन ला दिया है।

2. दामोदरघाटी परियोजना : यह परियोजना दामोदर नदी के भयंकर बाढ़ से झारखण्ड एवं पश्चिम बंगाल को बचाने के साथ-साथ तिलैया, मैथन, कोनार और पंचेत पहाड़ी में बाँध बनाकर 1300 मेगावाट जल विद्युत उत्पन्न करने में सहायक है। इसका लाभ बिहार, झारखण्ड एवं पश्चिम बंगाल को प्राप्त है। इस परियोजना के निगम द्वारा ताप विद्युत का भी उत्पादन किया जाता है।

दामोदरघाटी परियोजना
चित्र-1 (ङ).8 :

3. कोशी परियोजना : उत्तर बिहार का अभिशाप कोशी नदी पर हनुमान नगर (नेपाल) में बाँध बनाकर 20000 किलोवाट बिजली उत्पादन किया जा रहा है जिसकी आधी बिजली नेपाल को तथा शेष बिहार को प्राप्त होती है।

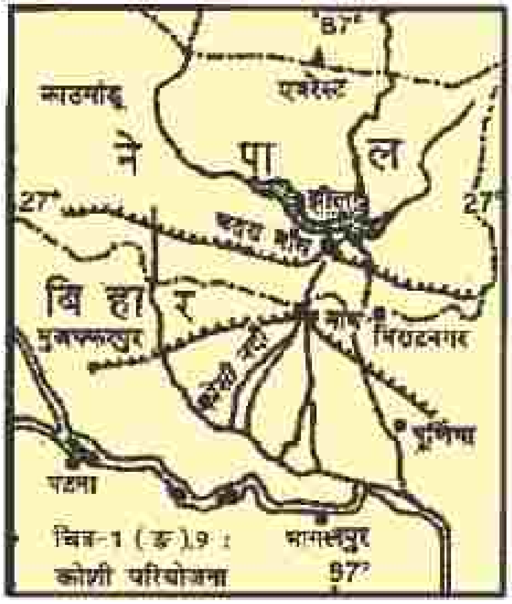

चित्र-1 (ङ).9 : कोशी परियोजना

4. रिहन्द परियोजना : सोन की सहायक नदी रिहन्द पर उत्तर प्रदेश में 934 मीटर लम्बा बाँध और कृत्रिम झील 'गोविन्द बल्लभ पंत सागर'' का निर्माण कर बिजली उत्पादित की जाती है। इस योजना के अन्तर्गत 30 लाख किलोवाट विद्युत उत्पन्न करने की क्षमता है। यहाँ के बिजली का उपयोग रेणुकूट के अल्यूमिनियम उद्योग, चुर्क के सीमेंट उद्योग, मध्य भारत के रेल मार्गों को विद्युतीकरण तथा हजारों नलकूपों के लिए किये जाते हैं।

5. हीराकुंड परियोजना : महानदी पर उड़ीसा में विश्व का सबसे लम्बा बाँध (4801 मीटर) बनाकर 2.7 लाख किलोवाट बिजली उत्पादन किया जाता है। उड़ीसा एवं आस-पास के क्षेत्रों के कृषि एवं उद्योग में इसका उपयोग किया जाता है।

चित्र-1 (ङ).10 : हीराकुंड परियोजना

6. चंबल घाटी परियोजना : चंबल नदी पर राजस्थान में तीन बाँध गाँधी सागर, राणाप्रताप सागर और कोटा में स्थापित कर तीन शक्ति गृहों की स्थापना कर 2 लाख मेगावाट बिजली उत्पादन किया जा रहा है। इससे राजस्थान एवं मध्य प्रदेश को लाभ मिलता है।

7. तुंगभद्रा परियोजना : यह कृष्णा नदी की सहायक नदी तुंगभद्रा पर कर्नाटक में अवस्थित दक्षिण भारत की सबसे बड़ी नदी-घाटी-परियोजना है जो कर्नाटक एवं आन्ध्र प्रदेश के

सहयोग से तैयार हुआ है। इसकी बिजली उत्पादन क्षमता 1 लाख किलोवाट है जो सिंचाई के साथ-साथ सैकड़ों छोटे-बड़े उद्योगों को बिजली आपूर्ति करता है।

8. शरावती नदी परियोजना : कर्नाटक में पश्चिम घाट की शरावती नदी पर जोग प्रपात के पास 2160 मीटर लम्बा एवं 62 मीटर ऊँचा बाँध बनाकर बिजली उत्पन्न किया जाता है। इसकी विद्युत उत्पादन क्षमता बढ़ाकर 13 लाख किलोवाट करने की योजना है। इससे लाभान्वित राज्य कर्नाटक, केरल, आन्ध्रप्रदेश, तमिलनाडु और महाराष्ट्र हैं।

ताप शक्ति :

ताप शक्ति संयंत्रों में तापीय विद्युत का उत्पादन करने के लिए कोयला, पेट्रोलियम एवं प्राकृतिक गैस का उपयोग होता है। ये जीवाश्म ईंधन भी कहे जाते हैं तथा समाप्य संसाधन हैं।

चित्र-1 (क).11 भारत : प्रमुख विद्युत गृह

ये जल विद्युत की भाँति प्रदूषण रहित नहीं हैं। भारत में 1997–98 तक ताप विद्युत का उत्पादन 64 हजार मेगावाट हुआ जो 33.6 अरब यूनिट के बराबर था। 2004 तक यह बढ़कर 784921 मेगावाट हो गया जो 467 बिलियन यूनिट के बराबर है। राष्ट्रीय ताप विद्युत निगम (NTPC) द्वारा देश का अधिकतर ताप विधुत/शक्ति उत्पादन का कार्य होता है।

परमाणु शक्ति :

जब उच्च अणुभार वाले परमाणु विखंडित होते हैं तो ऊर्जा का उत्सर्जन होता है। इल्मेनाइट, वैनेडियम, एंटीमनी, ग्रेफाइट, यूरेनियम, मोनाजाइट आदि आण्विक खनिज हैं। भारत में

चित्र-1 (क).12 : भारत–प्रमुख ऊर्जा संयंत्र

मोनाजाइट केरल राज्य में प्रचुरता से पाया जाता है। इसके अतिरिक्त तमिलनाडु, आन्ध्र प्रदेश, उड़ीसा आदि के तटीय क्षेत्रों में यह प्राप्य है। यूरेनियम परमाणु ऊर्जा का कच्चा माल है जो विभिन्न प्रकार की प्राचीन शैलों से प्राप्त किया जाता है, इनमें पिचब्लेंड मुख्य है जिसमें 50 से 80 प्रतिशत तक यूरेनियम पाया जाता है।

भारत में यूरेनियम का विशाल भंडार झारखण्ड के जादूगोड़ा में है जहाँ यह 97 किलो मीटर लम्बी पट्टी में फैला है। मेघालय के जयंतिया पहाड़ी में भी इसके पर्याप्त भण्डार हैं। आन्ध्रप्रदेश में भी यूरेनियम पाया जाता है। इल्मेनाइट का भण्डार केरल, तमिलनाडु, आन्ध्रप्रदेश, उड़ीसा और महाराष्ट्र में स्थित है। ये खनिज भी समुद्रतटीय बालु में पाये जाते हैं। वेनेडियम झारखण्ड तथा उड़ीसा में मिलता है।

भारत में 1955 में प्रथम आण्विक रियेक्टर मुम्बई के निकट तारापुर में स्थापित किया गया जिसका मुख्य उद्देश्य उद्योग एवं कृषि को बिजली प्रदान करना था। देश में अभी तक छः परमाणु विद्युतगृह स्थापित हुए हैं।

1. तारापुर परमाणु विद्युत गृह : यह एशिया का सबसे बड़ा परमाणु विद्युत गृह है। यहाँ जल उबालने वाली दो परमाणु भट्ठियाँ हैं जिसमें प्रत्येक की उत्पादन क्षमता 200 मेगावाट से अधिक है। अब यहाँ यूरेनियम के स्थान पर थोरियम से प्लुटोनियम बनाकर विद्युत उत्पन्न किये जा रहे हैं क्योंकि भारत थोरियम के भण्डार में काफी समृद्ध है।

2. राणाप्रताप सागर परमाणु विद्युत गृह : यह राजस्थान के कोटा में स्थापित है। यह चंबल नदी के किनारे है जिससे जल प्राप्त होता है। यह बिजली घर कनाडा के सहयोग से बना है। इसका उत्पादन क्षमता 100 मेगावाट है। फिलहाल 235 मेगावाट की दो नई इकाइयों की भी शुरूआत हुई है।

3. कलपक्कम परमाणु विद्युत गृह : तमिलनाडु में स्थित यह परमाणु गृह स्वदेशी प्रयास से बना है। यहाँ 335 मेगावाट की दो रिएक्टर क्रमशः 1983 एवं 1985 से कार्य करना शुरू कर दिया है।

4. नरौरा परमाणु विद्युत गृह : यह उत्तर प्रदेश के बुलंदशहर के पास स्थित है। यहाँ भी 235 मेगावाट क्षमता के दो रिएक्टर हैं।

5. ककरापारा परमाणु विद्युत गृह : गुजरात राज्य में समुद्र के किनारे स्थित इस परमाणु विद्युत गृह में 1992 से विद्युत उत्पादन प्रारम्भ हुआ है।

6. कैगा परमाणु विद्युत गृह : यह कर्नाटक राज्य के जागवार जिला में स्थित है।

7. कुडनकुलम परमाणु विद्युत गृह : इस परमाणु विद्युत गृह का निर्माण रूस के सहयोग से तमिलनाडु के तूतीकोरिन बन्दरगाह के निकट चल रहा है। अभी यह निर्माणाधिन है। वर्ष 2010 के मध्य तक उत्पादन प्रारम्भ होने की संभावना है।

गैर-पारम्परिक शक्ति के स्रोत

हमलोग अधिक दिनों तक पारम्परिक शक्ति के साधनों पर निर्भर नहीं रह सकते क्योंकि ये समाप्य संसाधन हैं। अतः गैर-पारम्परिक शक्ति संसाधनों से ऊर्जा के विकास की बहुत ही अधिक आवश्यकता है। ऊर्जा के गैर-पारम्परिक स्रोतों में बायो गैस, सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा, ज्वारीय एवं तरंग ऊर्जा, भूतापीय ऊर्जा एवं जैव ऊर्जा महत्वपूर्ण हैं। भारत इस समय विश्व का ऐसा देश है जिसने ऊर्जा नवीकरणीय गैर-पारम्परिक स्रोतों का उपयोग करने के लिए प्रौद्योगिकी विकसित कर ली है। गैर-पारम्परिक ऊर्जा के स्रोत सर्वथा प्रदूषण मुक्त होते हैं।

सौर ऊर्जा : जब फोटोवोल्टाइक सेलों में विपाशित सूर्य की किरणों को ऊर्जा में परिवर्तित किया जाता है, तो सौर ऊर्जा का उत्पादन होता है। यह कम लागत वाला पर्यावरण के अनुकूल तथा निर्माण में आसान होने के कारण अन्य ऊर्जा के स्रोतों की अपेक्षा ज्यादा लाभदायक है। यह सामान्यतः हीटरों, कूलर्स, प्रकाश आदि उपकरणों में अधिक उपयोग की जाती है। भारत के पश्चिमी भागों-गुजरात, राजस्थान में सौर ऊर्जा की अधिक संभावनाएँ हैं।

पवन ऊर्जा : पवन ऊर्जा पवन चक्कियों की सहायता से प्राप्त की जाती है। पवन चक्की पवन की गति से चलती है और टरबाइन को चलाती है। इससे गति ऊर्जा को विद्युत ऊर्जा में परिवर्तित किया जाता है। भारत विश्व का सबसे बड़ा पवन ऊर्जा उत्पादक देश है। यहाँ मानसून एवं पछुआ पवनों को ऊर्जा के स्रोत के रूप में प्रयोग किया जाता है। इसके अतिरिक्त स्थानीय पवनों, स्थलीय एवं समुद्री समिरों को भी विद्युत उत्पादन में प्रयोग किया जा सकता है।

चित्र-1 (ङ).13 : पवन चक्की

भारत में पवन ऊर्जा के विकास के लिए बहुत बड़ी महत्त्वाकांक्षी योजना तैयार की गई है जिसके अन्तर्गत 300 वायु चालित टरबाइनों को विशेषतया सागर तटीय क्षेत्रों के 12 अनुकूल स्थानों पर स्थापित किये जायेंगे। देश में पवन ऊर्जा की संभावित उत्पादन क्षमता 50,000 मेगावाट है। मार्च 2006 तक 5340 मेगावाट विद्युत का उत्पादन किया जा चुका है। पवन ऊर्जा के लिए तमिलनाडु, राजस्थान, गुजरात, महाराष्ट्र तथा कर्नाटक में अनुकूल परिस्थितियाँ विद्यमान हैं। गुजरात के कच्छ में लाम्बा का पवन ऊर्जा संयंत्र एशिया का सबसे बड़ा संयंत्र है। दूसरा बड़ा संयंत्र तमिलनाडु के तूतीकोरिन में स्थित है।

ज्वारीय तथा तरंग ऊर्जा : समुद्रि ज्वार तथा तरंग में जल गतिशील रहता है। अत: इसमें अपार ऊर्जा रहती है। अनुमान है कि भारत में 8,000-9,000 मेगावाट संभाव्य ज्वारीय एवं तरंग ऊर्जा है। खम्भात की खाड़ी सबसे अनुकूल है जहाँ पर 7,000 मेगावाट ऊर्जा प्राप्त किया जा सकता है। इसके बाद कच्छ की खाड़ी (1000 मेगावाट) तथा सुन्दर वन (100 मेगावाट) का स्थान है।

भूतापीय ऊर्जा : यह ऊर्जा पृथ्वी के उच्च ताप से प्राप्त किया जाता है। जब भूगर्भ से मैग्मा निकलता है तो अपार ऊर्जा निर्मुक्त होता है। गीजर कूपों से निकलने वाले गर्म जल तथा

गर्म झरनों से भी शक्ति प्राप्त किया जा सकता है। हिमाचल प्रदेश के मनीकरण में भूतापीय ऊर्जा संयंत्र स्थापित है तथा दूसरा लद्दाख के दुर्गाघाटी में स्थित है।

बायो गैस एवं जैव ऊर्जा : ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि अपशिष्ट, पशुओं और मानव जनित अपशिष्ट के उपयोग से घरेलू उपयोग हेतु बायो गैस उत्पन्न की जाती है। वस्तुतः जैविक पदार्थों के अपघटन से गैस उत्पन्न होती है। पशुओं के गोबर से गैस तैयार करने वाले संयंत्र को भारत में **गोबर गैस प्लांट** के नाम से जाना जाता है। इससे किसानों को ऊर्जा तथा उर्वरक की प्राप्ति होती है। जैविक पदार्थों से प्राप्त होने वाली ऊर्जा को जैविक ऊर्जा कहते हैं। कृषि अवशेष, नगरपालिका, औद्योगिक एवं अन्य अपशिष्ट पदार्थ जैविक पदार्थों के उदाहरण हैं। इसे विद्युत ऊर्जा, ताप ऊर्जा या खाना पकाने के लिए गैस ऊर्जा में परिवर्तित किया जा सकता है। इससे कूड़ा-करकट का सफाया एवं पर्यावरण के प्रदूषण जैसी समस्याएँ भी हल हो सकती हैं। कचरे को ऊर्जा में बदलने की एक परियोजना दिल्ली के ओखला में शुरू की गई है।

चित्र-1 (ङ).14 : बायोगैस संयंत्र

शक्ति संसाधनों का संरक्षण :

ऊर्जा संकट एक विश्व व्यापी समस्या का रूप ले चुका है। इस परिस्थिति में समस्या के समाधान की दिशा में अनेक प्रयास किये जा रहे हैं।

1. ऊर्जा के प्रयोग में मितव्ययीता : ऊर्जा संकट से बचने के लिए प्रथमतः ऊर्जा के उपयोग में मितव्ययीता बरती जाय। इसके लिए तकनीकी विकास आवश्यक है। ऐसे मोटर गाड़ियों का निर्माण हो जो कम तेल में ज्यादा चलते हैं। अनावश्यक बिजली का उपयोग रोक कर हम ऊर्जा की बचत बड़े स्तर पर कर सकते हैं।

2. ऊर्जा के नवीन क्षेत्रों की खोज : ऊर्जा संकट समाधान की दिशा में परम्परागत ऊर्जा के नये क्षेत्रों का अन्वेषण किया जाय। इस दिशा में भारत में 1970 के बाद काफी तेजी आई है तथा अनेक नये-नये पेट्रोलियम एवं प्राकृतिक गैस के भण्डार का पता लगाया जा चुका है। अरब सागर, कृष्णा-गोदावरी क्षेत्र, राजस्थान क्षेत्र आदि में पेट्रोलियम एवं प्राकृतिक गैस के स्रोत प्राप्त हुए हैं। इसके लिए सुदूर-संवेदी सूचना प्रणाली का भी उपयोग हो रहा है।

3. ऊर्जा के नवीन वैकल्पिक साधनों का उपयोग : वैकल्पिक ऊर्जा में पारम्परिक एवं गैर-पारम्परिक दोनों ऊर्जा ही सम्मिलित हैं। इन में से कुछ तो सतत् नवीकरणीय हैं तो कुछ समापनीय हैं। आज वैकल्पिक ऊर्जा में जल-विद्युत, पवन-ऊर्जा, ज्वारीय ऊर्जा, जैव ऊर्जा, भूतापीय ऊर्जा, सौर ऊर्जा आदि का विकास कर उपभोग करना शक्ति के संसाधनों को संरक्षित करने की दिशा में महत्वपूर्ण कदम होगा। जीवाश्म ऊर्जा के अत्यधिक उपयोग से प्रदूषण, स्वास्थ्य एवं जलवायु परिवर्तन की आशंका प्रबल हो गई है। अतः इसके स्थान पर वैकल्पिक ऊर्जा स्रोतों का उपयोग अपरिहार्य हो गया है।

4. अंतर्राष्ट्रीय सहयोग : ऊर्जा संकट से बचने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग की आवश्यकता है। विश्व के सभी राष्ट्र आपसी भेद-भाव को भुलकर ऊर्जा संकट समाधान हेतु आम सहमति से नीति निर्धारण करें नहीं तो आनेवाले दिनों में यह विश्व के लिए दुःखदायी सिद्ध होगा। इस संदर्भ में संयुक्त राष्ट्र संघ (U.N.O.), ऑर्गेनाइजेशन ऑफ पेट्रोलियम एक्सपोर्टिंग कन्ट्रीज (OPEC), विश्व व्यापार संगठन (W.T.O.) दक्षिण एशियाई 8 देशों का संगठन (G-8) जैसी अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाएं महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती हैं।

अभ्यास-प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न :-

1. किस राज्य में खनिज तेल का विशाल भंडार स्थित है?

   (क) असम (ख) राजस्थान

   (ग) बिहार (घ) तमिलनाडु

2. भारत के किस स्थान पर पहला परमाणु ऊर्जा केन्द्र स्थापित किया गया था?

   (क) कलपक्कम (ख) नरोरा

   (ग) राणाप्रताप सागर (घ) तारापुर

3. कौन सा ऊर्जा स्रोत अनवीकरणीय है?

   (क) जल (ख) सौर

   (ग) कोयला (घ) पवन

4. प्राथमिक ऊर्जा का उदाहरण नहीं है -

   (क) कोयला (ख) विद्युत

   (ग) पेट्रोलियम (घ) प्राकृतिक गैस

5. ऊर्जा का गैर पारम्परिक स्रोत है।

   (क) कोयला (ख) विद्युत

   (ग) पेट्रोलियम (घ) सौर-ऊर्जा

6. गोण्डवाना समूह के कोयले का निर्माण हुआ था।

   (क) 20 करोड़ वर्ष पूर्व (ख) 20 लाख वर्ष पूर्व

   (ग) 20 हजार वर्ष पूर्व (घ) इनमें से कोई नहीं

7. भारत में कोयले का सर्वप्रमुख उत्पादक राज्य है :

(क) पश्चिम बंगाल (ख) झारखण्ड

(ग) उड़ीसा (घ) छत्तीसगढ़

8. सर्वोत्तम कोयले का प्रकार कौन-सा है?

(क) एन्थ्रासाइट (ख) पीट

(ग) लिग्नाइट (घ) बिटुमिनस

9. मुम्बई हाई क्यों प्रसिद्ध है?

(क) कोयले के निर्यात हेतु (ख) तेल शोधक कारखाना हेतु

(ग) खनिज तेल हेतु (घ) परमाणु शक्ति हेतु

10. भारत का प्रथम तेल शोधक कारखाना कहाँ स्थित है?

(क) मथुरा (ख) बरौनी

(ग) डिगबोई (घ) गुवाहाटी

11. प्राकृतिक गैस किस खनिज के साथ पाया जाता है?

(क) यूरेनियम (ख) पेट्रोलियम

(ग) चूना पत्थर (घ) कोयला

12. भाखड़ा नंगल परियोजना किस नदी पर अवस्थित है?

(क) नर्मदा (ख) झेलम

(ग) सतलज (घ) व्यास

13. दक्षिण भारत की सबसे बड़ी नदी घाटी परियोजना है।

(क) तुंगभद्रा (ख) शारवती

(ग) चंबल (घ) हिराकुंड

14. ताप विद्युत केन्द्र का उदाहरण है :

(क) गया (ख) बरौनी

(ग) समस्तीपुर (घ) कटिहार

15. यूरेनियम का प्रमुख उत्पादक स्थल है :

(क) डिगबोई (ख) झरिया

(ग) घाटशीला (घ) जादूगोड़ा

16. एशिया का सबसे बड़ा परमाणु विद्युत गृह है :

(क) तारापुर (ख) कलपक्कम

(ग) नरौरा (घ) कैगा

17. भारत के किस राज्य में सौर-ऊर्जा के विकास की सर्वाधिक संभावनाएँ हैं?

(क) असम (ख) अरूणाचल प्रदेश

(ग) राजस्थान (घ) मेघालय

18. ज्वारीय एवं तरंग ऊर्जा उत्पादन हेतु भारत के अधिक अनुकूल परिस्थितियाँ कहाँ पाई जाती हैं?

(क) मन्नार की खाड़ी में (ख) खम्भात की खाड़ी में

(ग) गंगा नदी में (घ) कोसी नदी में

लघु उत्तरीय प्रश्न :

1. पारम्परिक एवं गैर-पारम्परिक ऊर्जा स्रोतों के तीन तीन उदाहरण लिखिये।
2. गोण्डवाना समूह के कोयला क्षेत्रों के नाम लिखिये।
3. झारखण्ड राज्य के मुख्य कोयला उत्पादक क्षेत्रों के नाम अंकित कीजिये।
4. कोयले के विभिन्न प्रकारों के नाम लिखिये।
5. पेट्रोलियम से किन-किन वस्तुओं का निर्माण होता है?

6. सागर सम्राट क्या है?
7. किन्हीं चार तेल शोधक कारखाने का स्थान निर्दिष्ट कीजिये।
8. जल विद्युत उत्पादन के कौन कौन से मुख्य कारक हैं?
9. नदी घाटी परियोजनाओं को बहुउद्देशीय क्यों कहा जाता है?
10. निम्नलिखित नदी घाटी परियोजनाएँ किन-किन राज्यों में अवस्थित हैं–
    हीराकुंड, तुंगभद्रा एवं रिहन्द।
11. ताप शक्ति क्यों समाप्य संसाधन है?
12. परमाणु शक्ति किन किन खनिजों से प्राप्त होता है?
13. मोनाजाइट भारत में कहाँ-कहाँ उपलब्ध है?
14. सौर ऊर्जा का उत्पादन कैसे होता है?
15. भारत के किन-किन क्षेत्रों में पवन ऊर्जा के लिए अनुकूल परिस्थितियाँ हैं?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न :

1. शक्ति संसाधन का वर्गीकरण विभिन्न आधारों के अनुसार, सोदाहरण, स्पष्ट कीजिये?
2. भारत में पारम्परिक शक्ति के विभिन्न स्रोतों का विवरण प्रस्तुत कीजिये?
3. गोंडवाना काल के कोयले का भारत में वितरण पर प्रकाश डालिये?
4. कोयले का वर्गीकरण कर उनकी विशेषताओं को स्पष्ट कीजिये?
5. भारत में खनिज तेल के वितरण का वर्णन कीजिये?
6. जल विद्युत उत्पादन हेतु अनुकूल भौगोलिक एवं आर्थिक कारकों की विवेचना कीजिये?
7. संक्षिप्त भौगोलिक टिप्पणी लिखिये–
   भाखड़ा-नंगल परियोजना, दामोदर घाटी परियोजना, कोसी परियोजना, हीराकुंड परियोजना, रिहन्द परियोजना और तुंगभद्रा परियोजना।
8. भारत के किन्हीं चार परमाणु विद्युत गृह का उल्लेख कीजिये तथा उनकी विशेषताओं को स्पष्ट कीजिये?

9. शक्ति (ऊर्जा) संसाधनों के संरक्षण हेतु कौन-कौन कदम उठाये जा सकते हैं? आप उसमें कैसे मदद पहुँचा सकते हैं?

मानचित्र कार्य

भारत के मानचित्र पर निम्नलिखित को दिखाइए और उनके नाम लिखिये :

1. कोयला खदानें : झरिया, बोकारो, रानीगंज, कोरबा, तालचर, सिंगरेनी एवं नेवेली।
2. तेल क्षेत्र : डिगबोई, कलोल, अंकलेश्वर, मुम्बई हाई।
3. तेलशोधक कारखाने: भटिंडा, पानीपत, मथुरा, जामनगर, मंगलौर, हल्दिया, गुवाहाटी, बरौनी।
4. परमाणु शक्ति केन्द्र : कैगा, कालपक्कम, रावतभाटा, नरौरा, काकरापारा, तारापुर।

इकाई-2

कृषि

भारत कृषि की दृष्टि से एक संपन्न राष्ट्र है। यहाँ विविध प्रकार की उपजाऊ मिट्टी पायी जाती है। वर्ष भर पर्याप्त तापमान के कारण फसलों के लिये लंबा वर्धन काल मिलता है। हिमालय से निकलने वाली सतत्वाहिनी नदियों में ग्लेशियर के पिघलने से वर्ष भर पर्याप्त जल रहता है। मॉनसूनी वर्षा भी भूमिगत जल एवम् सतही जल का पुन:भरण (Recharge) करती है। भारत की कृषि संपदा को यह प्रकृति का अनूठा उपहार है।

मॉनसून के स्वभाव के कारण कृषि निर्धारण में वर्षा का बहुत महत्त्व है। अधिकांश भागों में वर्षा वर्ष में 3-4 महीने ही होती है और यह भी असमान तथा अनियमित। इस कारण अधिकांश क्षेत्रों में साल में एक ही फसल उगायी जाती है। मात्र (15%) क्षेत्र में ही, जहाँ सिंचाई की सुविधा है, वहाँ साल में दो से अधिक फसल उगाई जाती है। इस प्रकार भारत के अधिकांश क्षेत्रों में शुष्क खेती का प्रचलन है। वर्षा की सहायता से विकसित कृषि प्रणाली को शुष्क कृषि (Dry Agriculture) कहते हैं।

महत्व :

भारत में कृषि का महत्त्व कई कारणों से है -

1. यह देश के आर्थिक जीवन का प्राण है। भारत में लगभग 2/3 लोगों की जीविका कृषि पर आधारित है।
2. यहाँ की विशाल जनसंख्या के लिये भोजन कृषि से ही प्राप्त होता है।
3. कई कृषि जन्य कच्चेमाल उद्योगों को प्राप्त होते हैं जैसे- कपास- सूती वस्त्र उद्योग, गन्ना-चीनी उद्योग, जूट उद्योग एवं अन्य कृषि उत्पाद कृषि प्रसंस्करण उद्योगों को कच्चा

माल देते हैं- जैसे रसदार फल- जेली, जैम, स्क्वैश उत्पादन के लिये आधार प्रदान करते हैं। इसी तरह रेशम का कीड़ा रेशमी वस्त्र उद्योग को कच्चा माल मुहैया कराता है। इस तरह कृषि भी उद्योगों को मजबूती प्रदान करती है।

4. जलवायु मिट्टी एवं-धरातल की विविधता के कारण भारत में फसलों की विविधता भी पायी जाती है। कई फसलों में भारत को विश्व में महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। चाय, गन्ना, मोटे अनाज एवं कुछ तिलहनों के उत्पादन में भारत विश्व में अग्रणी है। चावल, जूट, तम्बाकू, गेहूँ, कपास इत्यादि के उत्पादन में इसे दूसरा से चौथा स्थान प्राप्त है।

5. राष्ट्रीय आय में भारतीय कृषि का मुख्य योगदान है। देश की 20% आय कृषि से प्राप्त होती है।

कृषि का आंतरिक एवम् अंतर्राष्ट्रीय व्यापार में महत्त्वपूर्ण भूमिका है। आंतरिक व्यापार से रेल की आय और विदेशी व्यापार से तट कर की आय बढ़ती है।

संक्षेप में, कृषि का मुख्य उद्देश्य भोजन प्रदान करना, उद्योग धंधों को कच्चा माल उपलब्ध कराना तथा कृषि उपजों के निर्यात से विदेशी मुद्रा प्राप्त करना।

भारत में कृषि भूमि उपयोग : कृषि पर आश्रित लोगों के लिये भूमि अत्यंत ही महत्त्वपूर्ण संसाधन है, क्योंकि यह पूरी तरह भूमि पर निर्भर है। इसीलिये गाँवों में भूमिहीनता और गरीबों के बीच सहसंबंध देखने को मिलता है। फसलों के उत्पादन में भूमि की गुणवत्ता का भी व्यापक महत्त्व है जबकि अन्य आर्थिक क्रियाकलाप जैसे- उद्योग परिवहन, आवास, में इसका उतना महत्व नहीं है। ये बंजर एवम् ऊसर भूमि पर भी लगाए जा सकते हैं। स्थायी सम्पत्ति होने के कारण भूमि का सामाजिक महत्त्व भी है। इससे सामाजिक प्रतिष्ठा बढ़ती है। कर्ज के लिये इसे गिरवी रखा जा सकता है। भूमिहीन इन सब लाभों से वंचित रह जाते हैं। कृषि योग्य भूमि में चार तरह की भूमि सम्मिलित की जाती है। (1) शुद्ध बोया गया क्षेत्र, (2) चालू परती भूमि, (3) अन्य परती, (4) कृषि योग्य व्यर्थ भूमि।

जनसंख्या वृद्धि के कारण कृषि योग्य भूमि पर काफी दबाव बढ़ गया है और इसका गैर कृषि कार्यों में लगा उपयोग बढ़ता जा रहा है। ऐसी परिस्थिति में कृषि में उत्पादन दो ही रूपों में बढ़ाया जा सकता है-

1. प्रति हेक्टेयर उपज में वृद्धि

2. एक ही कृषि वर्ष में एक ही भूमि में एक से अधिकाधिक फसलों को उगा कर कुल उत्पादन में वृद्धि करना। इसे शस्य गहनता कहते है। इसे उदाहरण से अच्छी तरह समझा जा सकता है। जैसे तुम्हारे पास 2 हेक्टेयर भूमि है। एक कृषि वर्ष में तुम धान की फसल बो कर धान उपजाते हो। इसके बाद रबी के समय उसी 2 हेक्टेयर में तुम गेहूँ बो कर उसकी फसल काटते हो। फिर जायद फसल के समय कम अवधि में तैयार होने वाली मूँग की फसल बोकर उसकी कटाई कर लेते हो। सच मायने में तुम्हारे पास तो 2 हेक्टेयर ही जमीन है। किंतु एक कृषि वर्ष में तुम इसी भूमि में 3 बार फसलों का उत्पादन करते हो, तो तुमने 2 ×3 = 6 हेक्टेयर जमीन में उत्पन्न होने वाली फसल का लाभ उठा लिया।

इस शस्य गहनता को एक सूचकांक द्वारा दिखाया जाता है, तथा इसे प्रतिशत में अंकित किया जाता है।

$$\text{शस्य गहनता} = \frac{\text{कुल बोया गया क्षेत्र}}{\text{शुद्ध बोया गया क्षेत्र}} \times 100$$

$$= \frac{6 \text{ हेक्टेयर}}{2 \text{ हेक्टेयर}} \times 100 = \frac{600}{2} = 300$$

शस्य गहनता को प्रभावित करने वाले कारक

1. सिंचाई
2. उर्वरक
3. उन्नत बीज
4. यंत्रीकरण
5. कीटनाशक
6. कृषि उत्पादों का उचित मूल्य

इस तरह तुम्हारी शस्य गहनता 300% हुई। शस्य गहनता की दृष्टि से पंजाब भारत का अग्रणी राज्य है। शस्य गहनता को प्रभावित करने वाले कारक को पूँजी लगाकर प्राप्त किया जा सकता है। इसीलिये शस्य गहनता और निवेश उपयोग में बहुत गहरा सह संबंध है। बच्चों अब यह स्पष्ट हो गया होगा कि पंजाब की तुलना में बिहार में शस्य गहनता क्यों कम है?

भारत में शुद्ध बोए गए क्षेत्र के बढ़ने की संभावना बहुत ही कम है लेकिन शस्य गहनता ही वह विकल्प है जिससे भारत में कृषि उत्पादन को बढ़ाया जा सकता है।

निवेश उपयोग : पूँजी लगा कर सिंचाई खाद, उन्नत बीज, मशीन आदि का उपयोग।

भारत के अधिकांश भाग में उष्णकटिबंधीय जलवायु होने के कारण यहाँ पर्याप्त तापमान और प्रकाश रहता है। वर्षा का वितरण सभी जगह समान नहीं रहने के कारण आर्द्रता कृषि के प्रकार और फसलों के प्रकार तथा उत्पादन को निर्धारित करने वाला महत्वपूर्ण कारक हो जाता है। जब फसल केवल वर्षा द्वारा प्राप्त नमी के आधार पर पैदा की जाती है तब इसे वर्षा पोषित कृषि या वर्षाधीन कृषि कहते हैं। यह कृषि दो प्रकार की होती है- शुष्क-भूमि, कृषि एवं आर्द्र-भूमि कृषि।

75 से०मी० से कम वर्षा वाले क्षेत्रों में होने वाली कृषि को 'शुष्क भूमि' कृषि एवम् 75 सेंमी० से अधिक वर्षा वाले क्षेत्र में होने वाली कृषि को 'आर्द्र' भूमि कृषि कहते हैं।

भारतीय कृषि कुल 38.67 % भूमि पर वर्षाधीन कृषि होती है। मोटे अनाज, दाल, तिलहन, कपास आदि वर्षाधीन फसल के उदाहरण है।

शुष्क-भूमि कृषि की विशेषताएँ :

1. वर्षा जल को संरक्षित करने की विधियों का प्रयोग किया जाता है ताकि शुष्क समय में उसका उपयोग किया जा सके।
2. आवश्यकता से अधिक जल को भूमिगत जल के पुन:भरण के लिये संरक्षित रखा जाता है।
3. शुष्कता के कारण यहाँ की मिट्टी में ह्यूमस की मात्रा बहुत कम होती है।
4. शुष्कता के कारण मिट्टी की ऊपरी परत का वायु द्वारा कटाव होता है।
5. शुष्क भूमि कृषि अधिकांशत: गरीब किसान करते हैं जिनके पास उन्नत कृषि करने के लिये पूँजी एवम् आवश्यक साधन का अभाव रहता है।
6. कृषि के द्वारा यहाँ आय कम प्राप्त होती है जिसकी क्षतिपूर्ति पशुपालन द्वारा की जाती है। अब जनसंख्या वृद्धि के दबाव के कारण यहाँ के चारागाहों खेतों में बदला जा रहा है।

चूँकि गरीब किसान और शुष्क भूमि कृषि दोनों ही एक दूसरे से जुड़े हुए हैं इसलिये गरीब किसानों के उत्थान के लिये सरकार ने कई योजनाएँ बनाई हैं जैसे-

1. समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम, सूखा प्रवण क्षेत्र विकास कार्यक्रम कार्य और रोजगार के बदले अनाज कार्यक्रम, नरेगा आदि।
2. शीघ्र तैयार होने वाली फसलों का बीज तैयार किया जा रहा है।
3. कृषि की नई तकनीक का विकास।
4. जल छीजन एवम् संग्रहण की तकनीकों का प्रचार प्रसार।
5. पशुपालन एवम् मुर्गीपालन को कृषि के पूरक अंग के रूप में विकसित किया जा रहा है।
6. कुटीर उद्योग एवम् लघु उद्योगों को विकसित किया जा रहा है।
7. अर्धशुष्क उष्णकटिबंधीय क्षेत्र के लिये अंतर्राष्ट्रीय फसल अनुसंधान संस्थान (हैदराबाद) तथा केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान (जोधपुर) शुष्क भूमि एवं अन्य कृषि से संबंधित समस्याओं के निदान के लिये कार्यरत है।

कृषि के प्रकार :

कृषि आदिकाल से किया जाने वाला आर्थिक क्रियाकलाप है। भारत में भी पायी जाने वाली विविध भौगोलिक एवम् सांस्कृतिक परिवेश ने कृषि तंत्र को समय के अनुरूप प्रभावित किया है। इस तरह यहाँ कई प्रकार की कृषि की जाती है-

1. प्रारंभिक जीविका कृषि
2. गहन जीविका कृषि
3. वाणिज्यिक कृषि

प्रारंभिक जीविका कृषि यह अति प्राचीन काल से की जाने वाली कृषि का तरीका है। इसमें परंपरागत तरीके से भूमि पर खेती की जाती है। खेती के औजार भी काफी परंपरागत होते हैं जैसे लकड़ी का हल, कुदाल, एवम् खुरपी। इससे जमीन की जुताई गहराई से नहीं हो पाती है। इसमें जैसे- तैसे बीज बो दिया जाता है और फसल पकने पर काट लिया जाता है। कृषि में आधुनिक तकनीक के निवेश का अभाव रहता है। इसलिये उपज कम होती है और भूमि की

उत्पादकता कम होने के कारण फसल का प्रति इकाई उत्पादन भी कम होता है। इस प्रकार की कृषि का उदाहरण-कर्तन दहन प्रणाली है। इसमें किसान खेती के टुकड़ पर उगी हुई जंगली वनस्पति को काट कर एवम् जला कर साफ करता है। और तब उसमें फसल बोता है। इसमें फसल उत्पादन जीविका निर्वाह के लिये किया जाता है। खेत की उर्वरता जब समाप्त हो जाती है तब किसान उस खेत के टुकड़े को छोड़ कर दूसरे खेत के टुकड़े पर वही प्रक्रिया आरंभ करता है।

देश के विभिन्न भागों में इस प्रकार की कृषि को विभिन्न नामों से जाना जाता है।

उत्तरपूर्वी राज्य–असम, मेघालय मिजोरम नागालैण्ड में इसे 'झूम', मणिपुर में 'पामलू' तथा छत्तीसगढ़ के बस्तर जिले तथा अंडमान निकोबार द्वीप समूह में इसे 'दीपा' कहा जाता है।

गहन जीविका कृषि :

यह कृषि देश के अधिकांश हिस्से में की जाती है। जहाँ भूमि पर जनसंख्या का दबाव अधिक है वहाँ इस प्रकार की कृषि पद्धति को अपनाया गया है। इसमें श्रम की अधिकता होती है। परंपरागत कृषि कौशल का भी इसमें भरपूर उपयोग किया जाता है। भूमि की उर्वरता को बनाए रखने के लिये परंपरागत ज्ञान, बीजों के रख-रखाव एवम् मौसम संबंधी भी अनेक ज्ञान का इसमें उपयोग किया जाता है। जनसंख्या बढ़ने से जोतों का आकार काफी छोटा हो गया है। वैकल्पिक रोजगार के अभाव में भी जरूरत से अधिक जनसंख्या इस प्रकार की कृषि में संलग्न है। इस तरह छिपी बेरोजगारी का स्वरूप प्रस्तुत करती है।

इस कृषि में प्रधानत: खाद्यान्न (धान) की खेती होती है। जनसंख्या अधिक होने के कारण अधिक उत्पादन भी अधिक जनसंख्या के लिये कम ही पड़ता है। इसलिये इसमें किसानों के पास व्यापार के लिये बहुत कम उत्पादन रहता है। इसीलिये इसे जीविका निर्वाहक कृषि कहते हैं।

व्यापारिक कृषि :

नाम के अनुरूप ही इसमें फसलें व्यापार के लिये उपजाई जाती हैं। अत: इस कृषि में अधिक पूँजी, आधुनिक कृषि तकनीक का निवेश किया जाता है। अत: किसान अपनी लगाई गई पूँजी से अधिकाधिक लाभ प्राप्त करने का प्रयास करते हैं। आधुनिक कृषि तकनीक में अधिक पैदावार देने वाले परिष्कृत बीज, रासायनिक खाद, सिंचाई, रासायनिक कीटनाशक आदि का उपयोग

किया जाता है। इस कृषि पद्धति को भारत में हरित क्रांति के फलस्वरूप व्यापक रूप से पंजाब एवं हरियाणा में अपनाया गया। इसमें मुख्य रूप से गेहूँ की खेती की जाती है। पंजाब एवम् हरियाणा में बासमती चावल भी इस कृषि पद्धति के अंतर्गत उपजाई जाती है।

रोपण कृषि भी एक प्रकार की व्यापारिक कृषि है। इस कृषि में उद्योग की भाँति मैनेजर एवम् मजदूर की व्यवस्था होती है और मिल मालिक की तरह ही इसमें कृषक की स्थिति होती है। इससे प्राप्त सारा उत्पादन उद्योग में कच्चे माल की भाँति उपयोग में लाया जाता है।

भारत में चाय, काफी, रबड़, गन्ना केला आदि रोपण फसलें हैं। चाय-असम और दार्जिलिंग में, काफी कर्नाटक में - रबड़-केरल में मुख्यतः उपजाया जाता है। चूँकि इसमें फसलें मुख्यतः व्यापार के लिये उपजाई जाती हैं अतः इसके लिये परिवहन, यातायात के साधन एवम् संचार का विकसित होना परम आवश्यक है।

फसल प्रारूप :

भारत में भौतिक विभिन्नता, सांस्कृतिक विविधता को जन्म देती है। यह विविधता यहाँ उपजाए जानेवाले विविध फसलों, उनके प्रारूप- पद्धतियों में परिलक्षित होता है। यहाँ विभिन्न प्रकार की खाद्यान्न फसलें, दलहन, तिलहन, पेय फसलें रेशे वाली फसलें, फल सब्जियाँ आदि उपजाई जाती हैं। इन विविध फसलों की उपज हम यहाँ पायी जानेवाली विभिन्न ऋतुओं के अनुसार पाते हैं। यहाँ ऋतु संबंधित तीन प्रकार के फसल समूह को हम उपजाते हैं जो इस प्रकार है

(1) रबी फसल

(2) खरीफ फसल

(3) जायद (गरमा फसल)

रबी फसल को जाड़े के महीने में अक्टूबर से दिसंबर के मध्य बोया जाता है और ग्रीष्म ऋतु में अप्रैल से जून के मध्य काटा जाता है। इसमें प्रमुख फसलें-गेहूँ, जौ, चना, मटर, मसूर, सरसों आदि है। रबी फसलों की खेती देश के विस्तृत भागों में की जाती है किन्तु देश के उत्तर पश्चिमी राज्य जैसे- पंजाब, हरियाणा, प० उत्तर प्रदेश इसके विशेष राज्य हैं। यही वह क्षेत्र है जहाँ हरित क्रांति के फलस्वरूप हम खाद्यान्न में स्वावलम्बी हो गये हैं। हरित क्रांति की अपनी आवश्यक शर्तें हैं ।(1) नई तकनीक द्वारा विकसित प्रति हेक्टेयर अधिक उत्पादन करने वाले बीज (H.Y.V. seed)

(2) सिंचाई के साधन, (3) रासायनिक खाद, (4) रासायनिक कीटनाशक दवाईयाँ इत्यादि।

हरित क्रांति के फलस्वरूप इन क्षेत्रों में अब कई पर्यावरणीय समस्याएँ उभर कर सामने आने लगी हैं। क्या, तुम्हें इनके विषय में कोई जानकारी है?

खरीफ फसल भारत में वर्षा ऋतु में बोई जाती हैं और सितंबर-अक्टूबर में काट ली जाती हैं। इसमें उपजाई जानेवाली प्रमुख फसल धान है। अन्य फसलें – मकई, ज्वार, बाजरा, अरहर, मूँग, उरद, मूँगफली, सोयाबीन, कपास, जूट आदि हैं। चावल की खेती मुख्य रूप से असम, प० बंगाल, बिहार, उड़ीसा, आंध्रप्रदेश, तमिलनाडु, केरल, महाराष्ट्र के कोंकणीय तटीय प्रदेश में होती है। पिछले कुछ वर्षों से हरियाणा एवं पंजाब में भी अच्छी किस्म की बासमती चावल उपजाई जाती है। भारत में जहाँ अधिक वर्षा होती है वहाँ धान की तीन फसलें उपजाई जाती हैं। ये आॅस, अमन और बोरो के नाम से जाना जाता है।

जायद (गरमा फसल): खरीफ और रबी फसल के बीच ग्रीष्म ऋतु में जो फसल लगाई जाती है उसे जायद या गर्मा फसल कहते हैं। इसमें मुख्य रूप से धान, मकई और सब्जियों की खेती की जाती है। सब्जियों में खासकर खीरा, ककड़ी, कद्दू, नेनुआ, भिंडी, खरबूज, तरबूज इत्यादि महत्वपूर्ण है।

भारत की प्रमुख फसलें

फसल	समय की अवधि	ऋतु	प्रमुख फसलें
खरीफ	जून-जुलाई से अक्टूबर-नवंबर तक	वर्षा ऋतु	चावल, मकई, ज्वार, बाजरा, अरहर, मूँग, उरद, कपास, तिल, जूट, मूँगफली।
रबी	अक्टूबर-नवंबर से मार्च-अप्रैल तक	शीत ऋतु	गेहूँ, जौ, चना, मसूर, मटर, तीसी, सरसों।
जायद	मार्च-अप्रैल से मई जून तक	ग्रीष्म ऋतु	सब्जी -कद्दू, ककड़ी, खीरा, खरबूज, तरबूज, धान, मकई, मूँग, उड़द।

भारत में फसलों के प्रारूप की प्रमुख विशेषता यह है कि यहाँ 100 cm की समवर्षा रेखा

देश को दो बड़े कृषि क्षेत्रों में बाँटती है। 100 cm से अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में चावल जबकि 100cm से कम वर्षा वाले क्षेत्रों में गेहूँ प्रमुख फसल है।

इन दो प्रमुख कृषि क्षेत्रों के बीच का क्षेत्र संक्रमण का क्षेत्र है। भारत में शुष्क क्षेत्र का एक विशिष्ट फसल प्रारूप है। यहाँ प्रमुख फसल ज्वार, बाजरा, मूँगफली,तिलहन और दाल हैं।

मुख्य फसलें – भारत में कृषि की विविधता को प्रभावित करने वाले प्रमुख कारक हैं वर्षा की मात्रा, मिट्टी के प्रकार, कृषि पद्धति विविधता आदि है। इनके फलस्वरूप भारत में विविध फसलें उपजाई जाती हैं। इनमें प्रमुख धान, गेहूँ, मकई, ज्वार-बाजरा, दलहन-तिलहन, पेय फसल, रेशे की फसल उपजाई जाती है।

चावल :

हमारे यहाँ कि प्रमुख खाद्यान्न फसल है जिस पर अधिकांश जनसंख्या निर्भर करती है। विश्व का 28% चावल क्षेत्र भारत में है तथा यह कुल कृषि भूमि का 23% है। चावल की कृषि के लिए अनुकूल भौगोलिक दशाएँ निम्नांकित हैं :–

(i) तापमान : यह उष्ण कटिबंधीय फसल है अतः इसकी उपज के लिये अधिक तापमान की आवश्यकता है। इसके लिये कम से कम 24° सेंटीग्रेड तापमान की आवश्यकता है। बोते समय इसे 21°C, बढ़ते समय 24°C तथा पकते समय 27°C तापमान की आवश्कता होती है।

(ii) वर्षा : इसकी फसल के लिये 125 सें०मी०-200 सेंमी० वर्षा की आवश्यकता होती है। इससे कम वर्षा वाले क्षेत्र में सिंचाई की सहायता से फसल उगाई जाती है।

(iii) मिट्टी : इसके लिये अत्यंत उपजाऊ जलोढ़ मिट्टी की आवश्यकता होती है। इसकी मिट्टी चीकायुक्त दोमट होनी चाहिए ताकि पौधे की जड़ अच्छी तरह विकसित हो सके।

(iv) श्रम : इसकी कृषि में मानव श्रम की अधिक आवश्यकता होती है। खेत की तैयारी से लेकर रोपनी-कटनी तक का कार्य मानव श्रम द्वारा ही संपादित होता है। भारत के सस्ते श्रमिक इसकी कृषि के लिए अनुकूल मानवीय वातावरण बनाते हैं।

उत्पादन तथा वितरण :

भारत का अधिकांश चावल जलोढ़ मिट्टी के क्षेत्र में तथा डेल्टाई एवं तटीय भागों में उत्पन्न किया जाता है। इसके अतिरिक्त यह हिमालय पर्वत की निचली घाटियों में सीढ़ीनुमा खेतों में तथा

दक्षिणी पठार के कुछ घाटी क्षेत्रों में भी उगाया जाता है।

सतलज-गंगा के मैदान में सिंचाई की सहायता से चावल की कृषि ने उल्लेखनीय प्रगति की है। इसके मुख्य उत्पादक राज्य प० बंगाल, बिहार, उत्तरप्रदेश, आंध्रप्रदेश, उड़ीसा, छत्तीसगढ़, असम, केरल, तमिलनाडु आदि हैं। प० बंगाल में चावल की तीनों ही किस्में उपजाई जाती हैं।

चित्र 2.1 भारत : चावल का वितरण

गेहूँ :

चावल के बाद गेहूँ हमारे देश की दूसरी प्रमुख खाद्यान्न फसल है। हमारा देश विश्व का दूसरा बड़ा उत्पादक है जो विश्व का करीब 13.5 प्रतिशत गेहूँ उत्पादन करता है। यह जाड़े की ऋतु में उगाया जाता है पकते समय इसे खिली धूप की आवश्यकता होती है तथा उगाने के लिये समान रूप से वितरित 50-75 सें०मी० वार्षिक वर्षा की आवश्यकता होती है। 100 सें०मी० से अधिक वार्षिक वर्षा वाले क्षेत्र में इसकी खेती नहीं की जा सकती। 100 सेंमी० की वार्षिक वर्षा की वर्षा

चित्र 2.2 भारत : गेहूँ का वितरण

समरेखा, गेहूँ एवं चावल प्रधान क्षेत्रों को अलग करती है। सिंचाई की सहायता से गेहूँ 20 सें०मी० वार्षिक वर्षा वाले क्षेत्रों में भी उगाया जा सकता है।

1967 ई०में देश में हरित क्रांति आयी और इसका सबसे अधिक प्रभाव हमारे देश में गेहूँ की खेती पर पड़ा। 1970-71 में 1960-61 की तुलना में गेहूँ की उपज लगभग दुगुनी हो गई। गेहूँ के क्षेत्रफल तथा प्रति हेक्टेयर उपज में भी लगभग 1.5 गुने की वृद्धि हुई। किंतु भारत में प्रति हेक्टेयर गेहूँ का उत्पादन अभी भी उन्नत देशों की तुलना में बहुत कम है।

देश में कुल गेहूँ उत्पादन का 2/3 हिस्सा पंजाब, हरियाणा और उत्तर प्रदेश से प्राप्त किया जाता है। उत्तरप्रदेश देश का सबसे बड़ा गेहूँ उत्पादक राज्य है जहाँ भारत का लगभग 1/3 गेहूँ पैदा किया जाता है। बिहार एवं पश्चिम बंगाल जैसे गैर परंपरागत क्षेत्रों में इसकी खेती बढ़ी है और दोनों राज्य मिलकर देश का 8% गेहूँ का उत्पादन करते हैं। मध्यप्रदेश के मालवा के पठार तथा महाराष्ट्र में भी गेहूँ की कृषि बड़े क्षेत्र पर की जाती है।

मोटे अनाज (Milliets) - ज्वार, बाजरा और रागी देश के प्रमुख मोटे अनाज हैं। इनमें प्रचुर मात्रा में कई पोषक तत्व पाए जाते हैं। जैसे रागी में प्रचुर मात्रा में लोहा, कैल्शियम, सूक्ष्म पोषक और भूसी मिलती है।

ज्वार :- भारत में चावल और गेहूँ के बाद ज्वार सबसे प्रमुख खाद्य फसल है। इसे उन क्षेत्रों में बोया जाता है जहाँ चावल और गेहूँ की खेती नहीं की जा सकती है। यह वर्षा पर निर्भर कृषि है तथा इसमें सिंचाई की व्यवस्था उपलब्ध नहीं होती। इसका सबसे बड़ा उत्पादक राज्य महाराष्ट्र है जो 51% ज्वार पैदा करता है। कर्नाटक, आंध्रप्रदेश और मध्यप्रदेश इसके अन्य उत्पादक राज्य हैं।

मोटे तौर पर ज्वार के उत्पादन के अंतर्गत 16.5% कृषिगत भूमि लगी है और इससे भारत का 10% खाद्यान्न उपलब्ध होता है। भारत का 75% ज्वार पठारी भागों में पैदा किया जाता है।

बाजरा :- भारत की कुल कृषिगत भूमि के 7% भूमि पर यह उगाया जाता है। निर्धन लोगों के लिये एवं पशुओं का यह प्रमुख आहार है। यह बलुआ और उथली काली मिट्टी पर अधिकांशतः उगाया जाता है। बाजरा का सबसे बड़ा उत्पादक राज्य गुजरात (24%), राजस्थान (20%), उत्तरप्रदेश (13%) और महाराष्ट्र (10%) बाजरा उत्पन्न करता है।

रागी :- शुष्क प्रदेश की फसल है। यह लाल, काली, बलुआ दोमट और उथली काली मिट्टी पर अच्छी तरह उगाया जाता है। कर्नाटक इसका सबसे बड़ा उत्पादक राज्य है, इसके बाद तमिलनाडु दूसरा प्रमुख उत्पादक राज्य है। हिमाचल प्रदेश, उत्तराखण्ड, सिक्किम, झारखंड और अरूणाचल प्रदेश में भी रागी महत्वपूर्ण फसल के रूप में उगायी जाती है।

मक्का :- यह भी एक अन्य महत्वपूर्ण मोटा अनाज है जो मनुष्य के भोजन एवं पशुओं के चारा के रूप में प्रयोग किया जाता है। इसमें ग्लूकोज तथा मंड होता है। इस कारण इसे पशुओं को मोटा करने के लिये खिलाया जाता है। प्रति हेक्टेयर अधिक उत्पाद के कारण निर्धन लोगों का प्रमुख भोजन है।

यह एक खरीफ फसल है तथा इसे 21°-27° तापमान तथा 75 cm वर्षा की आवश्यकता होती है। कम वर्षा वाले क्षेत्रों में सिंचाई की आवश्यकता होती है। यह फसल नदियों द्वारा लाई गई जलोढ़ मिट्टी में बहुत अच्छी-तरह उगती है। यह मुख्यतः मैदानी भागों की फसल है। आधुनिक प्रौद्योगिक निवेश जैसे उच्च पैदावार देने वाले बीज, उर्वरक और सिंचाई के उपयोग से मक्का का उत्पादन काफी बढ़ा है। यह भारत के 3.6% कृषिगतभूमि पर उपजाया जाता है। कर्नाटक उत्तर प्रदेश, बिहार, आंध्रप्रदेश और मध्यप्रदेश मक्का के मुख्य उत्पादक राज्य हैं।

दालें :

भारत में अधिकांश जनसंख्या शाकाहारी है और हमारे भोजन में दाल प्रोटीन का स्रोत है। तूर (अरहर), उड़द, मूँग, मसूर, मटर और चना भारत की मुख्य दलहनी फसलें हैं। दालों के उत्पादन में उस अनुपात में वृद्धि नहीं हुई है, जिस अनुपात में अनाजों के उत्पादन में वृद्धि हुई है। वस्तुतः कुल फसल क्षेत्र में दालों की खेती का प्रतिशत घट गया है। दालों को कम नमी की आवश्यकता होती है अतः इन्हें शुष्क परिस्थितियों में भी उगाया जा सकता है और 90% तक इसकी खेती मुख्यतः शुष्क कृषि तकनीक के अंतर्गत की जाती है। तूर (अरहर) को छोड़ कर बाकी अन्य दालें वायु से नाइट्रोजन ले कर भूमि को उर्वर बनाती है। अतः इनको आम तौर पर अन्य फसलों के साथ फसल आवर्त्तन में रोपा जाता है। दालें खरीफ तथा रबी दोनों ही ऋतुओं में उगाई जाती है--अरहर, मूंग, उड़द आदि खरीफ की फसलें हैं जबकि चना, मटर, मसूर आदि रबी की फसलें हैं। दालों का उत्पादन बढ़ाने के लिये राष्ट्रीय दाल विकास कार्यक्रम भी 1986-87 में शुरू किया गया, पर इसके परिणाम संतोषजनक नहीं है।

गन्ना - यह बाँस की प्रजाति का एक पौधा है जिससे मीठा रस निकलता है और इससे गुड़ तथा चीनी तैयार किया जाता है। भारत को गन्ने की जन्मभूमि कहा जाता है। यह एक उष्ण एवम् उपोष्ण कटिबंधीय फसल है। यह 21°C से 27°C तापमान और 75 cm से 100 cm वार्षिक वर्षा वाले क्षेत्र में इसकी खेती की जाती है। कम वर्षा वाले प्रदेश में इसे सिंचाई की आवश्यकता होती है। यह अनेक प्रकार की मिट्टी में उगाया जाता है, किंतु गहरी दोमट मिट्टी जिसमें जल का प्रवाह अच्छा रहता है इसकी कृषि के लिये बहुत उपयुक्त है। इसकी फसल मिट्टी की उर्वरता को जल्दी ही समाप्त कर देता है इसलिये इसकी खेती में काफी मात्रा में खाद की जरुरत होती है।

भारत में यह फसल दक्षिण में कन्या कुमारी से लेकर उत्तर में पंजाब के गुरदासपुर तक उगाया जाता है, किंतु इसके मुख्य उत्पादक क्षेत्र 25° उत्तरी अक्षांश के दक्षिण में ही पाए जाते हैं। दक्षिण भारत में इसकी कृषि के लिये उत्तर भारत की तुलना में अधिक अनुकूल परिस्थितियाँ उपलब्ध हैं।

तिलहन- भारत विश्व में सबसे बड़ा तिलहन उत्पादक देश है। देश के कुल कृषिगत भूमि के 12% पर कई प्रकार की तिलहन फसलें उपजाई जाती हैं। इनसे निकाले गए तेल हमारे भोजन का मुख्य अंग है तथा कुछ औद्योगिक रूप से कच्चे माल के रूप में भी उपयोग में लाए जाते हैं।

मूँगफली, सरसों, नारियल, तिल, सोयाबीन, अरंडी, बिनौला, अलसी और सूरजमुखी आदि भारत में उगाई जाने वाली प्रमुख तिलहन हैं। कुछ तेल के बीजों को साबुन, प्रसाधन और उबटन आदि में प्रयोग किया जाता है।

मूँगफली- एक खरीफ फसल है। भारत विश्व में मूँगफली का दूसरा बड़ा उत्पादक देश है। यह देश के कुल कृषिगत भूमि के 3.6% पर पैदा किया जाता है। भारत में कुल तिलहनों का आधा उत्पादन मूँगफली से ही प्राप्त होता है। गुजरात इसके उत्पादन में भारत में सर्वप्रथम है। अन्य उत्पादक राज्यों में आंध्रप्रदेश, कर्नाटक तथा महाराष्ट्र हैं।

सरसों -

इसके अंतर्गत राई, सरसों, तोरिया, तारामीरा आदि कई तिलहन शामिल हैं। यह रबी उपोष्ण कटिबंधीय फसल है और इसकी कृषि भारत के मध्य तथा उत्तर पश्चिम भाग में रबी के

मौसम में की जाती है। पाला इसकी कृषि के लिये हानिकारक है। इस कारण से इसका उत्पादन बहुत प्रभावित होता है तथा परिवर्तनशील है। इसके उत्पादन में वृद्धि के लिये नए प्रौद्योगिकी का विकास किया गया है जिसमें उन्नत बीजों का प्रयोग तथा सिंचाई आदि शामिल हैं। इसके उत्पादन का 1/3 भाग राजस्थान द्वारा प्राप्त होता है। अन्य उत्पादक राज्य उत्तरप्रदेश, हरियाणा, पश्चिम बंगाल तथा मध्यप्रदेश है। इसकी प्रति हेक्टेयर उत्पादन हरियाणा तथा पंजाब में बहुत अधिक है।

अलसी (तीसी) – एक अन्य रबी तिलहन फसल है। इसका कई औद्योगिक उपयोग है। तिल उत्तरी भारत में खरीफ फसल है और दक्षिणी भारत में रबी की फसल है। अंडी खरीफ और रबी दोनों ही फसल के रूप में उगाई जाती है।

सोयाबीन तथा सूरजमुखी भारत के अन्य महत्त्वपूर्ण तिहलन हैं। सोयाबीन मुख्यतः मध्यप्रदेश एवं महाराष्ट्र में उपजाया जाता है। ये दोनों राज्य मिल कर भारत का 90% सोयाबीन पैदा करते हैं। सूरजमुखी की फसल मुख्यतः दक्षिणी भारत के कर्नाटक, आंध्रप्रदेश, महाराष्ट्र आदि में होता है। उत्तरी भारत में यह उतनी महत्वपूर्ण फसल नहीं है किंतु सिंचित क्षेत्रों में इसकी उपज अधिक होती है।

चाय – सदाबहार झाड़ी होती है जिसकी पत्तियों को सुखा कर चाय बनाई जाती है। इसमें थीन (thein) नामक एक पदार्थ होता है जिसके कारण इसे पीने से हल्की ताजगी महसूस होती है। यह भारत की एक महत्त्वपूर्ण पेय फसल है। इस फसल के उत्पादन में भारत विश्व में दूसरा है तथा खपत में यह विश्व का सबसे बड़ा देश है। यह रोपण कृषि के अंतर्गत आता है। सर्वप्रथम अंग्रेजों द्वारा इसकी कृषि को ब्रह्मपुत्र घाटी में 1840 में आरंभ किया गया था। यह प्रदेश आज भी देश का प्रमुख उत्पादक क्षेत्र है।

चाय उष्ण तथा उपोष्ण कटिबंधीय पौधा है जिसके लिये 25° से 30°C तापमान आवश्यक है तथा 200 से 250 सेमी वर्षा आवश्यक है। इसके लिये ढालुवाँ जमीन भी आवश्यक है ताकि पानी का जमाव जड़ों के पास नहीं हो सके। पत्तियों के निरंतर विकास के लिये आर्द्रता समान रूप से सालों भर वितरित रहना चाहिये। सुबह का कुहासा और प्रतिदिन की बौछार पत्तियों की उपज में अत्यंत सहायक है। इसकी मिट्टी सुप्रवाहित एवं उर्वरक होनी चाहिये। मिट्टी में फास्फोरस, पोटाश, लोहा तथा ह्यूमस पर्याप्त मात्रा में होना चाहिये।

झाड़ियों की सफाई एवं कटाई के लिये काफी मानव श्रम की आवश्यकता होती है। चाय की पत्तियों की ताजगी को बनाए रखने के लिये इसे बगान में ही संशोधित किया जाता है। चाय

के उत्पादन में प्रमुख एवम् गौण, दो प्रकार के, क्षेत्र हैं। प्रमुख क्षेत्र के अंतर्गत असम की ब्रह्मपुत्र एवम् सुरमा घाटी, पश्चिम बंगाल में दार्जिलिंग तथा जलपाईगुड़ी की पहाड़ियाँ तथा तमिलनाडु में नीलगिरी की पहाड़ियाँ हैं। गौण क्षेत्र में हिमाचल प्रदेश, उत्तराखंड, मेघालय, त्रिपुरा, आंध्रप्रदेश आदि राज्य हैं। भारत विश्व का अग्रणी चाय उत्पादक एवम् निर्यातक देश है।

कॉफी – चाय की तरह यह भी एक पेय पदार्थ है। यह एक प्रकार की झाड़ी पर लगे हुए फल के बीजों द्वारा प्राप्त किया जाता है।

> कॉफी की तीन प्रमुख किस्में हैं–
> 1. अरेबिका 2. लिबेरिका 3. रोबस्ता। भारत में उत्तम किस्म की अरेबिका काफी उपजाई जाती है जिसकी पूरे विश्व में माँग है। भारत में यह आरंभ में यमन से लाया गया था और बाबाबुदन की पहाड़ी पर लगाया गया।

चाय की भाँति यह भी चुनायुक्त मिट्टी में भली भाँति उगता है किंतु मिट्टी में इसे ह्यूमस अवश्य चाहिये। इसके फल को एकत्रित करने एवं बीज को भुन-पीस कॉफी पाउडर बनाने में काफी मानव श्रम की आवश्यकता होती है। भारत में लगभग सभी कॉफी दक्षिणी भारत में उगाया जाता है। कर्नाटक भारत का सबसे बड़ा उत्पादक राज्य है और यहाँ भारत का 70% कॉफी उत्पादन किया जाता है। तमिलनाडु में नीलगिरी की पहाड़ियों पर भी कॉफी की खेती की जाती है। पूर्वोत्तर भारत में त्रिपुरा प्रमुख उत्पादक राज्य है।

बागबानी फसलें

जलवायु की विविधता के कारण भारत में अनेक किस्म की बागबानी फसलें भी उपजाई जाती हैं। जैसे– विविध प्रकार के फल, सब्जियाँ, कंदमूल औषधीय एवं सुगंधदायक पौधे (aromatic plants) एवं मसाले आदि। भारत उष्ण एवं शीतोष्ण कटिबंधीय दोनों ही प्रकार के फलों का उत्पादक है।

आम के उत्पादक में भारत विश्व में अग्रणी है। यहाँ अनगिनत किस्म के आमों का उत्पादन होता है। उत्तरप्रदेश, आंध्रप्रदेश, महाराष्ट्र, पश्चिम बंगाल, बिहार आम के लिए, बिहार और उत्तरप्रदेश लीची, मेघालय अन्नानास, आंध्रप्रदेश और महाराष्ट्र-अंगूर, हिमाचल प्रदेश और जम्मू कश्मीर-सेब, नाशपाती, खुबानी और अखरोट के लिये प्रसिद्ध है। कुछ स्थानों का नाम भी विशिष्ट फलों से जुड़ा है। जैसे–नागपुर एवं चेरापुंजी का संतरा, मुजफ्फरपुर का लिची और जलगाँव का केला विशेष महत्त्व रखता है। केरल तमिलनाडु, महाराष्ट्र और मिजोरम राज्यों में बड़े स्तर पर केला की कृषि होती है।

बागबानी फसलों में काजू, काली मिर्च एवं नारियल भी महत्वपूर्ण हैं। भारत विश्व में काजू का सबसे बड़ा निर्यातक देश है। इसकी कृषि मुख्यतः केरल एवं आंध्रप्रदेश में होती है।

काली मिर्च की खेती केरल के पश्चिमी घाट प्रदेश में तथा नारियल की कृषि केरल, तमिलनाडु, आंध्रप्रदेश और कर्नाटक के तटीय प्रदेश में होती है।

अखाद्य फसलें :

रबर – भारत में इसकी बगानी कृषि 1880 ई० में ट्रावनकोर और मालाबार में प्रारंभ हुआ पर व्यवसायिक उत्पादन 1902 ई० में ही आरंभ हुआ था। रबर भूमध्यरेखीय जलवायु की फसल है और इसके उत्पादन के लिये अधिक तापमान और आर्द्रता की आवश्यकता होती है। केरल, तमिलनाडु, कर्नाटक, अंडमान-निकोबार द्वीपसमूह और मेघालय के गारो पहाड़ियों में इसकी कृषि होती है।

रेशेदार फसलें :

कपास, जूट, मन और प्राकृतिक रेशम भारत के चार प्रमुख रेशेदार फसलें हैं। इसमें से प्राकृतिक रेशम, रेशम के कीड़े के कोकून से प्राप्त होता है। रेशम का कीड़ा शहतूत के पत्तों को खा कर बड़ा होता है। किन्तु प्रथम तीन रेशेदार फसलें, मिट्टी में उगायी जाती हैं।

कपास :

भारत को कपास का मूल स्थान माना जाता है। सूती वस्त्र उद्योग के लिये यह कच्चा माल प्रदान करता है। यह उपोष्ण तथा उष्ण कटिबंधीय पौधा है तथा प्रमुखतः इसे 210 दिन पाला रहित मौसम की आवश्यकता होती है। लावा निर्मित काली मिट्टी भारत में कपास उत्पादन में बहुत उपयुक्त है क्योंकि यह अपने में अधिक समय तक नमी बनाए रखती है।

तेज और चमकीली धूप कपास के पौधों को बढ़ने में सहायता देती है। पकते समय शुष्क वातावरण की आवश्यकता होती है। इसे पक कर तैयार होने में 6 से 8 महीने लगते हैं। यह एक खरीफ फसल है। महाराष्ट्र, गुजरात, मध्यप्रदेश, कर्नाटक, आंध्रप्रदेश, तमिलनाडु, पंजाब, हरियाणा और उत्तरप्रदेश कपास के मुख्य उत्पादक राज्य हैं। यहाँ छोटे रेशे वाली कपास उगाई जाती है।

जूट :

कपास के बाद जूट भारत की दूसरी महत्वपूर्ण रेशेदार फसल है। इसे सुनहरा रेशा (Golden fibre) भी कहते हैं। बाढ़ के मैदान (Flood plain) में जब हर वर्ष नई उपजाऊ मिट्टी

का निक्षेपण होता है तो उसमें जूट की फसल बहुत अच्छी होती है। इसके लिये चीकायुक्त मिट्टी की आवश्यकता होती है। इसकी अन्य आवश्यकताएँ गर्म एवं आर्द्र जलवायु है तथा रेशा तैयार होने के बाद इसे सड़ाने के लिये पर्याप्त पानी की आवश्यकता होती है। नदी का जलप्रवाह इसकी खेती के लिये उपयुक्त दशा प्रदान करता है। नदियों के डेल्टा तथा गंगा के निचला मैदान इसकी खेती के लिए उपयुक्त है। पारंपरिक रूप से जूट द्वारा रस्सी, चट एवं बोरा आदि बनाया जाता है जिसका पैकिंग में उपयोग किया जाता है। अब इससे वस्त्र एवम् आकर्षक दस्तकारी की चीजें भी बनाई जा रही हैं जिनकी देश-विदेश में काफी मांग है।

प्रौद्योगिकीय और संस्थागत सुधार-भारत में कृषि हजारों वर्षों से की जा रही है। किंतु परंपरागत तरीके तथा संस्थागत व्यवस्था में समय के साथ परिवर्तन नहीं होने के कारण कृषि में काफी पिछड़ापन पाया जाता है। जनाधिक्य के कारण जोतों का विखंडन हुआ है। इससे कृषि कार्य आर्थिक रूप से लाभप्रद नहीं रह गया है। भारत में अधिकांश कृषि मॉनसून पर निर्भर करती है और सिंचाई के साधनों का बहुत सीमित विकास हुआ है। बढ़ती हुई जनसंख्या के लिये कृषि को अर्थव्यवस्था का विकसित अंग बनाना एक महत्वपूर्ण चुनौती है। इसमें तकनीकी एवं संस्थागत सुधार लाने की अत्यंत आवश्यकता है क्योंकि इसके बिना कृषि में सुधार लाना अत्यंत कठिन है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद जोतों की चकबंदी, जमींदारी प्रथा की समाप्ति तथा सहकारिता को विकसित करने का भी प्रयास किया गया है।

प्रथम पंचवर्षीय योजना में भूमि सुधार को मुख्य रूप से लक्षित किया गया। किंतु भूमि सुधार अधिनियम का क्रियान्वयन ठीक तरीके से नहीं हो सका। 1960-70 के दशक में कृषि में सुधार के लिए एक विशेष पैकेज भी लायी गयी।

इसी पैकेज से गेहूँ की कृषि में हरित क्रांति की शुरुआत हुई। इसके अंतर्गत उन्नत किस्म के संकर बीज (HYVSeed) रासायनिक खाद, सिंचाई, कीटनाशक आदि का व्यापक प्रयोग कर खाद्य उत्पादन में अप्रत्याशित वृद्धि की गई तथा खाद्य सुरक्षा में यह एक मील का पत्थर साबित हुआ। इसी दौरान श्वेत क्रांति (आपरेशन फ्लड) भी लाई गई जिसके अंतर्गत दुग्ध उत्पादन में अप्रत्याशित वृद्धि हुई। इस क्रांति को आगे बढ़ाने में सहकारिता विभाग पर भारत सरकार ने काफी ध्यान दिया।

1980 तथा 1990 के दशकों में व्यापक भूमि विकास कार्यक्रम शुरू हुआ । इसमें संस्थागत तथा तकनीकी विकास कार्यक्रम पर विशेष ध्यान दिया गया । वर्षाधीन क्षेत्रों को कृषि की उन्नति का इसमें विशेष प्रयास किया गया । प्राकृतिक आपदाओं से होने वाली क्षति से किसानों को सुरक्षित करने के लिये फसल बीमा योजना लागू की गई । किसानों को कम दर पर ऋण उपलब्ध कराने के लिये ग्रामीण बैंक, सहकारी समितियाँ एवम अन्य बैंक स्थापित किये गए । भारत सरकार ने किसान क्रेडिट कार्ड और व्यक्तिगत दुर्घटना योजना (PAIS) लागू किया है । इसके अलावा दूरदर्शन और आकाशवाणी पर कृषि से संबंधित जानकारियों को विभिन्न कार्यक्रमों के माध्यम से प्रसारित किया जाता है । बिचौलियों के शोषण से किसानों को सुरक्षित रखने के लिये न्यूनतम समर्थन मूल्य एवम् कुछ महत्वपूर्ण फसलों के लिये लाभदायक खरीद मूल्य की सरकार घोषणा करती है ।

1980 के दशक में कृषि प्रदेश योजना (Agro - climatic planning) की शुरुआत हुई तथा कृषि विकास में प्रादेशिक संतुलन को बल मिला । इस दशक में कृषि विविधता पर जोर दिया गया । जैसे अधिक मूल्यों वाली औषधीय पौधों की खेती आदि । कृषि में फसलों की खेती के अलावा दुधारू पशुओं का पालन, मुर्गी पालन, पशुपालन, मछली पालन आदि के विकास को बहुत प्रोत्साहित किया गया ।

कृषि का राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था, रोजगार और उत्पादन में योगदान :

भारत कृषि प्रधान देश होने के कारण भारतीय कृषि अर्थव्यवस्था में नींव के पत्थर की भाँति महत्व रखती है । 2011 में देश की लगभग 54.6% जनसंख्या कृषि से रोजगार प्राप्त की । किंतु स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से आज तक सकल घरेलू उत्पाद में कृषि का योगदान लगातार घट रहा है जो एक चिंता का विषय है । कृषि में गिरावट समाज के अन्य क्षेत्रों में गिरावट लाएगा तथा यह क्षेत्रीय विषमता को बढ़ावा देगा । यह सर्वथा कृषि पर आश्रित लोगों के हित में नहीं है ।

कृषि के महत्व को समझते हुए भारत सरकार ने इसके विकास एवम् वृद्धि के लिये इसके आधुनिकीकरण का प्रयास किया है । इसके अंतर्गत भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद एवम् कृषि विश्वविद्यालयों की स्थापना, पशु चिकित्सा सेवाएँ तथा पशु प्रजनन केन्द्र की स्थापना, बागवानी-विकास, मौसम विज्ञान और मौसम के पूर्वानुमान के क्षेत्र में अनुसंधान और विकास आदि को प्राथमिकता दी गई है ।

सकल घरेलू उत्पाद में वृद्धि

	1980 -91	1992 -2001
कृषि	3.6	3.3
उद्योग	7.1	6.5
सेवाएँ	6.7	8.2

उपरोक्त तालिका से यह स्पष्ट है कि सकल घरेलू उत्पाद में वृद्धि हुई है परंतु इससे देश में पर्याप्त रोजगार नहीं हो पाए हैं । कृषि में विकास दर कम हो रही है और यह स्थिति चिंताजनक है ।

वैश्वीकरण का भारतीय कृषि पर बहुत प्रभाव पड़ रहा है । वैश्वीकरण का अर्थ है देश की अर्थव्यवस्था का विश्व की अर्थव्यवस्था के साथ जुड़ना । इसने भारतीय बाजार को विश्व के बाजार के लिये खोल दिया है । अंतर्राष्ट्रीय व्यापार पर सरकारी तंत्र की पकड़ ढीली हो गई है । अब विदेशी उत्पाद जिसमें कृषिजन्य उत्पाद भी शामिल हैं, आसानी से भारत में बेचे जा सकते हैं । इस अंतर्राष्ट्रीय प्रतिस्पर्धा से भारतीय किसान को एक बहुत बड़ी चुनौती का सामना करना पड़ रहा है। भारतीय कृषि कई प्रकार की समस्याओं से जूझ रही है । इसकी सबसे बड़ी समस्या

निम्न उत्पादकता के मुख्य कारक

(i) जनसंख्या का कृषि भूमि पर निरंतर बढ़ता दबाव
(ii) घटता कृषि भूमि क्षेत्र
(iii) खेतों का छोटा आकार
(iv) भू – स्वामित्व प्रणाली
(v) सिंचाई की कम और अनिश्चित सुविधाएँ
(vi) मानसूनी वर्षा की अनिश्चितता
(vii) कृषि योग्य भूमि का निम्नीकरण
(viii) कम पूँजी निवेश
(ix) आधुनिक कृषि तकनीक (HYv seed , कीटनाशक, रासायनिक खाद आधुनिक यंत्र) का सीमित उपयोग
(x) कृषि शोध एवम् प्रचार एवम् प्रसार तंत्रों का अच्छी स्थिति में नहीं होना
(xi) कृषि उत्पादों का उचित मूल्य न मिलना
(xii) सालों भर काम का अभाव ।
(xiii) कृषि में वाणिज्यीकरण का अभाव

फसलों का प्रति एकड़ कम उत्पादन है । भारत में भूमि की प्रति इकाई में फसलों का उत्पादन जापान का 1/3 और संयुक्तराज्य अमेरिका का 1/4 है ।

वैश्विक प्रतिस्पर्धा का सामना करने के लिए भारत को अपनी कृषि संबंधित क्षमताओं को सुनियोजित ढंग से उपयोग करना होगा। जैव प्रौद्योगिकी के उपयोग के अलावा राष्ट्रीय बाजार का एकीकरण इस दिशा में एक महत्त्वपूर्ण कदम हो सकता है। इसके लिए सड़क, बिजली, सिंचाई, ऋण की सुविधा आदि उपलब्ध करना परम आवश्यक है। इसके बिना कृषि को वैश्वीकरण के अनुचित प्रभाव से बचा पाना संभव नहीं है।

खाद्य सुरक्षा : रोटी, कपड़ा और मकान यह हमारी मूलभूत आवश्यकता है। भोजन के साथ-साथ पोषण प्राप्त करना यह सभी नागरिकों के लिए अत्यंत आवश्यक है। हमारे देश के उन क्षेत्रों में जहाँ निर्धनता अधिक व्याप्त है वहाँ भुखमरी की समस्या है। इसके निराकरण के लिए सरकार ने खाद्य सुरक्षा प्रणाली बनाई है। इसके प्रमुखतः दो अंग हैं–

(i) बफर स्टॉक एवम् (ii) जन वितरण प्रणाली (पी०डी०एस०)

इसके अंतर्गत सस्ती दरों पर आवश्यक सामग्री एवम् अनाज शहरों एवम् ग्रामीण क्षेत्र के निवासियों को मुहैया कराई जाती है। इससे गरीब लोगों को भोजन सुलभ हो गया है। बफर स्टॉक बनाने में (FCI) फूड कॉरपोरेशन ऑफ इंडिया सक्रिय है। न्यूनतम समर्थन मूल्य पर यह किसानों से अनाज खरीद कर उसका भंडारण करती है।

उपभोक्ताओं को दो वर्गों में बाँटा गा है– गरीबी रेखा से नीचे (Below Poverty Line–B.P.L.) और गरीबी रेखा से ऊपर (Above Poverty Line–A.P.L.) इन वर्गों में आने वाले लोगों के लिए चीजों की कीमतों में भिन्नता है। यह वर्गीकरण अपने आप में पूर्ण नहीं है। इसमें अनेक हकदार गरीब लोग BPL वर्ग में शामिल नहीं हो पाए हैं और बहुत से लोग जो APL वर्ग के एकदम अंतिम छोर पर हैं एक फसल बर्बाद होने पर BPL की श्रेणी में आ जाते हैं। किंतु उनकी गिनती BPL श्रेणी में नहीं हुई है। प्रशासकीय दृष्टि से एकदम सही वर्गीकरण करने में कई व्यवहारिक कठिनाइयाँ हैं।

खाद्यान्न (उत्पादन मिलियन टन में)

वर्ष	चावल	गेहूँ	मोटे अनाज	दलहन	कुल
2000-2001	85.0	70.0	31.0	11.0	197.0
2001-2002	93.0	73.0	33.0	13.0	213.0
2002-2003	72.0	66.0	26.0	11.0	175.0
2003-2004	88.0	72.0	38.0	15.0	213.0
2004-2005	85.0	72.0	34.0	13.0	205
2005-2006	92.0	69.0	35.0	13.0	209.0
2006-2007	93.0	76.0	34.0	14.0	217.0
2007-2008	96.0	77.0	40.0	15.0	228.0

स्रोत : भारत 2008, प्रकाशन विभाग

कृषि के क्षेत्र में मौलिक संरचना जैसे बिजली-सिंचाई ग्रामीण सड़कें आदि में आवश्यक सुधार जितनी जल्दी किया जाए कृषि के विकास के लिए वह उतना ही आवश्यक है। गेहूँ चावल की अपेक्षा उस क्षेत्र में उगने वाली खाद्य फसलों को बढ़ावा दिया जाना चाहिये जिसमें वृद्धि की बेहतर संभावनाएँ हों। सतत पोषणीय आधार पर खाद्यान्न उत्पादन में वृद्धि करना अत्यंत आवश्यक है। क्योंकि भारत की बढ़ती हुई जनसंख्या को खाद्य सुरक्षा की जरूरत है। फल, सब्जी, तिलहन, औद्योगिक फसलों आदि की खेती में लगी हुई भूमि में निरंतर वृद्धि हो रही है। वहीं दूसरी ओर खाद्यान्न एवम् दालों के अंतर्गत लगी भूमि निरंतर घट रही है। बढ़ती जनसंख्या के कारण गैर कृषि कार्यों के अंतर्गत भूमि का प्रतिशत बढ़ रहा है। हरित क्रांति में लगाए गए प्रौद्योगिकी (कीट नाशी, पीड़क नाशी, रासायनिक उर्वरक) के कारण मिट्टी का निम्नीकरण एक भारी समस्या है। सिंचाई या असक्षम जल प्रबंधन से जलक्रांतता (Water logging) और लवणता (Salinity) की समस्याएँ पैदा हो गई हैं। किसानों को मुफ्त बिजली मिलने के कारण भूमिगत जल को सिंचाई के साधनों द्वारा अंधाधुंध उपयोग किया जाने लगा। फलतः भूमिगत जल के भंडारण के कारण नलकूप सूख गए

हैं। इससे छोटे एवम् सीमांत किसान खेती छोड़ने पर मजबूर हो गए हैं। हालाँकि बड़े किसानों को गहरे एवम् नलकूप से भी जल की सुविधा है। इसी तरह अपर्याप्त भंडारण की सुविधा एवम् बाजार के पर्याप्त अभाव के कारण किसानों का उत्पादन प्रभावित होता है। किसानों को इस तरह दुहरा नुकसान उठाना पड़ता है। इन्हें खेतों में अच्छी उपज लेने के लिए महँगा पूँजी निवेश करना पड़ता है तो दूसरी ओर फसल पर उचित समर्थन मूल्य न मिलने या किसी प्राकृतिक आपदा के कारण फसल क्षति सहना पड़ता है। मजबूरी में फसल उत्पाद को बेचना पड़ता है। अतः छोटे किसानों को सुरक्षा के बिना सुरक्षा संभव नहीं है।

पारिभाषिक शब्द :

वर्धन काल : फसल के बोने, बढ़ने और पकने के लिए उपयुक्त मौसम वाला समय।

हरित क्रांति : हमारे देश की कृषि में क्रांतिकारी विकास। इसमें मुख्यतः नए बीजों, खादों और उर्वरकों का प्रयोग तथा सुनिश्चित जलापूर्ति की व्यवस्था के फलस्वरूप कुछ अनाजों की उपज में अधिक वृद्धि हुई।

रोपण कृषि : बड़ी-बड़ी आर्थिक इकाइयों में व्यापारिक उत्पादन के लिए एक या एक से अधिक किस्म के पौधों के रोपण की पद्धति।

पशुपालन एवम् दुग्ध विकास भारतीय कृषि में छोटे एवम् सीमांत किसानों के विकास में बहुत सहायक हैं। इसके द्वारा इनकी आमदनी को बढ़ाया जा रहा है तथा इनके जीवन स्तर को सुधारा जा रहा है। इसके माध्यम से अर्द्ध शहरी क्षेत्रों, आदिवासी बहुल क्षेत्रों एवम् सूखा ग्रस्त क्षेत्रों के निवासियों की आमदनी के वृद्धि की बहुत संभावनाए हैं।

भारत में विश्व का सबसे अधिक पशुधन है। यहाँ विश्व का 57% भैंस तथा विश्व का 14% गाय (2003) की जनसंख्या रहती है। आपरेशन फ्लड द्वारा देश में दुग्ध उत्पादन में काफी वृद्धि लाई गई। सहकारी तंत्रों को विकसित कर इस क्षेत्र में उजाला क्रांति को अंजाम दिया गया। बिहार में सुधा दुग्ध सहकारी समिति इस क्षेत्र में किसानों के लिए कार्यरत है।

बागवानी कृषि का भी विकल्प अब भारतीय कृषि के क्षितिज पर चमक रहा है। स्वयं सहायता समूह स्वयंसेवी संगठन इस क्षेत्र में काम कर रहे हैं। सब्जियों, फलों, फूलों, औषधीय जड़ी-बूटियाँ आदि की कृषि काफी जोर पकड़ते जा रही है।

अभ्यास-प्रश्न

1. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दें :

(क) भारत के दो सबसे महत्वपूर्ण अनाजों के नाम बताओ।

(ख) भारत में कौन से तीन प्रमुख मोटे अनाज उगाए जाते हैं?

(ग) भारत की तीन नकदी फसलों के नाम बताओ।

(घ) हमारे देश की सबसे प्रमुख रोपण फसल कौन-सी है ?

2. अंतर बताओ :

(क) नकदी फसल और रोपण फसल।

(ख) व्यापारिक कृषि और निर्वाहक कृषि।

3. निम्नलिखित में से प्रत्येक के लिए एक शब्द लिखो :

(क) हमारे देश में मौनसून के आरंभ में बोई जाने वाली और शरद ऋतु में काटी जाने वाली फसल।

(ख) वर्षा के पश्चात् जाड़े में बोई जाने वाली और वसंत में काटी जाने वाली फसलें।

(ग) भूमि जिसे खेती करके छोड़ दिया गया है ताकि उर्वरता लौट सके और उस पर पुनः खेती हो सके।

(घ) कारखाने के उत्पादन से मिलती-जुलती वैज्ञानिक तथा व्यापारिक ढंग से की जाने वाली एक फसली खेती

लघु उत्तरीय प्रश्न :

1. भारत में उपजने वाली दो खाद्य, नकदी एवं रेशेवाली फसलों का नाम लिखो।
2. उपर्युक्त फसलों के उत्पादन करने वाले दो प्रमुख राज्यों का नाम लिखो।
3. भारत में उपजाए जाने वाले वर्षाधीन फसलों के नाम लिखो।

4. शुद्ध राष्ट्रीय उत्पाद में कृषि के योगदान की चर्चा कीजिए।

5. भारतीय कृषि की निम्न उत्पादकता के कारणों को संक्षेप में लिखिए।

6. हरित क्रांति से आप क्या समझते हैं?

7. भारतीय कृषि की (5) पाँच प्रमुख विशेषताओं को लिखिए।

8. भारत में उपजाए जानेवाले प्रमुख खाद्य एवं व्यावसायिक फसलों के नाम लिखिए।

कारण बताओ :

1. कपास की खेती दक्कन प्रदेश की काली मिट्टी में अधिकांशतः होती है।

2. गन्ने की उपज उत्तरी भारत की अपेक्षा दक्षिण भारत में अधिक है।

3. भारत कपास का आयात एवम् निर्यात दोनों करता है।

4. भारत विश्व का एक अग्रणी चाय निर्यातक देश है।

मानचित्र कार्य :

भारत के रेखा मानचित्र में चावल, गेहूँ, चाय और कपास पैदा करने वाले क्षेत्र दिखाओ।

इकाई-3

निर्माण उद्योग

वर्तमान समय में विनिर्माण उद्योग किसी भी राष्ट्र के विकास और संपन्नता का सूचक है। कच्चे मालों द्वारा जीवनोपयोगी वस्तुएँ तैयार करना विनिर्माण उद्योग कहलाता है। जैसे -कपास से कपड़ा, गन्ने से चीनी, लौह-अयस्क से लोहा एवं इस्पात, बॉक्साइट से एल्यूमिनियम आदि वस्तुओं का निर्माण होता है। हमारे देश में विनिर्माण उद्योग का इतिहास बहुत पुराना है। यहाँ इसका विकास घरेलू उद्योग से शुरू होकर वृहत आकार में 19 वीं शताब्दी के मध्य आरंभ हुआ। आज असंख्य बड़े निर्माण उद्योग पूरे देश में स्थापित हैं। इसमें मुख्य रूप से लौह-इस्पात उद्योग, वस्त्र उद्योग, चीनी उद्योग, सूचना एवं प्रौद्योगिकी उद्योग सम्मिलित है।

भारत में आधुनिक औद्योगिक विकास का प्रारंभ मुम्बई में प्रथम सूती कपड़े की मिल की स्थापना (1854) से हुआ था। जूट का पहला कारखाना सन् 1855 में कोलकाता के निकट रिशरा नामक स्थान पर लगाया गया था, लेकिन भारत में उद्योगों का योजनाबद्ध विकास स्वतंत्रता के बाद 1951 ई० से प्रारंभ होता है।

किसी उद्योग को स्थापित करने में कई कारकों का योगदान होता है। इन कारकों को दो वर्गों-भौतिक और मानवीय कारकों में रखा जा सकता है। कच्चा माल, शक्ति के साधन व जल की सुलभता तथा अनुकूल जलवायु, भौतिक कारक हैं, जबकि श्रमिक, बाजार, परिवहन, पूँजी व बैंक सुविधा तथा सरकारी नीतियाँ, मानवीय कारक हैं।

उद्योगों का वर्गीकरण :- उद्योगों का वर्गीकरण विभिन्न आधारों पर किया जा सकता है।

1. श्रम के आधार पर :-

(i) **बड़े पैमाने का उद्योग** : जब उद्योगों में बड़ी मात्रा में श्रमिकों और पूँजी का प्रयोग हो तथा अधिक उत्पादन हो तो उन्हें बड़े पैमाने का उद्योग कहते हैं। सूती कपड़ा उद्योग, पटसन उद्योग, इस श्रेणी में आते हैं।

(ii) मध्यम पैमाने का उद्योग : इसमें न तो बहुत अधिक श्रम का प्रयोग होता है, और न ही बहुत उत्पादन होता है। साईकिल, रेडियो, और टेलीविजन, जैसे उद्योगों को इस वर्ग में रखा जा सकता है।

(iii) छोटे पैमाने का उद्योग : ग्रामीण लघु तथा घरेलू उद्योग छोटे पैमाने के उद्योग हैं जो परिवारों के सदस्यों तक ही सीमित रहता है। इसमें परिवार के सदस्य मिलकर सरल विधियों से वस्तु निर्माण करते हैं। इसमें पूँजी भी बहुत कम लगाई जाती है। आभूषण निर्माण तथा हस्तशिल्प उद्योग इसके अच्छे उदाहरण हैं।

2. कच्चे माल के आधार पर :

(i) भारी उद्योग : इन उद्योगों में भारी कच्चे माल का प्रयोग होता है। जिससे विनिर्मित वस्तुएँ भी भारी होती हैं। लोहा एवं इस्पात उद्योग इसका अच्छा उदाहरण है।

(ii) हल्के उद्योग : इस वर्ग के उद्योगों में हल्के कच्चे माल का प्रयोग होता है। जिससे ये हल्के माल का निर्माण करते हैं। इलेक्ट्रानिक उपकरण तथा सिलाई मशीन उद्योग, इसके उत्तम उदाहरण हैं।

3. स्वामित्व के आधार पर :

(i) सार्वजनिक उद्योग :- इसमें भारी तथा आधारभूत उद्योग सम्मिलित हैं। इनका संचालन सरकार स्वयं करती है। दुर्गापुर, भिलाई, राउरकेला के लोहा इस्पात केन्द्र सार्वजनिक उद्योग के उदाहरण हैं।

> **क्या आप जानते हैं?**
> Bhel - भारत हैवी इलक्ट्रीक लिमिटेड तथा
> Sail - स्टील अथिरिटी ऑफ इण्डिया सार्वजनिक उद्यम हैं।

(ii) संयुक्त अथवा सहकारी उद्योग :- जब उद्योगों में दो या दो से अधिक व्यक्तियों या सहकारी समितियों का योगदान हो तो उसे संयुक्त अथवा सहकारी उद्योग कहा जाता है। ऑयल इंडिया लिमिटेड (ऑइल) महाराष्ट्र के चीनी उद्योग, अमूल(गुजरात) इसके उत्तम उदाहरण हैं।

4. कच्चे माल के स्रोत के आधार पर :

(i) कृषि आधारित उद्योग :- सूती वस्त्र, जूट, रेशमी और ऊनी वस्त्र तथा खाद्य तेल कृषि से प्राप्त कच्चे माल पर आधारित उद्योग हैं।

सूती वस्त्र उद्योग :

सूती वस्त्र बनाने में भारत का एकाधिकार बहुत प्राचीन काल से चला आ रहा है। परन्तु आधुनिक पहली सूती मिल की स्थापना सन 1818 ई० कोलकाता के निकट फोर्ट-ग्लास्टर (Fort Gloster) नामक स्थान पर स्थापित की गई। लेकिन यह मिल कुछ समय बाद बंद हो गई और वास्तविक पहली सफल मिल मुम्बई में सन 1854 ई० में कावस जी नानाभाई डावर ने लगाई और इसके बाद भारत में आधुनिक वस्त्र उद्योग का विकास होने लगा।

सूती वस्त्र उद्योग आज भारत का सबसे विशाल उद्योग है। यह कृषि के बाद रोजगार प्रदान करने वाला दूसरा सबसे बड़ा क्षेत्र है जिसमें विभिन्न उद्योगों में लगे श्रम का लगभग 20 प्रतिशत से अधिक पाया जाता है। वर्तमान में औद्योगिक उत्पादन में इसका स्थान 14 प्रतिशत है और सकल घरेलू उत्पादन में इसका योगदान 2.3 प्रतिशत है; एवं विदेशी आय में 17 प्रतिशत है। (2006-07) देश में लगभग 1600 सूती और कृत्रिम वस्त्र बनाने वाली मिलें हैं। इसमें 80 प्रतिशत मिलें निजी क्षेत्र में हैं। शेष सार्वजनिक एवं सहकारी क्षेत्रों में हैं। आज देश में 93 प्रतिशत सूती वस्त्र विकेन्द्रीकृत क्षेत्र में तैयार किया जाता है। अर्थात मिलों के अलावा कपड़ा विभिन्न केन्द्रों में तैयार किया जाता है। प्रारंभिक वर्षों में सूती वस्त्र उद्योग की अधिकांश मिलें महाराष्ट्र और गुजरात में स्थापित थीं। कपास, बाजार, परिवहन और आर्द्र जलवायु की उपलब्धता ने इन राज्यों में सूती मिलों को स्थापित करने में विशेष योगदान दिया है। परन्तु आज देश की अधिकांश मिलें महाराष्ट्र, गुजरात, पश्चिम बंगाल, उत्तर प्रदेश, तथा तमिलनाडु में केन्द्रित हैं। महाराष्ट्र में मुम्बई, शोलापुर, पुणे, वर्धा, नागपुर, औरंगाबाद और जलगाँव सूती वस्त्र उद्योग के केन्द्र हैं। गुजरात में अहमदाबाद, बड़ोदरा, सूरत, राजकोट और पोरबंदर प्रमुख सूती वस्त्र उद्योग के केन्द्र हैं।

क्या आप जानते हैं?

मुम्बई को सूती कपड़ों की महानगरी (Cotton Polis) कहा जाता है। क्योंकि सिर्फ मुम्बई महानगरी क्षेत्र में भारत का लगभग एक चौथाई सूती वस्त्र तैयार किया जाता है।

पश्चिम बंगाल में हावड़ा, मुर्शिदाबाद, हुगली और श्रीरामपुर प्रमुख केन्द्र हैं। उत्तर प्रदेश में कानपुर, मुरादाबाद, आगरा और मोदीनगर प्रमुख केन्द्र हैं। ग्वालियर, उज्जैन, इंदौर और देवास मध्यप्रदेश के प्रमुख सूती वस्त्र उद्योग केन्द्र हैं। कोयम्बटूर, चेन्नई और मदुरै तमिलनाडु के महत्वपूर्ण केन्द्र हैं। विस्तृत बाजार, परिवहन, बैंक, तथा विद्युत सुविधाओं ने देश में सूती वस्त्र उद्योग के विकेन्द्रीकरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। सम्पूर्ण भारत में सूती वस्त्र के बाजार एवं कच्चे माल का वजन ह्रास उद्योग न होने के कारण भी इस उद्योग का राष्ट्रव्यापी विकेन्द्रीकरण हुआ है।

चित्र-3.1 भारत : वस्त्र उद्योग

आज सूतीवस्त्र उद्योग कई समस्याओं से ग्रसित है। इनमें उत्तम किस्म के कपास की कमी, कम उत्पादकता देने वाली परम्परागत मशीनों की प्रधानता, अनियमित विद्युत आपूर्ति, निम्न उत्पादकता तथा कृत्रिम रेशे से निर्मित वस्त्रों के साथ कड़ी स्पर्धा शामिल है।

इन्हें भी जानें!

देश में पहला वस्त्र पार्क-सिले सिलाए वस्त्रों के निर्यात संवर्द्धन के लिए एक वस्त्र पार्क (Apparel Park) की स्थापना तमिलनाडु में तिरुपुर में पट्टीवरम्पलायम गाँव में किया गया है।

भारत से सूती कपड़ों का निर्यात मुख्यतः सिले-सिलाए कपड़ों के रूप में होता है। संयुक्त राज्य अमेरिका, यूनाइटेड किंगडम, रूस, फ्रांस, यूरोप के पूर्वी देश, नेपाल, सिंगापुर, श्रीलंका और अफ्रीकी देश भारतीय सूती वस्त्र के मुख्य आयातक देश हैं। भारत जापान को भी सूतीवस्त्र निर्यात करता है। वर्ष 2006-07 में 36.10 करोड़ वर्ग मीटर कपड़ा भारत में तैयार किया गया।

जूट या पटसन उद्योग :

सूती वस्त्र के बाद जूट उद्योग भारत का दूसरा महत्त्वपूर्ण वस्त्र उद्योग है। कच्चे जूट और जूट से बने सामान के उत्पादन में भारत का संसार में पहला स्थान है। जूट के सामान के निर्यात में भारत का बंगलादेश के बाद संसार में दूसरा स्थान है। भारत में जूट के 77 कारखाने हैं। (2006-07), इनमें 69 मिलें पश्चिम बंगाल में हैं। पश्चिम बंगाल में 80 प्रतिशत से अधिक जूट के सामानों का उत्पादन होता है। आंध्र प्रदेश में 10 प्रतिशत जूट का सामान तैयार होता है। शेष जूट का सामान बिहार, उत्तर प्रदेश, उड़ीसा, असम, और त्रिपुरा में तैयार किया जाता है।

पश्चिम बंगाल में अधिकांश मिलें हुगली नदी के किनारे पर 98 किलोमीटर लम्बी तथा 3 किलोमीटर एक संकरी मेखला में स्थित है। यहाँ मिलों के संकेंद्रित होने के निम्न कारण हैं। जूट उत्पादन क्षेत्रों की निकटता, सस्ते जल परिवहन, कच्चे जूट को संसाधित करने के लिए पर्याप्त मात्रा में जल की उपलब्धता इत्यादि इसके अतिरिक्त सस्ते श्रमिकों, बैंकों और बीमा सुविधाओं तथा निर्यात के लिए बंदरगाह सुविधाओं ने जूट उद्योग को यहाँ संकेन्द्रित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। आज यह उद्योग लगभग 2.61 लाख लोगों को प्रत्यक्ष रूप में रोजगार मुहैया कराता है। वर्ष (2006-07) में कच्चे जूट का उत्पादन 90 लाख गांठें (प्रति गांठ 180 किलोग्राम) था।

चित्र-3.2 : हुगली प्रदेश में जूट वस्त्र उद्योग के संकेन्द्रण

स्वतंत्रता से पहले और बाद में भी भारत को जूट उद्योग निर्यात के द्वारा **अच्छी मात्रा में** विदेशी मुद्रा अर्जित करता रहा है। इस समय जूट उद्योग कई चुनौतियों का सामना कर रहा है। ऊँची उत्पादन लागत, अंतर्राष्ट्रीय बाजार में कृत्रिम धागों से तैयार सामान और बांग्लादेश, ब्राजील, फिलिपिन्स, मिस्र और थाइलैण्ड जैसे अन्य देशों से कड़ी प्रतिस्पर्धा शामिल है। संयुक्त राज्य अमेरिका, कनाडा, रूस, अरब देश और यूनाइटेड किंगडम और आस्ट्रेलिया भारतीय जूट उत्पादों के प्रमुख ग्राहक हैं।

ऊनी वस्त्र उद्योग :

यह देश के सबसे पुराने वस्त्र उद्योगों में से है। ऊनी वस्त्र उद्योग का संकेन्द्र पंजाब, महाराष्ट्र, उत्तर प्रदेश, गुजरात, हरियाणा और राजस्थान राज्यों में हैं। धारीवाल, लुधियाना और

अमृतसर पंजाब के प्रमुख केन्द्र हैं। महाराष्ट्र में मुम्बई इसका सबसे बड़ा केन्द्र है। बीकानेर और जयपुर, राजस्थान में ऊनी वस्त्र उद्योग के महत्त्वपूर्ण केन्द्र हैं। जम्मू और कश्मीर में श्रीनगर तथा कर्नाटक में बंगलौर भी देश के ऊनी वस्त्र उद्योग के महत्त्वपूर्ण केन्द्र हैं। वस्त्र एवं पोशाक उत्पादक इकाइयाँ मुख्यतः पंजाब, हरियाणा तथा तमिलनाडु में स्थित हैं। भारतीय ऊन का सामान, संयुक्त राज्य अमेरिका, रूस, यूनाइटेड किंगडम, कनाडा और यूरोप के देशों को निर्यात किया जाता है। देश के ऊनी वस्त्र उद्योग के सामने कच्चे ऊन की आंतरिक बाजार की कमी और उत्पादों की निम्न गुणवत्ता प्रमुख समस्याएं है। इन समस्याओं के बावजूद भी आज भारत विश्व में ऊन का सातवाँ सबसे बड़ा उत्पादक है। और विश्व के कुल उत्पादन का 1.8 प्रतिशत का योगदान करता है। (वर्ष 2005-06) में 55.00 मिलियन किलोग्राम ऊन का उत्पादन भारत में हुआ था।

क्या आप जानते हैं?
पसमीना ऊन : एक विशेष नस्ल की बकरियों के बालों (रोएँ) से तैयार किया जाता है, जो बहुत ही नरम और मुलायम होता है और अतिगर्मी प्रदान करता है। ये बकरियाँ कश्मीर के उच्च पर्वतीय क्षेत्रों में गुर्जरों द्वारा पाली जाती हैं।

ज्ञान बढ़ाएँ!
अंगूरा का ऊन खरगोश के रोएँ से प्राप्त किया जाता है।

रेशमी वस्त्र :

भारत प्रारंभ से ही रेशम से बनी वस्तुओं के उत्पादन के लिए विश्व प्रसिद्ध रहा है। देश में चार प्रकार के रेशम मलबरी, टसर, ईरी और मूँगा पैदा की जाती है। भारत में रेशम की लगभग 90 मिलें हैं। इनके अतिरिक्त कई छोटी व मध्यम इकाइयाँ भी रेशमी कपड़ा उत्पादन करने में लगी हैं। भारत लगभग 8.5 लाख किलोग्राम रेशम का धागा तैयार करता है। 90 प्रतिशत से अधिक रेशम का उत्पादन कर्नाटक, तमिलनाडु, पश्चिमबंगाल और जम्मू और कश्मीर राज्यों में होता है। कर्नाटक में बंगलौर, कोलार, मैसूर और बेलगाँव रेशम के प्रमुख उत्पादक केंद्र हैं। पश्चिम बंगाल में मुर्शिदाबाद और बाँकुरा तथा जम्मू और कश्मीर में अनंतनाग, बारामूला तथा श्रीनगर, रेशमी वस्त्र तैयार करने के प्रमुख केन्द्र हैं।

भारतीय रेशम की माँग यूरोप और एशिया के देशों में बहुत अधिक है। संयुक्तराज्य अमेरिका, यूनाईटेड किंगडम, रूस, सऊदी अरब, कुवैत और सिंगापुर, रेशमी कपड़ों के प्रमुख आयातक देश हैं। भारतीय रेशम उद्योग की चीन, थाइलैंड और इटली के साथ कड़ी प्रतिस्पर्धा है।

कृत्रिम वस्त्र :

कृत्रिम वस्त्र उद्योग में कृत्रिम धागे का प्रयोग किया जाता है। इन वस्त्रों का हमारे वस्त्र उद्योग में महत्वपूर्ण स्थान है। ये मजबूत एवं टिकाऊ होते हैं। पुनः रंगने और बुनने में भी आसानी होती है। जिससे वस्त्र उद्योग में एक क्रांति पैदा कर दी है। मानव निर्मित रेशों को रासायनिक प्रक्रिया के माध्यम से लुगदी, कोयला, तथा पेट्रोलियम से प्राप्त किया जाता है। वस्त्र में अधिक गुणवत्ता लाने के लिए इन्हें प्रायः प्राकृतिक रेशों जैसे कपास, रेशम और ऊन के साथ मिलाकर बनाया जाता है। इस उद्योग का केरल, तमिलनाडु, कर्नाटक, महाराष्ट्र, गुजरात, राजस्थान और मध्यप्रदेश जैसे राज्यों में अधिक विस्तार हुआ है। मुम्बई, अहमदाबाद, सूरत, दिल्ली, अमृतसर, ग्वालियर और कोलकाता कृत्रिम वस्त्र उद्योग के महत्वपूर्ण केन्द्र हैं।

क्या आप जानते हैं!

कृत्रिम धागे-पेट्रो रसायन के उत्पादन द्वारा तैयार किया जाता है। जैसे- नाईलान, पालिस्टर रियान, एक्रिलिक और पालीमर।

चीनी उद्योग :

भारत संसार में गन्ने का सबसे बड़ा उत्पादक देश है। गुड़ और खांडसारी को मिलाकर चीनी के उत्पादन में भी इसका पहला स्थान है। वर्तमान समय में यह उद्योग 4 लाख से अधिक लोगों को प्रत्यक्ष रूप से और एक बड़ी संख्या में किसानों को अप्रत्यक्ष रूप से रोजगार प्रदान करता है। कच्चे माल के मौसमी होने के कारण, चीनी उद्योग एक मौसमी उद्योग है।

आधुनिक आधार पर इस उद्योग का विकास 1903 में प्रारंभ हुआ जब बिहार के सारण जिले के मढ़ौरा में एक चीनी मिल की स्थापना की गई। हम जानते हैं कि चीनी उद्योग गन्ने पर निर्भर करता है। गन्ना कटने के बाद वजन में घटने वाला तथा शीघ्र खराब होने वाला होता है। गन्ने की इन्हीं विशेषताओं को ध्यान में रखकर चीनी मिलें गन्ना के उत्पादक क्षेत्रों में स्थापित की जाती हैं। वर्ष 2008 में देश में चालू चीनी मिलों की संख्या 615 थी जिसमें सिर्फ महाराष्ट्र में 134 से अधिक मिलें हैं। इसके अतिरिक्त उत्तर-प्रदेश, बिहार, कर्नाटक, तमिलनाडु, आंध्रप्रदेश, गुजरात, पंजाब, हरियाणा तथा मध्यप्रदेश राज्यों में फैली हैं। पिछले कुछ वर्षों से इन उद्योगों की संख्या दक्षिणी और पश्चिमी राज्यों में विशेषकर महाराष्ट्र में बढ़ी है। इसका मुख्य कारण यहाँ के गन्ने में अधिक शर्करा (सक्रोस) की मात्रा है। यहाँ की ठण्डी जलवायु भी लाभदायक है इसके अतिरिक्त इन राज्यों में सहकारी समितियाँ भी सफल रही हैं।

चीनी उद्योग को कई चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है। जैसे इस उद्योग का अल्पकालिक होना, पुरानी व परम्परागत तकनीक का प्रयोग, परिवहन, असक्षमता से गन्ने का समय पर कारखानों में न पहुँचना तथा खोई का (Baggasses) का अधिकतम इस्तेमाल न होना। हड़ताल, समय पर किसानों को गन्ने का मूल्य न मिलना, और विद्युत की कमी जैसी अन्य गंभीर समस्याएं भी हैं।

क्या आप जानते हैं?

उपभोक्ता : उपभोक्ता ऐसा उद्योग है जो उत्पादन, उपभोक्ताओं के सीधे उपयोग हेतु करते हैं। उसे उपभोक्ता उद्योग कहते हैं इसमें विशेष रूप से गृह उपयोगी वस्तुओं का उत्पादन होता है। जैसे कागज उद्योग, दंतमंजन, पंखा, सिमेंट उद्योग इसके उत्तम उदाहरण हैं।

चित्र-3.3 भारत के चीनी उद्योग के प्रमुख जिले

(ii) खनिज आधारित उद्योग :

ऐसे उद्योग जो अपने कच्चे माल के लिए खनिजों पर निर्भर हैं, उन्हें खनिज आधारित उद्योग कहते हैं। लौह एवं इस्पात, सीमेंट तथा रसायन उद्योग, खनिज आधारित उद्योग के अच्छे उदाहरण हैं।

लौह और इस्पात उद्योग :

लौह और इस्पात उद्योग एक आधारभूत उद्योग (Basic industry) है; क्योंकि अन्य सभी भारी, हल्के और मध्यम उद्योग इनसे बनी मशीनरी पर निर्भर करते हैं। इसे अन्य उद्योगों का जनक भी कहा जाता है। भारत वासियों को लोहा बनाने की कला ईसा से हजारों वर्ष पहले से आती थी। दिल्ली में कुतुबमीनार के निकट खड़ा लौह-स्तम्भ देश में निर्मित लोहे की गुणवत्ता का सटीक प्रमाण है। दमिश्क की प्रसिद्ध तलवारें भारतीय लोहे से बनाई जाती थीं। भारत में लौह-इस्पात का पहला कारखाना 1830 में पोर्टोनोवा नामक स्थान पर तमिलनाडु में स्थापित किया गया था परन्तु स्थानीयकरण के अनुकूल कारकों की कमी के कारण इसे बन्द करना पड़ा।

आधुनिक लौह इस्पात उद्योग का वास्तविक रूप से प्रारम्भ सन 1864 ई० में पश्चिम बंगाल में कुल्टी नामक स्थान पर स्थापित होने के साथ हुआ और इस्पात का बड़े पैमाने पर उत्पादन सन 1907 ई० में टाटा आयरन एण्ड स्टील कम्पनी द्वारा साक्ची (झारखण्ड स्थित जमशेदपुर) में कारखाना की स्थापना के साथ हुआ। इसके बाद पश्चिम बंगाल में बर्नपुर तथा कर्नाटक में भद्रावती में भी स्वतंत्रता के पूर्व कारखानें लगाए गए। स्वतंत्रता के बाद विदेशी सहयोग से लोहा-इस्पात के कई कारखाने लगाए गए, इस समय भारत में 10 वृहत् लोहा एवं इस्पात संयंत्र हैं और लगभग 200 छोटे इस्पात संयंत्र हैं।

भारत के प्रमुख लौह-इस्पात उद्योग

कम्पनी	विदेशी सहयोग	राज्य	जगह
1. टाटा लोहा इस्पात (TISCO)	—	झारखंड	जमशेदपुर
2. भारतीय लोहा और इस्पात (IISCO)	—	पश्चिम बंगाल	बर्नपुर
3. विश्वेश्वरैया लोहा और इस्पात (VISL)	—	कर्नाटक	भद्रावती
4. भिलाई लोहा एवं इस्पात संयंत्र	रूस	छत्तीसगढ़	भिलाई
5. राउरकेला इस्पात संयंत्र	जर्मनी	उड़ीसा	राउरकेला
6. दुर्गापुर इस्पात संयंत्र	ब्रिटेन	पश्चिम बंगाल	दुर्गापुर
7. बोकारो इस्पात संयंत्र	रूस	झारखंड	बोकारो
8. सेलम इस्पात संयंत्र	—	तमिलनाडु	सेलम
9. विशाखापत्तनम इस्पात संयंत्र	—	आंध्रप्रदेश	विशाखापत्तनम
10. विजय नगर इस्पात संयंत्र	—	कर्नाटक	विजयनगर

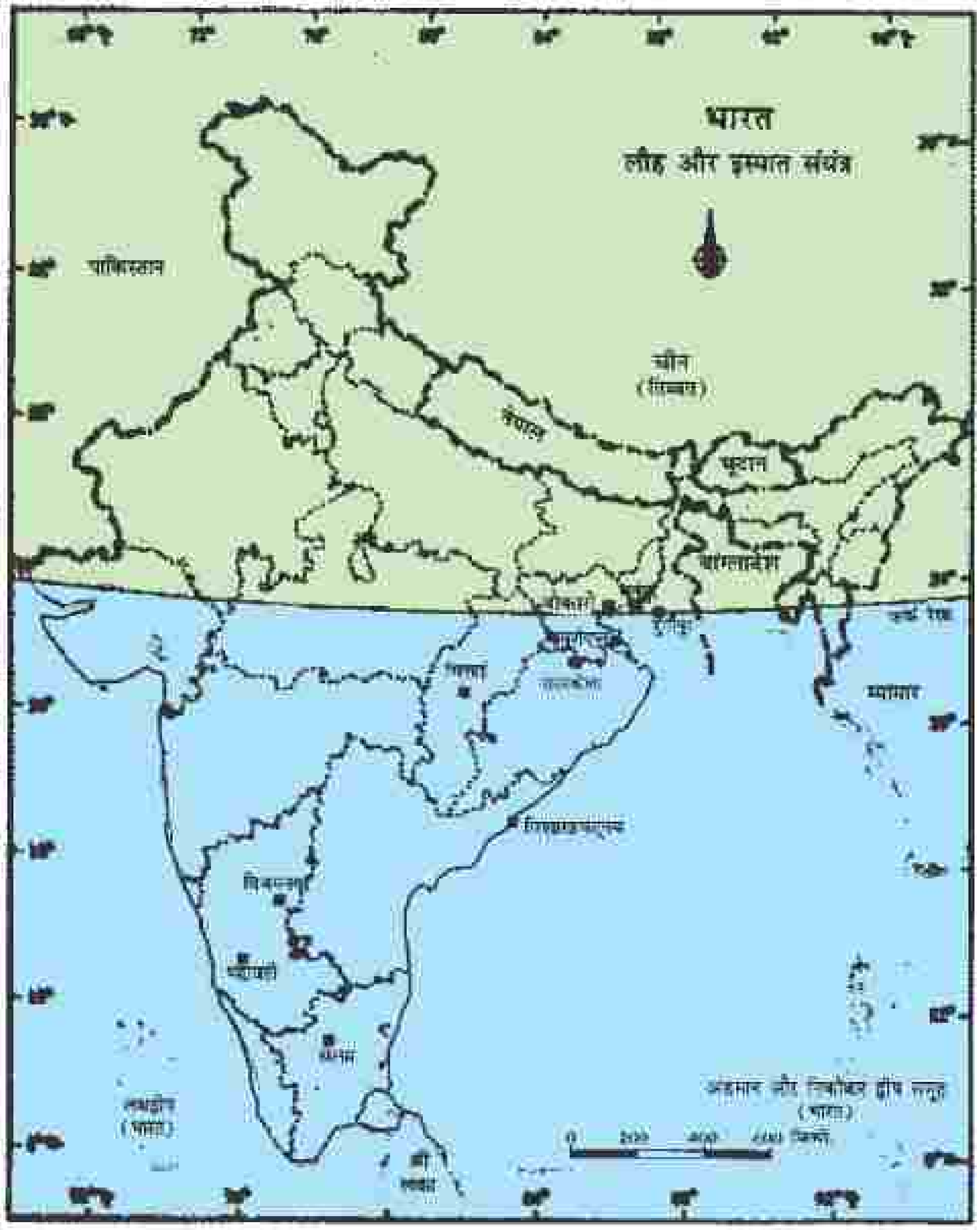

चित्र-3.4 लौह और इस्पात संयंत्र

लौह इस्पात एक भारी उद्योग है क्योंकि इसमें भारी तथा अधिक स्थान घेरने वाले कच्चे माल का उपयोग होता है। इसमें लौह अयस्क, कोकिंग कोल, चूनापत्थर, मैंगनीज अयस्क महत्वपूर्ण हैं। यही कारण है कि लौह एवं इस्पात उद्योगों की स्थिति कच्चे माल के उत्पादक क्षेत्रों से नियंत्रित है। इनका उत्पादित माल भी भारी होता है। अतः इनके वितरण के लिए उत्तम परिवहन तंत्र का होना अति आवश्यक है। विशाखापत्तनम ही एक ऐसा संयंत्र है जिसकी स्थिति तटवर्ती है जबकि देश के अन्य सभी वृहत् लौह इस्पात संयंत्र भारतीय प्रायद्वीपीय के खनिज संपन्न उत्तर-पूर्वी तथा दक्षिणी भाग में स्थित हैं। वर्ष 2007-08 में भारत 76.9 लाख टन इस्पात का विनिर्माण कर संसार में कच्चे इस्पात उत्पादकों में पाँचवें स्थान पर है। यह स्पंज (Spong) स्क्रेप लोहे का सबसे बड़ा उत्पादक है। भारत के सार्वजनिक क्षेत्र की सभी लौह इस्पात संयंत्रों का प्रबंध भारतीय इस्पात प्राधिकरण (SAIL) के अधीन है। जबकि टिस्को (TISCO) का प्रबंध टाटा स्टील करती है।

लौह इस्पात के अधिकांश संयंत्र भारत के छोटानागपुर पठार में स्थापित हुए हैं क्योंकि इसी क्षेत्र में लौह अयस्क, कोयला, मैंगनीज, चूनापत्थर, डोलोमाईट जैसे महत्वपूर्ण खनिजों के भण्डार हैं। आज उदारीकरण, निजीकरण और भूमण्डलीयकरण एवं उद्यमियों के प्रयत्न ने इस उद्योग को बढ़ावा दिया है। बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के सहयोग से छत्तीसगढ़ के रायपुर में तथा उड़ीसा के गोपालपुर में नवीन केन्द्र स्थापित किये जा रहे हैं।

क्या आप जानते हैं
जमशेदपुर को भारत का बर्मिंघम कहा जाता है।

एल्युमिनियम उद्योग :

यह भारत का दूसरा महत्त्वपूर्ण धातु उद्योग है। यह लचीला, हल्का, जंगरोधी, ऊष्मा और विद्युत का सुचालक होता है। इसका अयस्क बाक्साइट है हवाई, जहाज, बर्तन उद्योग तथा तार बनाने में इसका प्रयोग किया जाता है। आज इसकी लोकप्रियता इसलिए और भी बढ़ रही है क्योंकि यह कई उद्योग में इस्पात, तांबा, जस्ता और शीशे के विकल्प के रूप में प्रयुक्त होने लगा है। एक टन एल्युमिनियम के लिए लगभग 6 टन बाक्साईट तथा 18,600 किलोवाट विद्युत की आवश्यकता होती है।

एल्युमिनियम में लगभग मूल्य में 30 से 40 प्रतिशत तक विद्युत की कीमत होती है। इससे स्पष्ट है कि एल्युमिनियम उद्योग को स्थिति बाक्साईट और सस्ती बिजली की उपलब्धता से पूरी तरह प्रभावित होती है।

चित्र-3.5 (अ) : भारत : तांबा, सीसा और जस्ता प्रगलन

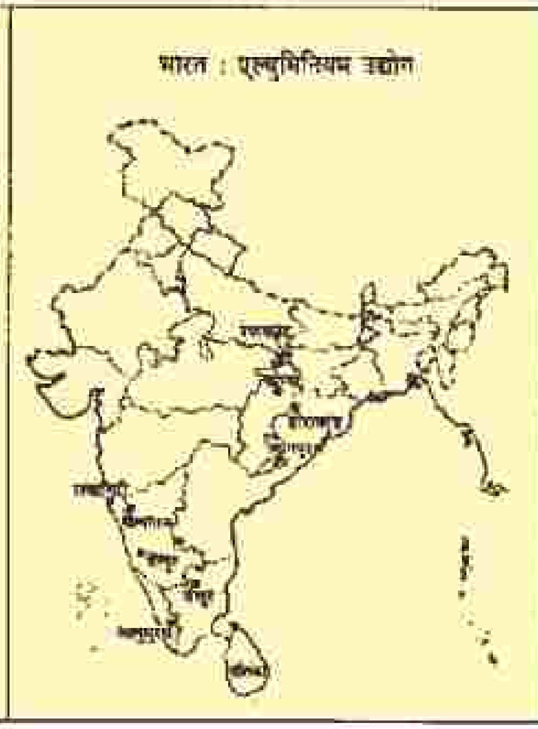

चित्र-3.5 (ब) : भारत : एल्युमिनियम

आज देश में 8 प्रमुख एल्युमिनियम संयंत्र है जो उड़ीसा (नालको व बालको), पश्चिम बंगाल, केरल, उत्तर प्रदेश, छत्तीसगढ़, महाराष्ट्र और तमिलनाडु राज्यों में स्थित है। ये सभी संयंत्र मिलकर वर्ष 2007-08 में लगभग 6.2 लाख टन एल्युमिनियम का उत्पादन किया है।

तांबा प्रगलन उद्योग :

भारत में पहला तांबा प्रगलन संयंत्र भारतीय तांबा निगम द्वारा घाटशिला नामक स्थान पर झारखण्ड राज्य में स्थापित किया गया था। सन् 1972 ई० में भारतीय तांबा निगम को हिन्दुस्तान तांबा लिमिटेड के अर्न्तगत हस्तांतरित कर दिया गया है। हिन्दुस्तान तांबा लिमिटेड भारत में एकमात्र तांबा उत्पादन संस्थान है। इसके दो केन्द्र हैं। एक पूर्वी सिंहभूम जिले में घाटशिला के निकट मऊभंडार नामक स्थान पर झारखण्ड राज्य में तथा दूसरा राजस्थान के झुनझुनू जिले में खेतड़ी नामक स्थान पर स्थित है। इन जिलों में स्थित तांबे की खानों के निकट ही तांबे के प्रगलन संयंत्र लगाए गए हैं।

क्या आप जानते हैं?
भारत की सबसे पुरानी तांबे की खान राजस्थान के खेतड़ी नामक स्थान पर है।

खेतड़ी के तांबा प्रगलन संयंत्र को मध्य प्रदेश के प्रगलन बालाघाट जिले में स्थित मलंजखंड खान से भी तांबा अयस्क की आपूर्ति की जाती है। आयातित अयस्क पर आधारित एक नई तांबा परियोजना तमिलनाडु के तूतीकोरिन में स्थापित की जा रही है। भारत 43 हजार टन तांबा ब्लिस्टर (आंशिक रूप से परिष्कृत) उत्पादित करता है। इससे देश की केवल 50 प्रतिशत आवश्यकता की पूर्ति होती है। शेष 50 प्रतिशत ताँबा जाम्बिया, चिली, संयुक्तराज्य अमेरिका तथा कनाडा से आयात करना पड़ता है।

> **इन्हें भी जानें!**
>
> ताँबा से पीतल, काँसा, जर्मन सिल्वर, रोल्डगोल्ड, अष्टधातु आदि मिश्रित धातु बनाई जाती है।

रासायनिक उद्योग :

रासायनिक उद्योग का देश के आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण स्थान है। यह आकार में विश्व का 12वाँ तथा एशिया में तीसरा स्थान रखता है। इस उद्योग का देश में तेजी से विकास हो रहा

चित्र-3.6 भारत : रसायन उद्योग

है। यह तीव्र वृद्धि अकार्बनिक और कार्बनिक दोनों प्रकार के रासायनिक उद्योगों में दिखाई पड़ रही है। भारतीय अकार्बनिक रसायनों के अन्तर्गत गंधक का तेजाब (इसका उपयोग उर्वरक, कृत्रिम रेशे, प्लास्टिक, गोंद, रंग, रोगन, डाई आदि के निर्माण में होता है) नाइट्रिक एसिड, क्षारित सामग्री, सोडा ऐश, (जिसका उपयोग काँच, कागज, साबुन, तथा वाशिंग पाउडर बनाने में होता है) तथा कास्टिक सोडा आते हैं। भारी कार्बनिक रासायनिक उद्योगों के अन्तर्गत पेट्रोलियम प्रमुख हैं। इनका उपयोग कृत्रिम रेशे, कृत्रिम रबड़; प्लास्टिक की वस्तुएं, रंग-रोगन तथा औषधियों के निर्माण में किया जाता है। अकार्बनिक रासायनिक उद्योग देश के विभिन्न भागों में फैले हैं। जबकि कार्बनिक रासायनिक, तेल शोधक तथा पेट्रोलियम संयंत्रों के निकट स्थित हैं। कीटनाशकों के उत्पादन ने हानिकारक कीटपतंगों और खरपतवार को नियंत्रित कर कृषि विकास में विशेष योगदान दिया है। औषधियों के उत्पादन में भारत विकासशील देशों में अग्रणी है। यह पूरे उद्योग क्षेत्र का 14 प्रतिशत उत्पादन करता है। तथा निर्यात में भी इसका 14 प्रतिशत का योगदान है। सकल घरेलू उत्पाद में इसकी भागीदारी 3 प्रतिशत है।

उर्वरक उद्योग :

भारत एक कृषि प्रधान देश है तथा मिट्टी की उपजाऊ शक्ति को बनाये रखने के लिए उर्वरक का उपयोग अनिवार्य है। भारत विश्व का तीसरा सबसे बड़ा नाईट्रोजन युक्त उर्वरक का उत्पादक है। भारत का पहला उर्वरक संयंत्र सन् 1906 ई० में रानीपेट (तमिलनाडु) में स्थापित किया गया था। परन्तु इस उद्योग का वास्तविक विकास सन 1951 ई० में भारतीय उर्वरक निगम द्वारा सिंदरी में संयंत्र स्थापित करने के साथ हुआ। हरित क्रांति के कारण उर्वरकों की मांग बढ़ी है। जिसमें भारत के विभिन्न भागों में उर्वरक संयंत्र स्थापित करने के लिए मार्ग प्रशस्त किया है। गुजरात, तमिलनाडु, उत्तर प्रदेश, पंजाब और केरल राज्य कुल उत्पादन का 50 प्रतिशत से अधिक उर्वरक का उत्पादन करते हैं। अन्य महत्वपूर्ण उत्पादक राज्य आंध्रप्रदेश, उड़ीसा, राजस्थान, बिहार, महाराष्ट्र, असम, पश्चिम बंगाल, गोआ, दिल्ली, मध्यप्रदेश तथा कर्नाटक हैं। प्राकृतिक गैस की सहज सुलभता के कारण देश के विभिन्न भागों में उर्वरक संयंत्र स्थापित किये जा सके हैं। भारत द्वारा वर्ष 2006-07 में लगभग 150 लाख टन नाइट्रोजनी, 50 लाख टन फास्फेटी तथा 20 लाख टन पोटाशी उर्वरकों का उत्पादन किया है। पोटाश उर्वरक बनाने के लिए भारत को पोटाशियम आयात करना पड़ता है।

चित्र-3.7 भारत : उर्वरक संयंत्र

सीमेंट उद्योग :

आवास निर्माण एवं देश के ढांचागत क्षेत्र में इसकी महत्वपूर्ण भूमिका है। भारत विश्व का दूसरा सबसे बड़ा सीमेंट उत्पादक देश है। भारत में कई तरह के सीमेंट का उत्पादन होता है। जैसे साधारण पोर्टलैण्ड, सीमेंट, पोर्टलैण्ड पोजोलाना, पोर्टलैण्ड ब्लास्ट फर्नेस, स्लैग सीमेन्ट आयल वेल, एवं सफेद सीमेंट आदि। सीमेंट उद्योग के लिए कच्चा माल जैसे चूनापत्थर, कोयला, सिलिका, एल्युमिनियम और जिप्सम की आवश्यकता होती है। इसलिए यह उद्योग कच्चे माल के निकट स्थापित किया जाता है।

चित्र-7 : सीमेंट उद्योग

पहला सीमेंट संयंत्र 1904 ई० में चेन्नई में स्थापित किया गया था। इस उद्योग का विस्तार मुख्यतः स्वतंत्रता के बाद ही हुआ। आज देश में 159 बड़े तथा 332 से अधिक छोटे सीमेंट संयंत्र हैं (2008)। इनकी कुल उत्पादन क्षमता प्रतिवर्ष 1683 लाख टन है। (2007-08)। चूँकि भारतीय सीमेंट की गुणवत्ता उत्तम है, अतः दक्षिण और पूर्वी एशिया के देशों में इसकी बहुत अधिक माँग है। इस समय देश में प्रतिवर्ष 20 करोड़ टन से अधिक सीमेंट का उत्पादन किया जाता है।

(iii) तैयार माल आधारित संरचनात्मक एवं उपकरण उद्योग

(i) परिवहन उपकरण उद्योग :

(i) रेलवे

भारत में रेलवे का जाल बिछा है और माल एवं सवारी गाड़ी के डिब्बों और रेल के इंजनों की बड़ी संख्या में माँग रहती है। अतः रेलवे ईंजन यात्री डिब्बे और माल डिब्बे निर्माण का उद्योग बड़े स्तर पर विकसित हुआ है। आज हम रेलवे के भारी डिब्बों का बड़े पैमाने पर निर्यात भी करते हैं। बड़ी लाईन वाले विद्युत चालित ईंजन पश्चिम बंगाल में स्थित चितरंजन के लोकोमोटिव वर्क्स में बनाए जाते हैं। वाराणसी में डीजल चालित रेल इंजनों के बनाने का कारखाना है। सवारी के डिब्बे पैरांबूर, बंगलौर, कपूरथला और कोलकाता में बनाये जाते हैं। मालगाड़ी के डिब्बे निजी क्षेत्र तथा रेल कारखानों में तैयार किये जाते हैं। बिहार के पटना जिले के मोकामा में भारत वैगन एण्ड इंजीनियरिंग कम्पनी लिमिटेड है जो रेलवे के लिए वैगन तैयार करता है। मुंगेर जिले के जमालपुर में रेलवे का वर्कशाप है। जो एशिया का सबसे पुराना रेलवे वर्कशाप है। सारण जिले के छपरा में रेलवे पहिया बनाने का कारखाना और नालन्दा जिले के हरनौत में सवारी गाड़ी के रेलवे डिब्बे बनाने का कारखाना अभी निर्माणाधीन है।

(ii) मोटर गाड़ी उद्योग :

सड़क परिवहन रेल परिवहन की तुलना में अधिक व्यापक है। इस समय मोटर वाहन जैसे ट्रक, बस, कार, मोटरसाईकिल, स्कूटर आदि बड़ी संख्या में निर्मित किये जाते हैं। तिपहिया स्कूटर के निर्माण में भारत का संसार में प्रथम स्थान है। ट्रैक्टर और साईकिल भी बड़ी संख्या में बनाई जाती हैं। मोटर साइकिलों का निर्माण लखनऊ, सतारा, पंकी (कानपुर), अहमदाबाद के निकट अकुर्दी तथा पिम्परी में बनाये जाते हैं। मारुति उद्योग दिल्ली के निकट गुड़गाँव, हरियाणा में है. टाटा इंजीनियरिंग एण्ड लोकोमोटिव कम्पनी लि० (TELCO) भारत में मध्यम तथा भारी व्यापारिक वाहनों के मुख्य उत्पादक हैं। महिन्द्रा एण्ड महिन्द्रा नासिक में, स्कारपियो तथा बोलेरो का निर्माण करता है। टाटा नैनो कार कम्पनी गुजरात में सस्ती कार बनाती है। इसके अतिरिक्त इन उद्योगों का विकास चेन्नई, पुणे, इंदौर, हैदराबाद तथा बंगलौर में हुआ है।

(iii) पोत निर्माण उद्योग :

आज पोत निर्माण एक बड़ा उद्योग है। इस उद्योग के लिए विशाल पूंजी की आवश्यकता होती है। इस समय देश में पोत निर्माण के पाँच प्रमुख केन्द्र हैं। विशाखापत्तनम, कोलकाता, कोच्चि, मुम्बई और मझगाँव (ये सभी सार्वजनिक क्षेत्र में हैं) बड़े-बड़े आकार के पोतों का निर्माण कोच्चि और विशाखापत्तनम में होता है। इनमें क्रमशः 1,00,000 टन (डी०डब्लू०टी०) तथा 50,000 टन (डी०डब्लू०टी०) के जहाज बनाए जाते हैं। (खाली जहाज के वजन को डी०डब्लू०टी०) कहते हैं। मझगाँव पोत प्रांगण भारतीय नौसेना के पोतों के निर्माण के लिए बनाया गया है। कोलकाता के निकट गार्डनरीज में कर्ष नाव, माल नौकाएं, निकर्षण पोत, तटपोत, जलपोतों के प्रयोग में आने वाले डीजल ईंजन का निर्माण किया जाता है।

चित्र-3.8 : भारी इंजीनियरिंग और यांत्रिक उपकरण उद्योग

(iv) वायुयान उद्योग :

यह एक नया उद्योग है तथा यह पूरी तरह सरकार के नियंत्रण में है। इस उद्योग का पहला कारखाना, हिन्दुस्तान एयर क्राफ्ट लि० बंगलूर में (1940 ई०) में लगाया गया था। इस कारखाने को 1964 में एरोनाटिक्स इंडिया लि० के साथ मिलाकर हिन्दुस्तान एरोनाटिक्स इंडिया लि० बंगलूर में बनाया गया जिसका लोकप्रिय नाम (HAL) है। भारत अब कई प्रकार के छोटे एवं बड़े वायुयानों का निर्माण करता है। भारतीय वायुयानों का प्रयोग इंडियन एयरलाइन्स और भारतीय वायु सेना द्वारा किया जा रहा है। भारतीय वायुयानों का प्रयोग अन्य क्षेत्रों में इण्डियन एयरलाइन्स विदेशी में एयर इण्डिया एवं सैनिक क्षेत्रों में उपयोग किया जाता है। आज हम कृषक, पुष्पक, जेटमिग, सुपरसोनिक जेट, अवरोधी विमान, बमवर्षक हेलिकाप्टर, मिग (MIG) तथा एव्रो 748 प्रकार के वायुयानों का निर्माण करते हैं। बंगलूर, कानपुर, नासिक के निकट ओझर, उड़ीसा में कोरापुट और आंध्रप्रदेश में हैदराबाद इस उद्योग के प्रमुख केन्द्र हैं।

(v) फुटलुज अर्थात तकनीकी एवं श्रमिक दक्षता आधारित उद्योग :

(i) सूचना प्रौद्योगिकी तथा इलेक्ट्रानिक उद्योग :

इस उद्योग को ज्ञान आधारित उद्योग भी कहते हैं क्योंकि इसमें उत्पादन के लिए विशिष्ट नए ज्ञान उच्च प्रौद्योगिकी और निरंतर शोध और अनुसंधान की आवश्यकता रहती है। यह वह उद्योग है जो मुख्यतः सूचना प्रौद्योगिकी (Information technology) से संबंधित है। इसने देश के आर्थिक ढाँचे तथा लोगों की जीवनशैली में बहुत क्रान्ति ला दिया है। इस उद्योग के अन्तर्गत आने वाले उत्पादों में ट्रांजिस्टर से लेकर टेलीविजन, टेलीफोन, पेजर, राडार, सेल्यूलर टेलीकाम, लेजर, जैव प्रौद्योगिकी, अंतरीक्ष उपकरण, कम्प्यूटर की यंत्र सामग्री (हार्डवेयर) तथा प्रक्रिया सामग्री (साफ्टवेयर) इत्यादि, इन्हें उच्च प्रौद्योगिकी उद्योग भी कहते हैं। इनके प्रमुख उत्पादक केन्द्र बंगलूर, मुम्बई, दिल्ली, हैदराबाद, पुणे, चेन्नई, कोलकाता, कानपुर तथा लखनऊ हैं। इसके अतिरिक्त 20 साफ्टवेयर प्रौद्योगिकी

क्या आप जानते हैं?
बंगलौर को इलेक्ट्रानिक उद्योग की राजधानी कहते हैं। इसे सिल्कन (Silicon city) नगर भी कहते हैं।

क्या आप जानते हैं?
कच्चे माल पर आधारित न होने के कारण इलेक्ट्रानिक उद्योग को स्वच्छन्द (फुटलूज) (Foot loose) उद्योग कहते हैं।

पार्क (Software Technology Parks) हैं। जो साफ्टवेयर विशेषज्ञों को एकल विंडो सेवा तथा उच्च आंकड़े संचार (High data Communication) सुविधा प्रदान करते हैं। इस उद्योग का प्रमुख महत्व रोजगार उपलब्ध कराना है। इसमें रोजगार पाए व्यक्तियों में लगभग 30 प्रतिशत महिलाएँ हैं। पिछले दो या तीन वर्षों से यह उद्योग विदेशी मुद्रा प्राप्ति करने का एक महत्वपूर्ण स्रोत बन गया है। जिसका कारण तेजी से बढ़ता व्यवसाय प्रक्रिया बाह्यस्त्रोतीकरण (Business Process out sourcing BPO) है। इससे जुड़ी अर्थव्यवस्था को ज्ञान अर्थव्यवस्था भी कहते हैं।

चित्र-3.9 : सॉफ्टवेयर टेकनोलॉजी पार्क्स

(ii) तैयार वस्त्र एवं पोशाक उद्योग :

यह उद्योग भारत में हल्के उद्योग के रूप में पूरे देश में फैला हुआ है। किन्तु बड़े केन्द्रों में लखनऊ, लुधियाना, कोलकाता, जयपुर, श्रीनगर, चंडीगढ़, सूरत, शाहदरा, मऊ आदि प्रमुख हैं। मेरठ, मुरादाबाद, आगरा, मथुरा बुलन्दशहर होजियरी एवं रेडिमेड वस्त्र उद्योग के लिए विख्यात है।

(iii) सौन्दर्य प्रसाधन उद्योग :

सौन्दर्य प्रसाधन के लिए भारत प्राचीन समय से ही प्रसिद्ध रहा है। इसके अन्तर्गत साबुन, तेल, पाउडर, लीपीस्टीक, नेलपॉलिश एवं कृत्रिम ज्वेलरी आदि आते हैं। यह उद्योग भी भारत में सभी जगह फैले हुए हैं। लेकिन कुछ विशेष वस्तु के लिए विशेष केन्द्र प्रसिद्ध है जैसे चन्दन पर आधारित सौन्दर्य मैसूर नगरी को ख्याति प्राप्त है। ईत्र के लिए जौनपुर, खुशबूदार तेल के लिए कन्नौज, अच्छे किस्म के साबुन के लिए मुम्बई, पुणे, कोलकाता, प्रमुख केन्द्र हैं। कृत्रिम ज्वेलरी के लिए दिल्ली एवं पश्चिम बंगाल, जयपुर प्रसिद्ध है।

(iv) खिलौना उद्योग :

खिलौना निर्माण उद्योग भारत में काफी लोगों को रोजगार सृजन करता था किन्तु चीन और जापान के इलेक्ट्रानिक खिलौने के आयात से इस उद्योग में काफी ह्रास आया है। लेकिन आज भी यह उद्योग भारत के कई शहरों में विकसित है। इसमें शिवकाशी, बनारस, कोलकाता, दिल्ली, चेन्नई, हैदराबाद, मदुरई, भोपाल आदि प्रमुख हैं।

राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में उद्योगों का योगदान

किसी भी देश की आर्थिक सम्पन्नता उसके निर्माण उद्योगों के विकास से मापी जाती है। इन उद्योगों ने लोगों को रोजगार प्रदान कर उनकी कृषि पर निर्भरता को कम किया है। निर्मित वस्तुओं के निर्यात से विदेशी मुद्रा प्राप्त होती है जिससे गरीबी की समस्या पर बहुत हद तक काबू पा लिया गया है। जनजातीय क्षेत्रों में औद्योगिक विकास के कारण क्षेत्रीय असमानताएँ कम हुई हैं। पिछले दो दशकों से सकल घरेलू उत्पाद में विनिर्माण उद्योग का योगदान 17% है।

भारत की अपेक्षा अन्य पूर्वी ऐशियाई देशों में निर्माण उद्योग का योगदान सकल घरेलू उत्पाद का 25 से 35 प्रतिशत है। लेकिन पिछले एक दशक से भारतीय विनिर्माण क्षेत्र में 7 प्रतिशत

की दर से बढ़ोत्तरी की यह दर अगले दशक में 12 प्रतिशत अपेक्षित है। वर्ष 2007-08 से विनिर्माण क्षेत्र का विकास 9 से 10 प्रतिशत प्रतिवर्ष की दर से हुआ है। सरकारी नीतियों तथा औद्योगिक उत्पादन में बढ़ोत्तरी के नए प्रयासों से अर्थशास्त्रीयों का अनुमान है कि विनिर्माण उद्योग अगले एक दशक में अपना लक्ष्य पूरा कर सकता है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए राष्ट्रीय विनिर्माण प्रतिस्पर्धा परिषद की स्थापना की गई है।

वैश्वीकरण का भारतीय अर्थव्यवस्था पर प्रभाव :

वैश्वीकरण का अर्थ है देश की अर्थव्यवस्था को विश्व की अर्थव्यवस्था के साथ जोड़ना, अर्थात प्रत्येक देश का अन्य देशों के साथ बिना किसी प्रतिबंध के पूँजी, तकनीकी एवं व्यापारिक आदान-प्रदान ही वैश्वीकरण है। भारत सरकार की नवीन आर्थिक नीतियाँ वैश्वीकरण को परिभाषित करने में लगी हुई हैं। हमारा उद्देश्य भारतीय अर्थव्यवस्था का विश्व की अन्य अर्थव्यवस्थाओं के साथ तारतम्य बनाना है।

क्या आप जानते हैं?

उदारीकरण : इसमें उद्योग तथा व्यापार को लालफीता शाही के अनावश्यक प्रतिबंधों से मुक्त करके अधिक प्रतियोगी बनाना है।

इसके अन्तर्गत सभी वस्तुओं के आयात में खुली छूट, सीमा शुल्क में कमी, विदेशी पूँजी की मुक्त प्रवाह की अनुमति, सेवा क्षेत्र विशेषकर बैंकिंग, बीमा और जहाज रानी क्षेत्रों में विदेशी पूंजी निवेश की छूट और रुपयों को पूर्ण परिवर्तनशील करना है। इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए भारतीय अर्थव्यवस्था का तेजी से वैश्वीकरण हो रहा है। उदारीकरण और निजीकरण आर्थिक सुधारों के कई कार्यक्रम चलायें जा रहे हैं। परिणाम स्वरूप कई क्षेत्रों में उपलब्धियाँ उत्साहवर्धक हैं। विदेशी मुद्रा का भण्डार काफी बढ़ गया है। 2007-08 में 200 अरब डालर हो गया किन्तु इधर निर्यात और कृषि के दरों में गतिरोध उत्पन्न हुआ है। विश्वव्यापी मंदी के बावजूद चीन को छोड़कर अन्य विकासशील देशों की तुलना में भारत में सकल घरेलू उत्पाद की दर अधिक है। किन्तु सामाजिक क्षेत्रों की प्रगति संतोषजनक नहीं है।

निजीकरण से आप क्या समझते है?

देश के अधिकतर उद्योगों के स्वामित्व नियंत्रण तथा प्रबंध का निजी क्षेत्र के अन्तर्गत किया जाना इसके परिणाम स्वरूप अर्थव्यवस्था पर सरकारी एकाधिकार कम या समाप्त हो जाता है।

रोजगार सृजन के अवसर कम हुए हैं। गरीबी उन्मूलन का कार्यक्रम प्रभावित हुआ है। अनाज का विपुल भंडार रहते हुए भी भारी संख्या में भारतवासी कुपोषण के शिकार हैं। इसका मुख्य कारण उनमें क्रयशक्ति की कमी है।

क्या आप जानते हैं?

बहुराष्ट्रीय कम्पनी : ऐसी कम्पनी जो किसी एक देश में स्थित मुख्यालय से अनेक देशों में उत्पादन और सेवाओं का नियंत्रण करती है।

वैश्वीकरण से स्वदेशी उद्योगों और विशेषकर लघु एवं कुटीर उद्योगों पर प्रतिकुल प्रभाव पड़ रहा है। यह बात स्पष्ट रूप से कही जा सकती है कि वैश्वीकरण से हमारी अर्थव्यवस्था पर और औद्योगिक विकास पर प्रतिकुल प्रभाव पड़ेगा।

उद्योगों से उत्पन्न प्रदूषण का प्रभाव :

विनिर्माण उद्योग का देश के आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण योगदान है। फिर भी उद्योगों ने प्रदूषण को बढ़ाया है और पर्यावरण का क्षरण किया है। उद्योगों ने चार प्रकार के प्रदूषण-वायु, जल, भूमि और ध्वनि (शोर) को पैदा किया है।

वायु प्रदूषण :

उद्योगों से निकलने वाले धुएं और गैसों ने वायु को बुरी तरह प्रदूषित किया है। कार्बनमोनोऑक्साईड (Co) को दमघोंट गैस (Strangulatiny Gas) भी कहते हैं। और सल्फर डाइआक्साईड (SO_2) जैसे अवांछित गैसों की अधिकता वायु प्रदूषण का कारण बनती है।

क्या आप जानते हैं?

एक मनुष्य प्रतिदिन 23000 बार साँस लेता है। साँस के द्वारा मनुष्य प्रतिदिन 35 गैलन व 16 किलोग्राम आक्सीजनयुक्त वायु का सेवन करता है।

Co. गैस सांस के माध्यम से शरीर में पहुंचकर रक्त में उपस्थित हीमोग्लोबीन की आक्सीजन वहन क्षमता (Oxygen Carrying Capacity) को बिल्कुल कम कर देती है। जिसके कारण मनुष्य की मृत्यु भी हो सकती है। So_2 से आँख में जलन, दमा, (Asthama) खाँसी, फेफड़ों के रोग, सिर में दर्द, चक्कर आना, जैसी परेशानी बढ़ जाती है इसके अतिरिक्त वायु को प्रदूषित करने वाले ठोस, व तरल, दोनों ही प्रकार के पदार्थ होते हैं। धूल, स्प्रे, कुहासा, धुआं और धुंध दोनों ही प्रकार के पदार्थ मिले होते हैं। यह जीव जन्तुओं, पेड़ पौधों तथा वायुमंडल को प्रभावित करते हैं।

जल प्रदूषण

जल प्रदूषण के अनेक स्रोत हैं। इनमें सबसे अधिक महत्वपूर्ण औद्योगिक अवशिष्ट हैं। जिन्हें नदियों में छोड़ा जाता है। ये जैविक और अजैविक दोनों ही प्रकार के होते हैं। कोयला, रंग, साबुन कीटनाशक, उर्वरक, प्लास्टिक की वस्तुएँ रबड़ आदि जल के सामान्य प्रदूषक हैं। कागज लुगदी, रसायन, पेट्रोलियम, तेल शोधन शालाएँ चमड़ा उद्योग तथा इलेक्ट्रोप्लेटिंग जल को प्रदूषित करने वाले प्रमुख उद्योग हैं। उद्योगों से निकलनेवाला विषाक्त धातुयुक्त कूड़ा कचरा भूमि और मिट्टी को प्रदूषित करता है, जल में आक्सीजन की मात्रा घट जाती है जिससे जीवधारियों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। गंदा जल पीने से हैजा, पेचिश, टाइफाइड तथा पीलिया जैसी रोग उत्पन्न हो जाते हैं।

क्या आप जानते हैं?

प्रदूषण फैलाने वाले पाँच मुख्य उद्योग :

(1) चर्म उद्योग

(2) तेलशोधक उद्योग

(3) डिस्टल-कोयला आधारित उद्योग

(4) धातु उद्योग

(5) पेपर उद्योग

ध्वनि प्रदूषण :

अवांछित शोर भी प्रदूषण है। सामान्यतः यह उद्योग और परिवहन के साधनों की देन है। यांत्रिक आरा मिलें जेनरेटर, खराब मशीनों की असहनीय आवाज लोगों के लिए परेशानी का कारण होती है। अत्यधिक शोर से बहरापन, हृदयगति; चिड़चिड़ापन, नींद में कमी तथा इससे संबंधित अन्य समस्याएँ प्रमुख हैं।

क्या आप जानते हैं?

भोपाल गैस त्रासदी एक घटना थी जो 3 दिसंबर 1984 को भोपाल (म०प्र०) में घटित हुई। खाद और कीटनाशक बनानेवाली यूनियन कार्बाइड नामक फैक्ट्री में मिथाइल आयसो सायनेट नामक गैस का रिसाव होने लगा जिससे 500 लोग मौत के शिकार हो गए।

बरौनी स्थित तेलशोधक कारखाना से उत्सर्जित तेलयुक्त अपशिष्ट के गंगा नदी में प्रवाहित होने से जल का प्रदूषण होता है।

तापीय प्रदूषण :

उद्योगों तथा तापघरों से गर्म जल को बिना ठंडा किए ही नदियों तथा तालाबों में छोड़ दिया जाता है, तो जल में तापीय प्रदूषण होता है, जिसके कारण सूक्ष्म जीव-जन्तु एवं जलीय वनस्पति जल कर नष्ट हो जाते हैं।

परमाणु ऊर्जा संयंत्रों के अपशिष्ट व परमाणु शल्य उत्पादक कारखानों से चर्मरोग, कैंसर (रक्त कैंसर, अस्थि कैंसर) जन्मजात विकार, अकाल प्रसव जैसी बिमारियाँ होती हैं।

क्या आप जानते हैं?
मोकामा में स्थित बाटा जूता कारखाना एवं शराब बनाने वाले कारखाने में प्रतिदिन 250000 गैलन विषाक्त अपशिष्ट जल का गंगा में समावेश होता है।

प्रदूषण को नियंत्रित करने के उपाय :

प्रदूषण को उचित योजनाओं द्वारा रोका जा सकता है। उद्योगों को निर्धारित क्षेत्रों में स्थापित करके, उपकरणों की गुणवत्ता को बनाए रखकर तथा उनके सही परिसंचालन द्वारा प्रदूषण को कम किया जा सकता है। वैकल्पिक ईंधन का चयन तथा उसके सही उपयोग वायु प्रदूषण को रोकने का प्रमुख साधन है। उद्योगों में कोयले के स्थान पर तेल के उपयोग से धुआँ रोका जा सकता है। वर्तमान में कई ऐसे उपकरण हैं जिनके माध्यम से वायु में उत्सर्जित प्रदूषकों को रोका जा सकता है। इनमें पृथककारी छन्ना बैगफिल्टर तथा स्क्रबर यंत्र उल्लेखनीय है।

उद्योगों के प्रदूषित जल को नदियों में छोड़ने से पहले उपचारित करके जल प्रदूषण को नियंत्रित किया जा सकता है। उद्योगों से निकलनेवाली द्रवों को तीन स्तरों पर उपचारित किया जाता है। यांत्रिक प्रक्रिया द्वारा प्राथमिक उपचार, जैविक प्रक्रिया द्वारा द्वितीयक उपचार तथा जैविक रासायनिक और भौतिक प्रक्रियाओं द्वारा तृतीयक उपचार। प्राथमिक उपचार में छंटाई, पिसाई, निथारना तथा गंदगी को तली में बैठाने की क्रिया शामिल है। द्वितीयक प्रक्रिया में जैविक विधियाँ शामिल हैं। तृतीयक उपचार में प्रदूषित जल को पुनः चक्रीय क्रिया शामिल है। मिट्टी और भूमि-प्रदूषण के नियंत्रण में तीन क्रियाएँ शामिल हैं।

(क) विभिन्न स्थानों से कूड़ा-कचरा जमा करना।

(ख) कूड़े-कचड़े का निपटारा भूमि भरकर द्वारा करना।

(ग) कूड़े-कचड़े का पुनः चक्रण कर उपयोगी बनाना।

(घ) औद्योगिक अवशिष्टों में मृदा की गुणवत्ता प्रभावित करने वाले पदार्थों के परिशोधन या उदासीकरण के अतिरिक्त इनका समुचित प्रबंधन, मृदा प्रदूषण के लिए आवश्यक है।

अभ्यास-प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न :-

1. इनमें से कौन औद्योगिक अवस्थिति का कारक नहीं है?

   (क) बाजार (ख) जनसंख्या

   (ग) पूंजी (घ) ऊर्जा

2. भारत में सबसे पहले स्थापित लौह इस्पात कंपनी निम्नांकित में से कौन है?

   (क) भारतीय लौह और इस्पात कंपनी (IISCO)

   (ख) टाटा लौह इस्पात कंपनी (TISCO)

   (ग) बोकारो स्टील सिटी

   (घ) विश्वेश्वरैया लौह और इसपात उद्योग

3. पहली आधुनिक सूती मिल मुंबई में स्थापित की गई थी, क्योंकि

   (क) मुंबई एक पत्तन है

   (ख) यह कपास उत्पादक क्षेत्र के निकट स्थित है।

   (ग) मुंबई में पूँजी उपलब्ध थी।

   (घ) उपर्युक्त सभी

4. निम्नांकित में से कौन उद्योग कृषि पर आधारित नहीं है?

   (क) सूतीवस्त्र (ख) सीमेंट

   (ग) चीनी (घ) जूट वस्त्र

5. हुगली औद्योगिक प्रदेश का केन्द्र है?

   (क) कोलकाता–रिसड़ा (ख) कोलकाता–कोन्नागरि

   (ग) कोलकाता–मेदिनीपुर (घ) कोलकाता–हावड़ा

6. निम्नलिखित में से कौन उद्योग सार्वजनिक क्षेत्र के अन्तर्गत आता है?

   (क) जे०के०सीमेंट उद्योग (ख) टाटा लौह एवं इस्पात

   (ग) बोकारो लौह इस्पात उद्योग (घ) रेमण्ड कृत्रिम वस्त्र उद्योग

7. इनमें से कौन उपभोक्ता उद्योग है?

(क) पेट्रो-रसायन (ख) लौह-इस्पात

(ग) चीनी उद्योग (घ) चितरंजन लोकोमोटिव

8. निम्नलिखित में से कौन छोटे पैमाने का उद्योग है?

(क) चीनी उद्योग (ख) कागज उद्योग

(ग) खिलौना उद्योग (घ) विद्युत उपकरण उद्योग

9. भोपाल त्रासदी में किस गैस का रिसाव हुआ था?

(क) कार्बन डाईऑक्साइड (ख) कार्बन मोनोआक्साइड

(ग) मिथाईल आइसोसाइनाईट (घ) सल्फरडाईआक्साइड

लघु उत्तरीय प्रश्न :

1. विनिर्माण से आप क्या समझते हैं?
2. सार्वजनिक और निजी उद्योग में अंतर स्पष्ट करें?
3. उद्योगों के स्थानीयकरण के तीन कारकों को लिखिए।
4. कृषि आधारित उद्योग और खनिज आधारित उद्योग के अंतर को स्पष्ट करें।
5. स्वामित्व के आधार पर उद्योगों को उदाहरण सहित वर्गीकृत कीजिए।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न :

1. उदारीकरण, निजीकरण और वैश्वीकरण से आप क्या समझते हैं? वैश्वीकरण का भारतीय अर्थव्यवस्था पर क्या प्रभाव पड़ा है? इसकी व्याख्या करें?
2. भारत में सूचना एवं प्रौद्योगिकी उद्योग का विवरण दीजिए।
3. भारत में सूतीवस्त्र उद्योग के वितरण का वर्णन करें।

परियोजना कार्य :

प्रश्न: भारत के रेखा मानचित्र पर निम्नलिखित को उपयुक्त चिह्नों की सहायता से अंकित कीजिये तथा उनके नाम लिखिये।

(i) निजी क्षेत्र में स्थापित एक प्रसिद्ध लौह-इस्पात केन्द्र।

(ii) मध्यप्रदेश का साफ्टवेयर प्रौद्योगिकी पार्क

(iii) बिहार का साफ्टवेयर प्रौद्योगिकी पार्क

(iv) छत्तीसगढ़ का लौह-इस्पात संयंत्र

(v) चीनी उद्योग का अग्रणी राज्य

(vi) सूती वस्त्र उद्योग के प्रधान केन्द्र मुम्बई, कोयम्बटूर अहमदाबाद तथा कानपुर।

अपने शिक्षक की सहायता से भारत में कार्यरत 10 बहुराष्ट्रीय कम्पनियों की तालिका तैयार कीजिए तथा प्रत्येक के नाम के सामने उन उद्योगों का नाम लिखें जिसमें उनका निवेश विशेष रूप से हुआ है।

इकाई-4

परिवहन, संचार एवं व्यापार

क्या, आपने कभी इस बात पर विचार किया है कि आपके गाँव/शहर में जीवन की सभी आवश्यक वस्तुएँ कहाँ से आती हैं और कैसे आती हैं ? पंजाब में पैदा होनेवाला गेहूँ, पश्चिम बंगाल में उपजनेवाला चावल, धनबाद में खनन किया जाने वाला कोयला, महाराष्ट्र में पैदा होनेवाला कपास एवं आपके द्वारा लिखी जानेवाली चिट्ठियाँ एवं संदेश दूसरे स्थानों एवं लोगों तक कैसे पहुँच जाते हैं? यह सब संभव हो पाता है परिवहन एवं संचार के साधनों द्वारा । किसी भी क्षेत्र या राष्ट्र के समुचित विकास में परिवहन एवं संचार के साधन आधार का काम करते हैं। ये साधन उत्पादन एवं उपभोग अथवा माँग एवं आपूर्ति के बीच संबंध स्थापित करते हैं । इसलिए इन्हें राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की जीवन रेखा कहा जाता है ।

परिवहन के प्रकार :

दो स्थानों के बीच आवागमन के लिए परिवहन साधनों की आवश्यकता पड़ती है। वर्तमान समय में परिवहन एवं संचार के साधन सामाजिक-आर्थिक व्यवस्था की धमनियाँ हैं जो हमारे विश्व को आकार देती हैं, उसे प्रभावित करती हैं तथा उससे खुद भी प्रभावित होती है । भारत में परिवहन के लिए सड़कमार्ग, रेलमार्ग, जलमार्ग, वायुमार्ग एवं पाईपलाईन की सुविधाएँ उपलब्ध हैं। पहाड़ी क्षेत्रों में आने-जाने के लिए विशेषकर पर्यटन की दृष्टि से कई जगहों पर रज्जु मार्ग का विकास भी देखा जा सकता हैं ।

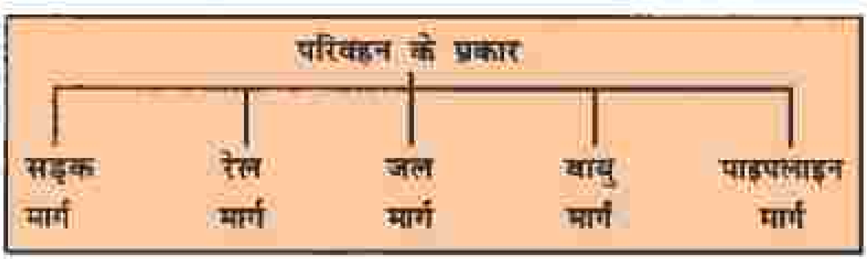

1. सड़कमार्ग

सड़कमार्ग परिवहन का सबसे सामान्य, सुलभ एवं सुगम साधन है । इसका उपयोग हर एक व्यक्ति अपने जीवनकाल में अवश्य ही करता है । आप भी प्रतिदिन अपने घर से विद्यालय आने के लिए सड़कमार्ग का ही उपयोग करते हैं । लगभग 33 लाख किलोमीटर लंबी सड़कों के साथ भारत विश्व के सर्वाधिक सड़क जाल वाले देशों में स्थान रखता है । ग्रैंड ट्रंक रोड देश की सबसे पुरानी सड़क है । शेरशाह सूरी द्वारा निर्मित इस सड़क का कोलकाता से अमृतसर तक का भाग भारत में पड़ता है । आजकल इसे अमृतसर से दिल्ली तक राष्ट्रीय राजमार्ग संख्या 1 (NH-1) तथा दिल्ली से कोलकाता तक राष्ट्रीय राजमार्ग संख्या-2 (NH-2) के नाम से जाना जाता है । अमृतसर से कारगिल होते हुए लेह तक जानेवाली सड़क को राष्ट्रीय राजमार्ग संख्या 1A कहा जाता है ।

भारत में सड़कों का विकास :

भारत में सड़कों के विकास का आरंभिक प्रमाण हड़प्पा एवं मोहनजोदड़ो की सभ्यता में मिलते हैं। बुद्धकालीन शासकों ने भी सड़कों का निर्माण करवाया था। 1857 ई० में प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के बाद रेलमार्गों के पूरक के रूप में सड़कों का विकास अंग्रेज शासकों ने किया था। यही नहीं, स्वतंत्रता के पूर्व देश में सड़कों के विकास के लिए 'नागपुर सड़क योजना' के तहत उल्लेखनीय प्रयास किए गए । परिणामतः स्वतंत्रता प्राप्ति के समय देश में लगभग 2.42 लाख किलोमीटर कच्ची एवं 1.46 लाख किलोमीटर लंबी पक्की सड़कें थीं।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद सड़कों के विकास पर पर्याप्त ध्यान दिया गया है। देश में सड़कों की कुल लंबाई 1950-51 ई० में 4 लाख किलोमीटर थी जो 2000-01 में बढ़कर 24 लाख तथा 2020-21 में बढ़कर 63.73 लाख किलोमीटर हो गई । इस अवधि में कई ऐसी योजनाएँ भी कार्यान्वित हुई जिनमें सड़कों के विकास एवं निर्माण को बल दिया गया । इन योजनाओं में राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना, स्वर्णिम चतुर्भुज सड़क परियोजना एवं प्रधानमंत्री ग्रामीण सड़क योजना उल्लेखनीय है। इसके अलावा सांसद एवं विधायक कोटे से भी गाँव एवं शहरों के मुहल्लों की छोटी-छोटी सड़कें बनाई जाती हैं। प्रधानमंत्री ग्रामीण सड़क योजना के अंतर्गत 500 की आबादी वाली बस्तियों को सड़कों से जोड़ने की योजना है ।

प्रादेशिक वितरण :

पक्की सड़कों की लंबाई की दृष्टि से देश में महाराष्ट्र को पहला स्थान प्राप्त है । यहाँ 2.70 लाख किलोमीटर लंबी पक्की सड़कें हैं । इसके बाद क्रम से उत्तर प्रदेश एवं उड़ीसा का दूसरा एवं तीसरा स्थान आता है । यहाँ इन सड़कों की लंबाई क्रमशः 2.47 लाख एवं 2.36 लाख किलोमीटर है । पक्की सड़कों की सबसे कम लंबाई वाला राज्य लक्षद्वीप है । यहाँ मात्र 01 किलोमीटर लंबी पक्की सड़क है । सड़कों के घनत्व की दृष्टि से केरल प्रथम स्थान पर है । यहाँ प्रति 100 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र पर 387 किलोमीटर लंबी सड़क है । गोआ और उड़ीसा क्रमशः 258 एवं 152 किलोमीटर लंबी सड़कों के साथ दूसरे एवं तीसरे स्थान पर है ।

उत्तर भारत में सड़कों का सर्वाधिक घनत्व पंजाब में 122 किलोमीटर प्रति 100 वर्ग किलोमीटर है । इसके बाद उत्तर प्रदेश एवं पश्चिम बंगाल का स्थान आता है । यहाँ घनत्व 103 एवं 102 किलोमीटर प्रति 100 वर्ग किलोमीटर है । उत्तर पूर्वी राज्यों में इस दृष्टि से त्रिपुरा प्रथम एवं नागालैंड दूसरे स्थान पर आता है । यहाँ क्रमशः 134 एवं 127 किलोमीटर लंबी सड़क प्रति 100 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र पर है । केंद्र शासित प्रदेशों में सर्वाधिक घनत्व चंडीगढ़ में 1176 किलोमीटर प्रति 100 वर्ग किलोमीटर है । पूरे देश में सड़कों का सर्वाधिक घनत्व दिल्ली में 1738। किलोमीटर प्रति 100 वर्ग किलोमीटर है।

सड़कों के प्रकार :

नागपुर सड़क योजना के द्वारा पहली बार देश में सड़कों को चार प्रकारों में बाँटा गया था।

(i) राष्ट्रीय राजमार्ग (ii) राज्य राजमार्ग

(iii) जिला की सड़कें (iv) ग्रामीण सड़कें ।

(i) राष्ट्रीय राजमार्ग :

राष्ट्रीय राजमार्ग देश के विभिन्न भागों, प्रांतों को आपस में जोड़ने का काम करते हैं । ये देश के एक छोर से दूसरे छोर तक फैली हैं । इस दृष्टि से राष्ट्रीय राजमार्ग संख्या–7 उल्लेखनीय है । देश का यह सबसे लंबा राष्ट्रीय राजमार्ग है । वाराणसी, जबलपुर, नागपुर, हैदराबाद, बंगलुरू

चित्र-4.1 भारत : राष्ट्रीय राजमार्ग

राष्ट्रीय राजमार्ग	
एकल लेन	– 32%
दो लेन	– 56%
चार/छः/आठ लेन	– 12%

एवं मदुरई होते हुए कन्याकुमारी तक इस राजमार्ग की लम्बाई 2369 किलोमीटर है। इन राजमार्गों के निर्माण एवं देखभाल का दायित्व केंद्र सरकार का है । देश में कुल 228 राष्ट्रीय राजमार्ग हैं, जिनकी कुल लंबाई 66590 किलोमीटर है । भारत की कुल सड़कों की लंबाई का यह मात्र 2% है। इस पर देश की कुल यातायात का लगभग 40% भाग ढोया जाता है । सभी राष्ट्रीय राजमार्ग पक्की सड़कें हैं । राष्ट्रीय राजमार्ग पर गाड़ियाँ तीव्र गति से चलती हैं जिसके कारण दुर्भाग्यवश घटनाएँ हो जाती हैं। अतः सुरक्षा एवं प्राथमिक उपचार के लिए इस मार्ग पर यत्र-तत्र आपातकालीन बॉक्स भी लगाए गए हैं।

देश में आर्थिक विकास को बढ़ावा देने के लिए सरकार ने व्यापक राष्ट्रीय राजमार्ग विकास परियोजना शुरू की है। यह देश की अबतक की सबसे बड़ी राजमार्ग परियोजना है राजमार्ग विकास परियोजना के चरण I एवं चरण II की गतिविधियाँ इस प्रकार हैं –

(i) स्वर्णिम चतुर्भुज राजमार्ग : केंद्र सरकार द्वारा भारत के चार प्रमुख महानगरों दिल्ली, मुंबई, चेन्नई एवं कोलकाता को जोड़नेवाली 6 लेनवाली लगभग 5846 किलोमीटर लंबी सड़कों का निर्माण कार्य जारी है ।

(ii) पूरब-पश्चिम एवं उत्तर-दक्षिण गलियारा : पूरब में सिलचर तथा पश्चिम में पोरबंदर एवं उत्तर में श्रीनगर तथा दक्षिण में कन्याकुमारी को जोड़नेवाली इन सड़कों का निर्माण कार्य जारी है। पूरब-पश्चिम गलियारा की कुल लंबाई 3640 किलोमीटर एवं उत्तर दक्षिण गलियारा की कुल लंबाई 4016 किलोमीटर प्रस्तावित है ।

(iii) एक्सप्रेस वे : अल्प समय में गंतव्य स्थानों तक पहुँचाने के उद्देश्य से बननेवाली इन सड़कों पर गाड़ियों की गति बहुत अधिक होती है । इन पर चलनेवाली गाड़ियों को अतिरिक्त टोल-टैक्स भी देना पड़ता है। चार लेनवाली इन अत्याधुनिक सड़कों में कोलकाता दमदम राजमार्ग, अहमदाबाद राजमार्ग, मुंबई पश्चिमी तटीय राजमार्ग शामिल हैं। मुंबई-पुणे राजमार्ग देश का पहला अंतर्राष्ट्रीय स्तर का राजमार्ग है । देश के 10 प्रमुख बंदरगाहों को जोड़नेवाले 380 किलोमीटर लंबे राष्ट्रीय राजमार्गों को चार लेनवाला एक्सप्रेस वे बनाए जाने का प्रस्ताव है ।

2. राज्य राजमार्ग :

राज्य राजमार्ग राज्यों की राजधानियों को विभिन्न जिला मुख्यालयों से जोड़ने का काम करती है । इन सड़कों के निर्माण एवं देखरेख का दायित्व राज्य सरकारों पर है । यह दायित्व राज्य के सार्वजनिक निर्माण विभाग द्वारा पूरा किया जाता है । देश में ऐसे सड़कों की लंबाई कुल सड़कों का मात्र 4% है। ये सड़कें राष्ट्रीय राजमार्गों से भी जुड़ी हैं ।

3. जिला सड़कें :

जिला सड़कें राज्यों के विभिन्न जिला मुख्यालयों एवं शहरों को मिलाने का काम करती हैं। देश की कुल सड़कों में इनका हिस्सा 14% है। क्षेत्रीय विकास में इन सड़कों का विशेष महत्त्व है । इन सभी सड़कों के रख-रखाव की जिम्मेवारी राज्य सरकारों पर है ।

4. ग्रामीण सड़कें :

ये सड़कें विभिन्न गाँवों को एक-दूसरे से जोड़ने का काम करती हैं। इसके अंतर्गत देश की कुल सड़कों का 80% भाग शामिल है । इन सड़कों का विकास प्रधानमंत्री सड़क योजना के अंतर्गत किया जा रहा है ।

5. सीमांत सड़कें :

राजनीतिक एवं सामरिक दृष्टि से सीमावर्ती क्षेत्रों में सड़कों का निर्माण आवश्यक है। भारत में इन सड़कों का निर्माण एवं रख-रखाव सीमा सड़क संगठन करता है, जिसका गठन 1960 ई० में किया गया था । युद्ध की स्थिति में इन सड़कों का महत्त्व तुलनात्मक

चित्र-4.2 उत्तर-पूर्वी मार्ग सड़क पर यातायात

रूप से काफी बढ़ जाता है । इन्हीं सड़कों के माध्यम से सीमा पर सैनिकों के लिए आवश्यक सामानों को भेजा जाता है ।

सड़क मार्ग परिवहन का एक सर्वसुलभ एवं सबसे सस्ता साधन है। इसका विकास पूर्णतः उच्चावच से प्रभावित होता है । मैदानी क्षेत्रों में इसका विकास करना सरल होता है जबकि पर्वतीय एवं पठारी क्षेत्रों में इसका निर्माण करना कठिन होता है । उच्चावच की विशेषता के कारण ही पर्वतीय क्षेत्रों में सीढ़ीनुमा घुमावदार सड़कें देखने को मिलती हैं।

सड़कों के बिना मानवीय जीवन की कल्पना ही व्यर्थ है । गाँव हो या शहर या फिर महानगर, सड़कों का विकास सभी जगह पाया जाता है । परंतु इनके स्तर में पर्याप्त भिन्नताएँ पायी जाती हैं। सड़कों के विकास का सीधा संबंध अर्थव्यवस्था के विकास से है।

जब आप अपने माता-पिता के साथ सब्जी या दूसरे अन्य सामान खरीदने बाजार जाते हैं तब सड़क मार्ग का ही आप सहारा लेते हैं। वस्तुओं एवं सेवाओं का स्थानांतरण सड़क मार्ग द्वारा ही किया जाता है । यह ऐसा परिवहन साधन है जो लोगों की आवश्यकतानुसार कहीं भी बनाया जा सकता है। यही नहीं, यह दूसरे सभी परिवहन साधनों के पूरक के रूप में भी कार्य करता है । इसके विकास के बिना रेलमार्ग, जलमार्ग एवं वायुमार्ग की सेवाएँ अधूरी रह जाएंगी । कम लागत पर बननेवाला यह मार्ग अपेक्षाकृत कम दूरी एवं वस्तुओं के परिवहन का सबसे उत्तम साधन है । इस परिवहन की सबसे अनोखी विशेषता यह है कि यह घर-घर सेवाएँ उपलब्ध कराता है तथा अन्य सभी परिवहन सेवाओं के लिए एक कड़ी का काम भी करता है ।

देश के कुल यातायात में सड़कों के जरिए होनेवाली माल ढुलाई 1950-51 के 6 अरब टन से बढ़कर 2003-04 में 600 अरब टन किलोमीटर हो गई। इसी तरह इस दौरान यात्रियों की आवाजाही 23 अरब यात्री किलोमीटर से बढ़कर 3135 अरब यात्री किलोमीटर हो गई।

(ii) रेलमार्ग :

भारत में रेल परिवहन का विकास 16 अप्रैल 1853 ई० से माना जाता है। जब पहली बार मुंबई से थाणे के बीच 34 किलोमीटर की लंबाई में रेलगाड़ी चली थी । इसके बाद ईस्ट

इंडिया कंपनी ने अपने लाभ के उद्देश्य से रेलों का जाल बिछाने पर जोर दिया। धीरे-धीरे देश में रेलमार्गों की लंबाई बढ़ने लगी। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत सरकार ने भी इसके विकास पर पर्याप्त ध्यान दिया है। फलत: 1947-48 में रेलमार्गों की कुल लंबाई लगभग 54 हजार किलोमीटर से बढ़कर 2006-07 में लगभग 63 हजार 327 किलोमीटर हो गई। प्रशासनिक सुविधा के लिए भारतीय रेलवे को 17 क्षेत्रों (Zones) में बाँटा गया है। देश में सबसे बड़ा रेल क्षेत्र उत्तर रेलवे तथा सबसे छोटा उत्तर-पूर्वा सीमांत रेलवे है।

	रेलवे क्षेत्र	मुख्यालय
1.	उत्तर रेलवे	नई दिल्ली
2.	पूर्व रेलवे	कोलकाता
3.	पश्चिम रेलवे	चर्चगेट, मुंबई
4.	दक्षिण रेलवे	चेन्नई
5.	मध्य रेलवे	मुंबई सेंट्रल
6.	पूर्वोत्तर रेलवे	गोरखपुर
7.	पूर्व-मध्य रेलवे	हाजीपुर
8.	उत्तर-पूर्वी सीमांत रेलवे	मालीगाँव (गुवाहाटी)
9.	दक्षिण-मध्य रेलवे	सिकंदराबाद
10.	दक्षिण-पूर्व रेलवे	कोलकाता
11.	पूर्वी तटवर्ती रेलवे	भुवनेश्वर
12.	उत्तर मध्य रेलवे	इलाहाबाद
13.	उत्तर-पश्चिम रेलवे	जयपुर
14.	दक्षिण-पूर्व मध्य रेलवे	बिलासपुर
15.	दक्षिण-पश्चिम रेलवे	हुबली
16	पश्चिम-मध्य रेलवे	जबलपुर
17.	दक्षिण तटीय रेलवे मंडल –	विशाखापत्तनम्

भारतीय रेलवे :

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से ही देश में रेल परिवहन के विकास पर जोर दिया गया है। विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं के दौरान रेलमार्गों के विस्तार के साथ-साथ सुविधाओं में भी पर्याप्त विस्तार किया गया है। भारतीय रेल परिवहन कई विशेषताओं से युक्त है। इनमें कुछ का उल्लेख यहाँ किया गया है।

क्या आप जानते है ?
बड़े शहरों में दैनिक यात्रियों के आवागमन के लिए DMU, EMU एवं MEMU रेल सेवाएँ उपलब्ध हैं।

(i) दो बड़े शहरों एवं महानगरों के बीच तीव्र गति से चलने वाली राजधानी एक्सप्रेस एवं शताब्दी एक्सप्रेस ट्रेनों का परिचालन किया जा रहा है।

(ii) छोटे शहरों को महानगरों एवं बड़े शहरों से जोड़ने के लिए जन-शताब्दी एक्सप्रेस गाड़ियाँ चलायी जा रही हैं।

(iii) माल ढुलाई के लिए प्राइवेट कंटेनर एवं वैगन, मालगाड़ियों में लगाई जा रही हैं।

(iv) 31 मार्च 2006 तक भारतीय रेलवे में 44 भाप इंजन, 4793 डीजल इंजन और 3188 विद्युत इंजन काम कर रहे थे।

(v) ट्रेनों की दुर्घटना को रोकने के लिए इंजनों में रक्षा कवच (A C D) की व्यवस्था की गई है।

(vi) 1 अगस्त 1947 से रेल मंत्रालय ने रेल यात्री बीमा योजना शुरू की है।

(vii) महाराष्ट्र, गोआ, कर्नाटक और केरल के मध्य 760 किलोमीटर लंबी कोंकण रेल परियोजना के तहत रेल चलायी जा रही है। इस रेलमार्ग पर आप्टा से मंगलौर के बीच 92 सुरंग, 1819 छोटे पुल, 179 बड़े पुल एवं 56 रेलवे स्टेशन हैं। इस रेलमार्ग पर ही 6.5 किलोमीटर लंबी सुरंग रत्नागिरी के निकट है। यह वर्तमान में देश की सबसे लंबी रेल सुरंग है।

(viii) कोलकाता एवं दिल्ली में मेट्रो रेल के तहत भूमिगत रेल सेवा दी जा रही है।

(ix) राजस्थान में शाही रेलगाड़ी 'पैलेस ऑन व्हील्स' तथा महाराष्ट्र में 'डेक्कन ओडिसी' रेलगाड़ियाँ चलाई जा रही हैं।

(x) पर्वतीय भागों में स्थित पर्यटक स्थलों तक पहुँचने के लिए तथा मनोरंजन पूर्ण यात्रा के लिए नैरो गेज एवं स्पेशल गेज वाली रेलें चलाई जा रही हैं। इनमें शिमला, ऊटी, माउंट आबू, दार्जिलिंग इत्यादि की रेल सेवाएँ शामिल हैं।

(xi) रेल संपत्तियों एवं रेल यात्रियों की सुरक्षा के लिए जी०आर०पी० (GRP) एवं आर०पी०एफ० (RPF) की व्यवस्था है।

(xii) 31 मार्च 2007 तक भारतीय रेल के पास 6909 स्टेशन, 8153 रेल इंजन, 45360 यात्री गाड़ियाँ एवं 1905 अन्य सवारी गाड़ियाँ उपलब्ध थीं।

(xiii) पूर्वोत्तर राज्यों में मेघालय एकमात्र ऐसा राज्य है जहाँ रेलमार्ग नहीं है।

(xiv) भारतीय रेल प्रणाली एशिया में सबसे बड़ी तथा विश्व की तीसरी बड़ी रेल प्रणाली है।

(xv) विश्व की सबसे अधिक विद्युतीकृत रेलगाड़ियाँ रूस के बाद भारत में ही चलती हैं।

(xvi) भारतीय रेल की सबसे अनोखी विशेषता 'जीवन रेखा' का चलाया जाना है। 16 जुलाई 1991 से चलनेवाली यह रेलगाड़ी विश्व का पहला चलंत अस्पताल है।

भारतीय रेलमार्ग के प्रमुख गेज

रेल लाइन (गेज)	आमीन लंबाई	कुल मार्ग की लंबाई (कि० मी०)	प्रतिशत
बड़ी लाइन	1.676 मीटर	49820	74%
मीटर लाइन	1.000 मीटर	10621	21%
छोटी लाइन	0.762 मीटर एवं 0.610 मीटर	2886	5%
योग		63327	100%

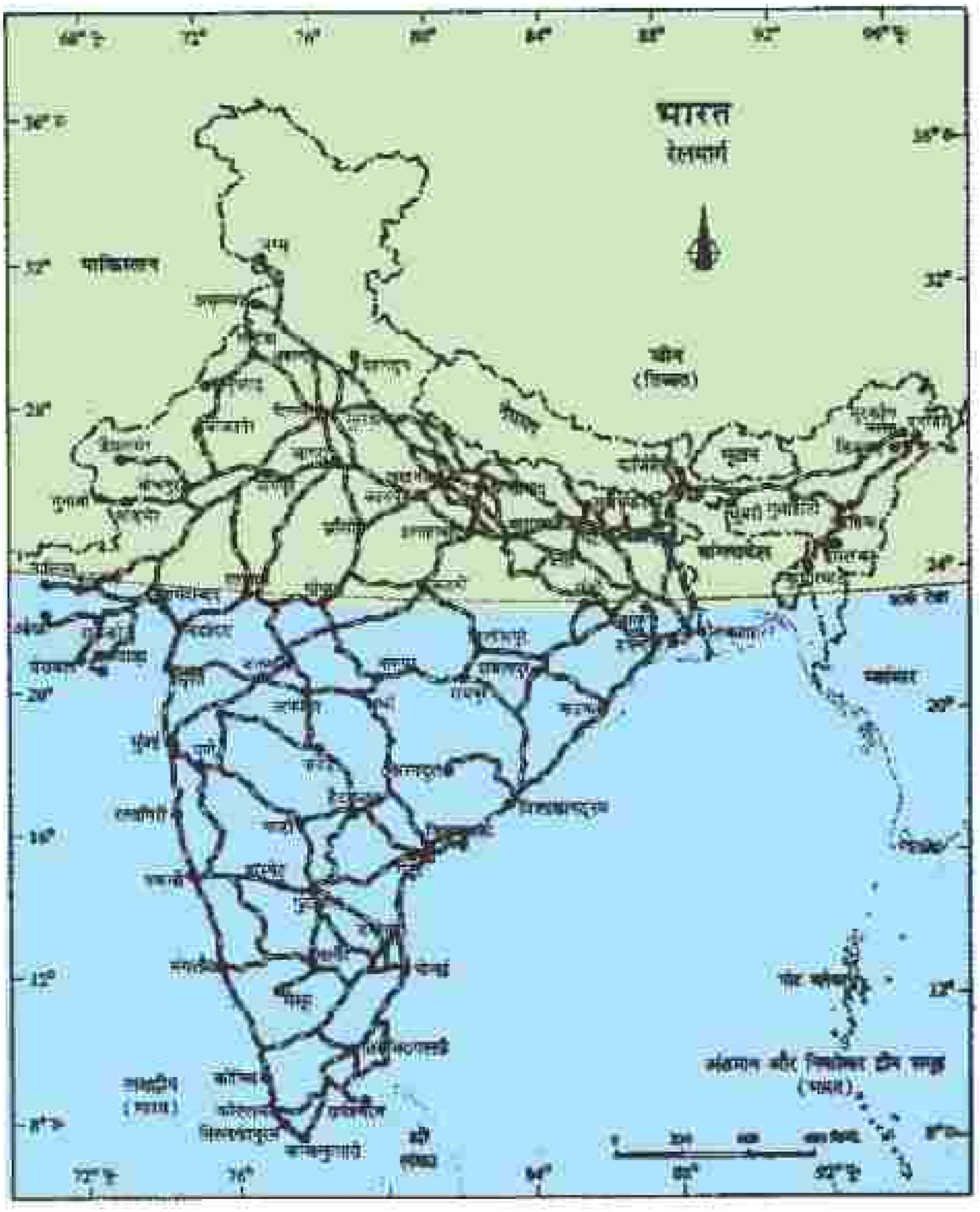

चित्र-4.3 भारत : प्रमुख रेलमार्ग

भारतीय अर्थव्यवस्था से लेकर आम जन-जीवन में रेल की महत्त्वपूर्ण भूमिका है। यह लोगों के आवागमन एवं सामानों की ढुलाई के साथ ही यह भारतीय संस्कृति को भी जोड़ने का काम करता है। मासिक टिकट के जरिए और भी कम भाड़ा पर यात्रा की सुविधा इससे उपलब्ध है।

उद्योगों के लिए कच्चा माल और उद्योगों के तैयार माल को बाजारों या शहरों तक अधिक संख्या एवं मात्रा में रेलवे के द्वारा ही भेजा जाता है। बंदरगाहों पर उतरनेवाला आयातित माल रेलमार्गों के द्वारा ही गंतव्य स्थानों के लिए भेजा जाता है। लेकिन भारतीय रेल की एक खामी यह है कि यहाँ 3700 समपार बिना फाटक वाले हैं, जिसे पार करते समय (मानव रहित रेलवे क्रॉसिंग) दुर्घटनाएँ होती रहती हैं। ऐसी दुर्घटनाएँ मानवीय भूल का ही परिणाम हैं। अतः ऐसे फाटक पार करते समय आवश्यक सावधानियाँ बरतनी चाहिए।

मानवरहित रेलवे समपार फाटक पर संयम बरतें

(i)	**रुकिए**	रेलवे क्रासिंग के पूर्व स्पीड ब्रेकर के पहले ही अपने वाहन की गति धीमी करें और संकेत बोर्ड से पहले रोक दें।
(ii)	**देखिए**	दोनों ओर ध्यान से देखिए कि कोई रेलगाड़ी तो नहीं आ रही है।
(iii)	**सुनिए**	रेलगाड़ी की सीटी अथवा उसके आने की आवाज सुनिए।
(iv)	**जाइए**	यह सुनिश्चित कर लें कि किसी ओर से कोई रेलगाड़ी नहीं आ रही है तभी आप मानवरहित रेलवे समपार से अपना वाहन पार कराइए।

प्रतिदिन लगभग 1.24 करोड़ यात्रियों को यातायात की सुविधा देनेवाले इस रेल की सेवा गरीब से लेकर अमीर सभी यात्रियों के लिए उपलब्ध है। यही नहीं, विशाल क्षेत्रफल एवं विभिन्न उच्चावच वाले इस देश के विभिन्न भागों में रेलमार्गों के जरिए पहुँचना संभव है। 1950-51 में रेलयात्रियों की संख्या 1 अरब 28 करोड़ 40 लाख थी जो 2006-07 में बढ़कर 6 अरब 21 करोड़ 90 लाख हो गई। इसी अवधि में रेल द्वारा 7.32 करोड़ टन राजस्व अर्जक माल की ढुलाई

बढ़कर 72.76 करोड़ टन हो गई है । इससे देश की अर्थव्यवस्था में रेलवे का महत्त्व स्पष्ट है ।

राष्ट्रीय संपदा के रूप में कार्यरत भारतीय रेल की कुछ समस्याएँ हैं । आज भी बहुत से यात्री बिना टिकट यात्रा कर रेलवे राजस्व को हानि पहुँचा रहे हैं । जंजीर खींचकर अनावश्यक रूप से गाड़ी खड़ी करके समय की बर्बादी की जाती है । आतंकी, नक्सली घटनाओं एवं हड़ताल की स्थिति में सबसे अधिक रेल संपत्ति की ही बर्बादी की जाती है । यह एक गैर-जिम्मेदाराना हरकत है जिसे रोकने के लिए सभी को प्रयास करना चाहिए ।

(iii) पाइपलाइन मार्ग :

शहरों में घर-घर तक पानी को पहुँचाने के लिए पाइप के इस्तेमाल से आप अवगत हैं, परंतु वर्तमान समय में परिवहन के रूप में पाइपलाइन का महत्त्व दिन प्रति दिन बढ़ता जा रहा है । पाइपलाइन का उपयोग तरल पदार्थों जैसे पेट्रोलियम के साथ ही गैस के परिवहन के लिए भी किया जाने लगा है । पाइपलाइन के द्वारा मरुस्थलों, जंगलों, पर्वतीय क्षेत्रों, मैदानी भागों और यहाँ तक कि समुद्र के नीचे से होकर भी परिवहन किया जाना संभव है ।

भारत में पाइपलाइन :

भारत में पाइपलाइन का भविष्य मुख्यतः तेल एवं प्राकृतिक गैस उद्योग पर निर्भर है । देश में कच्चे तेलों को उत्पादन क्षेत्रों से शोधनशालाओं तक तथा शोधन-शालाओं से तेल उत्पादों को बाजार तक पाइपलाइनों के जरिए भेजा जाता है । सड़क मार्ग द्वारा तेल टैंकरों के द्वारा भी बाजारों तक भेजे जाते हैं ।

शोधनशालाओं में कच्चे तेल से प्राप्त विभिन्न उत्पादों (एल०पी०जी०, मोटर गैसोलीन, नेफ्था, कैरोसीन, वायुयान तेल, हाई स्पीड डीजल, लाइट डीजल, फरनेस तेल, ल्यूब ऑयल इत्यादि) को पाइपलाइनों की सहायता से ही एक स्थान से दूसरे स्थानों तक भेजा जाता है। आजकल ठोस पदार्थों जैसे खनिज को तरल अवस्था में परिवर्तित कर पाइपलाइनों द्वारा ले जाया जाने लगा है ।

देश में पेट्रोलियम उत्पादन क्षेत्रों में वृद्धि तथा आयात में वृद्धि के साथ ही पाइपलाइन मार्ग का विस्तार क्रमशः होने लगा है । इसकी सघनता देश के पश्चिमी भागों में ज्यादा है । 1985 ई० तक देश में पाइपलाइनों का कुल विस्तार 6535 किलोमीटर तथा 2004 ई० में 18546 किलोमीटर हो गया है।

पाइपलाइन का वितरण :

भारत में पाइपलाइन को मुख्यतः दो वर्गों में रखा जा सकता है :

(क) तेल पाइपलाइन : (i) कच्चा तेल पाइपलाइन, (ii) तेल उत्पाद पाइपलाइन

(ख) गैस पाइपलाइन : (i) एल० पी० जी० पाइपलाइन (ii) एच० बी० जे० पाइपलाइन

भारत में कच्चा तेल परिवहन के लिए पूर्वी तथा उत्तर-पूर्वी भारत और पश्चिमी भारत में पाइपलाइनें बिछाई गई हैं । पूर्वी तथा उत्तर-पूर्वी भारत में यह डिगबोई से बरौनी एवं हल्दिया तक है जिसे पाराद्वीप तक बढ़ाया जाना है । पश्चिम में एक पाइपलाइन कांडला अजमेर होते हुए पानीपत तक एवं जामनगर से चाकसू तक है। चाकसू से यह पानीपत एवं मथुरा तक दो भागों में बाँटा गया है। दक्षिण भारत में विशाखापत्तनम, विजयवाड़ा एवं हैदराबाद के मध्य पाइपलाइन हैं। इसी पाइपलाइन के समानांतर एल०पी०जी० पाइपलाइन भी है । गुजरात में हजीरा से उत्तर प्रदेश के जगदीशपुर तक 1730 किलोमीटर लंबा हजीरा-बीजापुर-जगदीशपुर गैस पाइपलाइन है । इसे ही एच०बी०जे०गैस पाइपलाइन कहा जाता है । भारतीय गैस प्राधिकरण लिमिटेड (गेल) देश में लगभग 4500 किलोमीटर लंबे गैस पाइपलाइन का संचालन करता है ।

पेट्रोलियम उत्पादों के वितरण की दृष्टि से गुवाहाटी-सिलीगुड़ी पाइपलाइन, बरौनी-कानपुर लखनऊ-पाइपलाइन, चेन्नई-त्रिची पाइपलाइन, कोच्चि-कारूर पाइपलाइन, मंगलौर-हासन-बेंगलुरु पाइपलाइन, मुंबई-मनमाड-इंदौर पाइपलाइन, मुंबई-पुणे पाइपलाइन एवं नहरकटिया-मौनग्राम-हल्दिया पाइपलाइन

क्या आप जानते हैं?

पाइपलाइन बिछाने के पहले स्टील पाइप को बिटुमिन की एक परत से ढँक दिया जाता है । फिर उसके ऊपर ग्लास फाइबर की परत चढ़ा दी जाती है । इससे पाइप की जंग से रक्षा हो जाती है ।

उल्लेखनीय है। देश का सबसे बड़ा उत्पाद पाइपलाइन जाल नहरकटिया-गुवाहाटी-सिलीगुड़ी-बरौनी-कानपुर-राजबंद-मौनग्राम-हल्दिया पाइपलाइन है ।

ठोस पदार्थों के परिवहन की दृष्टि से कुद्रेमुख-मंगलौर पाइपलाइन लौह अयस्क के लिए, उदयपुर जिला स्थित महन की खानों से देबारी प्रगलक कारखाना तक रॉक फास्फेट सांद्र के परिवहन के लिए पाइपलाइन प्रसिद्ध हैं ।

(iv) वायुमार्ग :

आपने अपने गाँव/शहर के ऊपर आकाश में हवाई जहाज को उड़ते हुए अवश्य ही देखा होगा । वायुमार्ग के जरिए परिवहन का यह सबसे तीव्र, आधुनिक एवं महँगा साधन है । लंबी दूरी की आरामदायक एवं सुखद यात्रा कम समय में इसके द्वारा संभव है। भारत में यह विभिन्न राजधानी शहरों, मेगाशहरों, औद्योगिक एवं वाणिज्यिक केंद्रों को एक-दूसरे से जोड़ने का काम करता है । देश में इस परिवहन का उपयोग विभिन्न रूपों में किया जाता है ।

भारत में वायु परिवहन :

देश में वायु परिवहन का आरंभ 1911 ई० में इलाहाबाद से नैनी के बीच 10 किलोमीटर की छोटी सी दूरी के उड़ान से हुआ था । यह उड़ान डाक ले जाने के लिए किया गया था । कालांतर में इस दिशा में विकास के लिए नए प्रयास किए जाते रहे हैं । 1933 ई० में इंडियन नेशनल एयरवेज की स्थापना की गई । इसका मुख्यालय दिल्ली में बनाया गया । स्वतंत्रता प्राप्ति के समय 1947 ई० के आरंभ तक देश में 21 विमान कंपनियाँ वायु परिवहन का कार्य कर रही थीं । स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत सरकार ने इस क्षेत्र में विकास के लिए विमान परिवहन जाँच समिति 1950 ई० में गठित की । इस समिति के सुझाव पर ही 1953 ई० में वायु परिवहन का राष्ट्रीयकरण कर दिया गया । इसके बाद आंतरिक या घरेलू वायु परिवहन सेवा का भार इंडियन एयरलाइंस तथा अंतर्राष्ट्रीय वायु परिवहन सेवा का भार एयर इंडिया को सौंपा गया । साथ ही भारतीय विमान निगम का मुख्यालय नई दिल्ली में बनाया गया । इंडियन एयरलाइंस भारत के विभिन्न शहरों के अतिरिक्त कई पड़ोसी देशों के लिए भी विमान सेवाएँ उपलब्ध कराता है। व्यावहारिक रूप में इंडियन एयरलाइंस द्वारा विमान सेवाएँ अपनी कई अनुषंगी विमान कंपनियों की

सहायता से उपलब्ध कराया जाता है । यहाँ यह उल्लेखनीय है कि 8 दिसंबर 2005 से इंडियन एयर लाइंस सिर्फ 'इंडियन' (Indian) के नाम से जाना जाने लगा है ।

भारत में हेलिकॉप्टर सेवा पवन हंस हेलिकॉप्टर लिमिटेड द्वारा 1985 ई० से दी जा रही है जो विभिन्न उद्देश्यों को पूरा करने के लिए अपनी सेवाएँ राष्ट्र को दे रहा है । देश में सभी प्रकार के हवाई अड्डों का नियंत्रण, विकास एवं प्रबंधन तथा विमानन क्षेत्र के सभी अन्य कार्यों हेतु 1 अप्रैल 1955 को 'एयरपोर्ट अथॉरिटी ऑफ इंडिया' का गठन किया गया । देश में लगभग 450 हवाई अड्डे हैं इनमें 12 अंतर्राष्ट्रीय हवाई अड्डे हैं ।

पिछले कुछ वर्षों में नागर विमानन क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रगति हुई है । आज वायु परिवहन कंपनियाँ सार्वजनिक एवं निजी दोनों क्षेत्रों में कार्य कर रही हैं । निजी क्षेत्र के प्रमुख एयरलाइंस हैः जेट एयरवेज, सहारा एयरलाइंस, डेक्कन विमानन, गो एयरवेज, किंगफिशर एयरलाइंस, पैरामाउंट एयरवेज एवं इंटर ग्लोब एविएशन । देश में मालवाहक सेवा संचालित करने के लिए ब्लू डर्ट विमानन नाम से एक निजी मालवाहक कंपनी कार्य कर रही है । इन घरेलू सेवाओं के अतिरिक्त 86 ऐसी कंपनियाँ हैं जिनके पास गैर निर्धारित उड़ानों को संचालित करने का परमिट है । एन०ए०सी०आई०एल० अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर सेवाएँ उपलब्ध कराती है । साथ ही दक्षिण-पूर्वी एशियाई और मध्य एशियाई देशों में भी उड़ानें संचालित करती है । निजी एयरलाइनों में जेट एयरवेज विभिन्न अंतर्राष्ट्रीय क्षेत्रों में सेवाएँ संचालित कर रहा है । भारत का 103 देशों के साथ द्विपक्षीय विमान सेवा समझौता है । द्विपक्षीय अधिकारों के अपेक्षित उपयोग को ध्यान में रखकर कम-से-कम 5 वर्षों से घरेलू विमान सेवा उपलब्ध करानेवाले और बेड़े में 20 जहाज रखनेवाले विमान सेवा प्रदाताओं को विदेशी गंतव्यों तक विमान सेवा चलाने की अनुमति दी गई है ।

वायु परिवहन एक ऐसा परिवहन साधन है जिसके द्वारा जंगल, पहाड़, पठार, नदी, झील, सागर, इत्यादि सभी को पार करना संभव है । लंबी दूरी की यात्रा इससे काफी कम समय में तय की जाने लगी है । भारतीय विमानपत्तन प्राधिकरण (ए०ए०आई०) द्वारा 2007-2008 के दौरान 13.08 लाख हवाई उड़ानों (10.59 लाख घरेलू तथा 2.49 लाख अंतर्राष्ट्रीय), 1168.7 लाख

यात्री (870.6 लाख घरेलू तथा 298.1 लाख अंतर्राष्ट्रीय) तथा 17.14 लाख मीट्रिक टन सामान (5.67 लाख मीट्रिक टन घरेलू एवं 11.47 लाख मीट्रिक टन अंतर्राष्ट्रीय) का प्रबंधन किया गया।

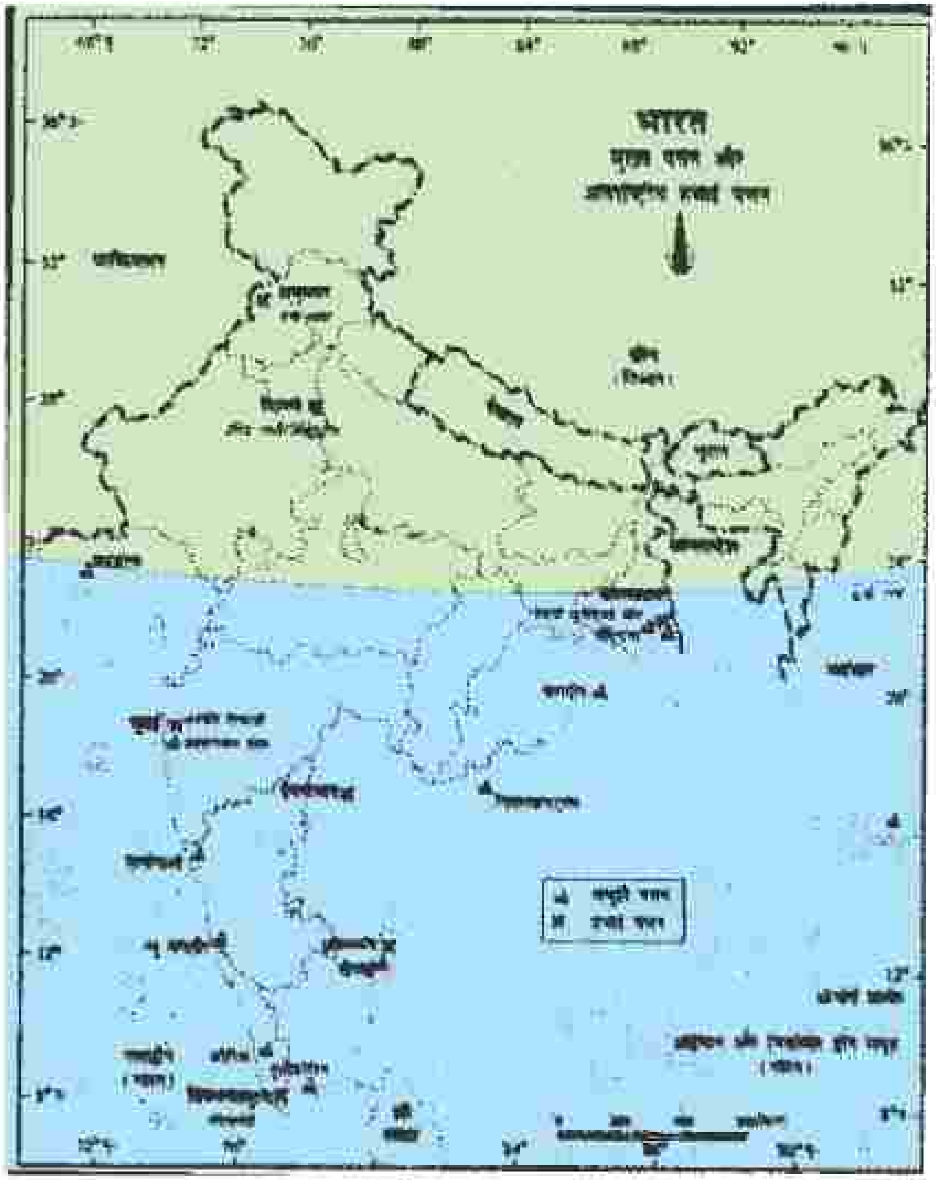

चित्र-4.5 भारत : मुख्य पत्तन और अंतर्राष्ट्रीय हवाई पत्तन

वायु परिवहन के कारण दूरी का महत्त्व कम हो गया है । यही नहीं देश के भीतर भी ऐसे कई दुर्गम क्षेत्र हैं जहाँ सड़क एवं रेलमार्गों के द्वारा पहुँचना संभव नहीं है। वैसी जगहों पर पहुँचने का एकमात्र जरिया वायु परिवहन ही है ।

(v) जलमार्ग :

जलमार्ग परिवहन का एक प्राचीन माध्यम रहा है। इसके द्वारा विश्व स्तर पर कई साहसिक यात्राएँ की गई हैं। जलमार्ग दो प्रकार का होता है-(क) आंतरिक जलमार्ग, (ख) अंतर्राष्ट्रीय जलमार्ग । भारत में लगभग 14500 किलोमीटर लंबे नौसंचालन मार्ग हैं जिससे प्रतिवर्ष लगभग 5 करोड़ टन माल की ढुलाई की जाती है ।

आंतरिक जलमार्गों के अंतर्गत मुख्य रूप से नदियों, नहरों तथा झीलों का उपयोग किया जाता है । भारत का आंतरिक जलमार्ग पिछड़ी किंतु विकासशील अवस्था में है । भारत में पहली बार 1806 ई० में दक्षिण भारत में बकिंघम नहर बनाकर इसे कन्नागोर नहर से मिलाते हुए गोदावरी और कृष्णा नदी से जोड़ा गया तथा 720 किलोमीटर लंबा जलमार्ग बनाया गया । बाद में इसे 40 किलोमीटर बढ़ाकर पुलीकट झील से जोड़ दिया गया ।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद 1952 ई० में केंद्र सरकार द्वारा 'गंगा-ब्रह्मपुत्र जल परिवहन बोर्ड' की स्थापना की गई । जिसके अंतर्गत असम, पश्चिम बंगाल, बिहार एवं उत्तर प्रदेश को रखा गया। 1960 ई० में इस बोर्ड द्वारा गंगा नदी में यातायात के सर्वेक्षण का सुझाव दिया गया । 1975 ई० में इस दृष्टि से जहाजरानी एवं परिवहन मंत्रालय द्वारा फरक्का से इलाहाबाद तक गंगा नदी में सर्वेक्षण किया गया ।

कालांतर में 27 अक्टूबर 1986 को भारतीय अंतर्देशीय जलमार्ग प्राधिकरण की स्थापना की गई । इसे राष्ट्रीय जलमार्ग के विकास, रख रखाव और नियम की जिम्मेदारी सौंपी गई है । यह अंतर्देशीय जलमार्ग के विकास से संबंधित मामलों में केंद्र तथा राज्य सरकारों को सलाह भी देता है । इसका मुख्यालय नोएडा एवं क्षेत्रीय कार्यालय पटना, कोलकाता, गुवाहाटी एवं कोच्चि में तथा शाखा कार्यालय इलाहाबाद, वाराणसी, भागलपुर, फरक्का एवं कोल्लम में है ।

भारत के पाँच आंतरिक जलमार्गों को राष्ट्रीय जलमार्ग घोषित किया गया है । ये जलमार्ग हैं –

(i) राष्ट्रीय जलमार्ग संख्या–1–यह इलाहाबाद से हल्दिया के बीच 1620 किलोमीटर की लंबाई में है ।

(ii) राष्ट्रीय जलमार्ग संख्या–2–यह सदिया से धुबरी तक 891 किलोमीटर की लंबाई में ब्रह्मपुत्र नदी में विकसित है। इसका उपयोग भारत और बांग्ला देश साझेदारी में करते हैं।

(iii) राष्ट्रीय जलमार्ग संख्या–3 कोलम से कोट्टापुरम 205 किलोमीटर लंबा यह जलमार्ग चंपाकारा तथा उद्योगमंडल नहरों सहित पश्चिमी तट नहर में विकसित है ।

(iv) राष्ट्रीय जलमार्ग संख्या–4 यह गोदावरी–कृष्णा नदियों के सहारे 1095 किलोमीटर में फैला जलमार्ग है। पुदुचेरी-काकीनाडा नहर के सहारे यह जलमार्ग आंध्रप्रदेश, तमिलनाडु एवं पुद्दुचेरी में फैला है।

(v) राष्ट्रीय जलमार्ग संख्या–5 यह जलमार्ग उड़ीसा राज्य में ईस्ट कोस्ट कनाल, मताई नदी, ब्राह्मणी नदी एवं महानदी डेल्टा के सहारे 623 किलोमीटर की लंबाई में विकसित की जा रही है ।

इन प्रमुख राष्ट्रीय जलमार्गों के अतिरिक्त गोआ में 555 किलोमीटर, गुजरात में 320 किलोमीटर तथा कर्नाटक में भी आंतरिक जलमार्ग का विकास किया गया है । भारतीय अंतर्देशीय जलमार्ग प्राधिकरण द्वारा कुछ अन्य मार्गों को भी राष्ट्रीय जलमार्ग का दर्जा देने का प्रस्ताव है। देश में अंतर्देशीय जल परिवहन क्षेत्र के समग्र विकास के लिए जरूरी है कि राष्ट्रीय जलमार्गों के साथ-साथ अन्य सहायक जलमार्गों को भी विकसित किया जाए ।

अंतर्देशीय जल परिवहन और व्यापार के क्षेत्र में भारत और बांग्ला देश के बीच संधि है। इसके तहत किसी एक देश के जहाज निर्धारित जलमार्गों से दूसरे देश में जा सकते हैं ।

राष्ट्रीय अंतर्देशीय नौवहन संस्थान पटना में फरवरी 2004 से कार्यरत है । राष्ट्रीय महत्त्व का यह संस्थान देश में अपनी तरह का पहला संस्थान है । यहाँ से प्रशिक्षणार्थी, जहाजकर्मी प्रशिक्षण प्राप्त करते हैं ।

अंतर्राष्ट्रीय जलमार्ग : की दृष्टि से भारत के पास 7517 किलोमीटर लंबा समुद्री तट उपलब्ध है जिसके सहारे 12 बड़े एवं 200 छोटे बंदरगाह विकसित हैं। देश का लगभग 90% (मूल्य स्तर पर 70%) व्यापार इन्हीं समुद्री मार्गों से होता है। व्यापारिक जहाजरानी बेड़े की दृष्टि से भारत का विश्व में 20 वाँ स्थान है। भारत में निम्न 12 बड़े बंदरगाह हैं।

	बंदरगाह	राज्य
1.	मुंबई	महाराष्ट्र
2.	न्हावशेवा	महाराष्ट्र
3.	कोलकाता, हल्दिया	पं० बंगाल
4.	चेन्नई	तमिलनाडु
5.	तूतीकोरिन	तमिलनाडु
6.	कांडला	गुजरात
7.	कोच्चि	केरल
8.	इन्नौर	तमिलनाडु
9.	पाराद्वीप	उड़ीसा
10.	विशाखापट्नम	आंध्रप्रदेश
11.	मर्मुगाव	गोवा
12.	मंगलौर	कर्नाटक

संचार :

> **संचार के प्रमुख साधन**
> डाक सेवा, टेलीग्राम, टेलीफोन, फैक्स, रेडियो, सिनेमा, समाचार पत्र, पत्रिकाएँ, इंटरनेट, ईमेल

संदेशों का आदान-प्रदान संचार कहलाता है। मानव ने अपनी आवश्यकता के अनुसार समय-समय पर संचार के विभिन्न साधनों का विकास किया है। प्राचीन काल में जहाँ ताली बजाकर, ढोल बजाकर,

आग जलाकर या फिर अन्य तरह से संदेश पहुँचाया जाता था, वहीं मध्यकाल में तेज दौड़ने वाले व्यक्तियों और कबूतरों के द्वारा संदेश भेजे जाते थे। परंतु ये सभी साधन सार्वजनिक नहीं थे तथा बड़े समूहों को इसके द्वारा संदेश देना सम्भव नहीं हो पाता था । साथ ही इसमें समय भी अधिक क लगता था । इसलिए, आधुनिक काल में संचार के ऐसे साधनों की आवश्यकता पड़ी जो शीघ्र और दूर दूर के स्थानों तक बड़े समूहों तक संदेश पहुँचा सके । इसी आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए आधुनिक समय में संचार के कई साधन विकसित किए गए । ऐसे भी साधन विकसित किए जा चुके हैं जिसके द्वारा बड़े जनसमूह को एक साथ संदेश भेजना अब संभव हो गया है ।

॥ संचार : एक कहानी ॥

16 जून की रात्रि पटना में रहने वाले शुभम को वैशाली जिला के शेखोपुर गाँव में रहनेवाली अपनी मम्मी को जन्मदिन की शुभकामना संदेश देने की याद आई । उसके पास कई सुविधाएँ उपलब्ध थीं । एक तो वह कंप्यूटर के जरिए ई मेल द्वारा संदेश भेज सकता था, या फिर टेलीफोन के द्वारा बातचीत कर संदेश दे सकता था । बिजली आपूर्ति बाधित होने के कारण शुभम के लिए ई–मेल द्वारा संदेश भेजना संभव नहीं था । वह पत्र लिखकर भी तुरंत समय पर संदेश नहीं भेज सकता था । टेलीग्राम के द्वारा संदेश भेजने में समय लग जाता तथा गाँव में घर के निकट फैक्स की सुविधा भी उपलब्ध नहीं थी । ऐसी स्थिति में शुभम ने तुरंत टेलीफोन के द्वारा अपनी मम्मी से बातचीत की और उन्हें जन्मदिन की शुभकामनाएँ दी । इस कहानी से यह पता चलता है कि संदेश भेजने और प्राप्त करने का सबसे सुलभ और सुगम साधन टेलीफोन/मोबाइल फोन है ।

वर्तमान समय में संचार साधनों का महत्त्व इतना बढ़ गया है कि इसके द्वारा घरेलू एवं राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय व्यापार के अंतर्गत सामानों एवं सेवाओं को मँगाना एवं भेजना आसान हो गया है। इसी तरह, बाढ़, तूफान, आतंकी गतिविधियों से संबंधित अद्यतन जानकारियाँ लोगों तक पहुँचाने एवं उन्हें इसके प्रति जागरूक अथवा सचेत करने में संचार के साधनों का उल्लेखनीय योगदान हो गया है। संक्षेप में, यह कहा जा सकता है कि वर्तमान युग संचार सुविधाओं का युग है। पुस्तकें भी संचार का एक बढ़िया माध्यम हैं।

भारत में संचार सुविधा :

भारत में संचार के प्राय: सभी साधन अथवा सुविधाएँ उपलब्ध हैं। सर्वप्रथम 1837 ई० में देश में डाक सेवा प्रारंभ हुई थी। यह ईस्ट इंडिया कम्पनी की देन थी। 1854 ई० में भारतीय डाक विभाग की स्थापना हुई जिसने उत्तरोत्तर अपनी सेवा में प्रगति की है। आज भारतीय डाक सेवा न केवल कंप्यूटरीकृत हो चुकी है बल्कि कृत्रिम उपग्रहों से भी जुड़ चुकी है। डाक विभाग ने अपने पत्र वितरण कार्य में तेजी और सुधार लाने के लिए पूरे देश को 8 डाक क्षेत्रों में बाँटा है। 6 अंक वाले इस अंक में पहला अंक जोन के लिए, बाद के दो अंक उपजोन के लिए तथा अंतिम तीन अंक गंतव्य डाकघर के लिए निर्धारित किए गए हैं। इन्हें 'पिनकोड' कहा जाता है। बिहार और झारखंड पिनकोड संख्या-8 में शामिल हैं।

क्या आप जानते हैं ?

- शहरों में टेलीफोन सेवा द्वारा राशन के सामान, पढ़ाने के लिए शिक्षक, घरेलू गैस सिलिंडर एवं चिकित्सक इत्यादि घर तक मँगाने एवं बुलाने की सुविधा उपलब्ध है।
- इंटरनेट के द्वारा टेलीफोन बिल, बिजली बिल, कर भुगतान, ऋण भुगतान की सुविधाएँ उपलब्ध हैं।

डाक विभाग अपनी सेवा में सुधार करते हुए तथा डाक वितरण में तेजी लाने के लिए छ: डाक चैनल की सुविधाएँ दे रहा है। इन्हें राजधानी चैनल, मेट्रो चैनल, ग्रीन चैनल, पत्रिका या दस्तावेज चैनल, भारी चैनल एवं व्यापार चैनल कहा जाता है।

विभिन्न डाक चैनल

1. राजधानी चैनल : नई दिल्ली से 6 विशेष राज्यों की राजधानियों के लिए यह डाक सेवा है। जिसके लिए पीले रंग की पत्र-पेटियाँ प्रयोग में लाई जाती हैं। अर्थात् डाकघर स्थित पीले रंग की पत्र-पेटी में पत्र डालने पर वह लिफाफा या पत्र सीधे नई दिल्ली पहुँच जाएगी। फिर उसका वितरण होगा।

2. मैट्रो चैनल : बेंगलुरू, कोलकाता, चेन्नई, दिल्ली, मुंबई एवं हैदराबाद के लिए यह डाक सेवा है। इन स्थानों के लिए अंकित पिनकोड वाले डाक पत्रों को नीले रंग वाली पत्र पेटियों में डालना चाहिए।

3. ग्रीन चैनल : स्थानीय पिनकोड अंकित डाक पत्रों को हरे रंग वाली पत्र-पेटी में डाला जाता है।

4. दस्तावेज चैनल : समाचार पत्रों एवं विभिन्न पत्रिकाओं को भेजने के लिए यह डाक सेवा है।

5. भारी चैनल : यह डाक सेवा बड़े व्यावसायिक संगठनों के डाक पत्रों के लिए उपलब्ध है।

6. व्यापार चैनल : यह डाक सेवा छोटे व्यापारिक संगठनों के डाक पत्रों के लिए उपलब्ध है।

डाक विभाग द्वारा आजकल न केवल पत्र-पत्रिकाओं के वितरण का काम किया जा रहा है बल्कि इसकी सेवा में विविधीकरण भी आया है। डाक विभाग वर्तमान समय में स्पीड पोस्ट, मीडिया पोस्ट, सेटेलाइट पोस्ट, एक्सप्रेस पोस्ट, डाटा पोस्ट, ग्रीटिंग पोस्ट, ई-पोस्ट, बिल पोस्ट के अलावा द्रुत डाक सेवा एवं बैंक तथा जीवन बीमा संबंधी कार्य भी करने लगा है। देश में औसतन एक डाकघर 21.16 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र और 6623 लोगों को अपनी सेवा प्रदान कर रहा है।

डाक सेवा के बाद संचार का सबसे प्रचलित साधन दूर संचार माध्यम है। इसके अंतर्गत विभिन्न प्रकार की टेलीफोन सेवाएँ शामिल हैं। देश में लगभग 26 करोड़ वायरलेस फोन उपभोक्ता हैं। मोबाइल फोन सर्वाधिक प्रचलित सेवा है। कई निजी कंपनियों द्वारा इस क्षेत्र में सेवाएँ दी जा रही हैं। इसके अतिरिक्त एस०टी०डी० की सेवा भी शहरों एवं ग्रामीण क्षेत्रों में उपलब्ध है। सरकार ने इस दिशा में उल्लेखनीय प्रयास किए हैं। दूर संचार तंत्र के संदर्भ में भारत एशिया में अग्रणी एवं विश्व के 10 बड़े देशों में स्थान रखता है।

जनसंचार की दृष्टि से रेडियो एक सशक्त माध्यम माना जाता है। भारत में रेडियो का प्रसारण 1923 ई० में 'रेडियो क्लब ऑफ बॉम्बे' द्वारा शुरू किया गया। 1930 ई० में इंडियन

ब्राडकास्टिंग सिस्टम तथा 1936 में इसका नाम 'आल इंडिया रेडियो' रखा गया। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद 1957 ई० से इसका नाम 'आकाशवाणी' कर दिया गया। वर्तमान समय में यह साधन 'प्रसार भारती' के तहत कार्य कर रहा है। सरकारी सेवा के अलावा कई निजी कंपनियाँ भी रेडियो सेवाएँ उपलब्ध करा रही हैं।

जनसंचार का वर्तमान समय में सबसे प्रचलित एवं लोकप्रिय साधन टेलीविजन है। भारत में इसकी सेवा 1959 ई० से आरंभ हुई। 1976 ई० में इसे दूरदर्शन (डीडी) नाम दिया गया। रंगीन प्रसारण की शुरूआत 1982 ई० में एशियाई खेलों के दौरान हुई। रेडियो की तरह इस क्षेत्र में भी कई निजी कंपनियाँ अपनी विशिष्ट सेवाएँ दे रही हैं। यह संचार माध्यम बच्चों, प्रौढ़, बूढ़ों एवं महिलाओं सहित गरीब एवं अमीर सभी वर्गों में लोकप्रिय है। सही मायने में यह देश का एक प्रमुख जनसंचार माध्यम है।

समाचार पत्र एवं पत्रिकाएँ भी सुदृढ़ संचार माध्यम है। देश में लगभग 65 हजार पत्र/पत्रिकाएँ (2007) छपती हैं। इनमें सर्वाधिक हिन्दी भाषा में लगभग 25000 समाचार पत्र एवं पत्रिकाएँ छपती हैं। इसके बाद अंग्रेजी, उर्दू, बंगाली एवं गुजराती भाषाओं का स्थान आता है।

परिवहन एवं संचार साधनों तथा आर्थिक गतिविधियों के विकास के मध्य सकारात्मक संबंध है। परिवहन की महत्ता का वर्णन प्राचीन भारतीय धर्मग्रंथों में भी मिलता है। इनकी महत्ता आज भी विद्यमान है परंतु इसके रूप, गुण एवं गति में अवश्य ही परिवर्तन आया है।

परिवहन एवं संचार के साधन प्रादेशिक विकास के साथ साथ आम जनजीवन को भी प्रभावित करते हैं। पंचायत स्तर से लेकर राष्ट्रीय स्तर तक समाज में शांति का माहौल बनाए रखने में पुलिस तथा सैनिकों के आने जाने तथा बातचीत करने के लिए ये साधन जरूरी हैं। परन्तु इनके विकास का स्तर संस्कृति के स्तर से निर्धारित होता है। भारत जैसे विशाल भौगोलिक आकार एवं विविध संस्कृतियों वाले देश में परिवहन एवं संचार के विभिन्न साधन एक-दूसरे को जोड़ने का कार्य करते हैं। यही नहीं, संचार के साधन सामाजिक-सांस्कृतिक स्तर को ऊँचा उठाने में भी योगदान देते हैं। भारत का पाकिस्तान, नेपाल एवं बांग्ला देश के साथ परिवहन संपर्क दो देशों के बीच की सामाजिक-सांस्कृतिक विकास का सूचक है।

परिवहन एवं संचार साधनों के बिना किसी भी प्रकार की आर्थिक क्रिया लगभग असंभव है। ये साधन हमारे जैविक पक्ष को भी प्रभावित करते है। जन्म से लेकर मृत्यु तक हमारा जीवन इन्हीं साधनों पर आश्रित होता है। जीवन जीने के लिए अनाज एवं शाक-सब्जी तथा फलों की आपूर्ति में इन्हीं साधनों का सहारा लेना पड़ता है।

अंतराष्ट्रीय व्यापार :

आपने अपने गाँव/शहर के बाजारों में दो व्यक्तियों के बीच सामानों के क्रय-विक्रय को होते अवश्य ही देखा होगा। दो व्यक्तियों, राज्यों अथवा देशों के बीच होने वाले सामानों एवं सेवाओं के क्रय विक्रय को ही 'व्यापार' कहा जाता है। जब यह व्यापार दो या दो से अधिक देशों के मध्य होता है तब उसे अंतर्राष्ट्रीय व्यापार कहा जाता है। यह अंतर्राष्ट्रीय व्यापार किसी राष्ट्र की आर्थिक संपन्नता का मापक होता है, परंतु यह व्यापार भी पूरी तरह से परिवहन एवं संचार के साधनों पर निर्भर करता है। इन साधनों के विकास से व्यापार के रूप एवं गति में परिवर्तन आ चुका है। व्यापार के अंतर्गत आयात-निर्यात एवं व्यापार संतुलन का अध्ययन किया जाता है।

क्या आप जानते हैं?

- जब कोई सामान दूसरे या बाहरी देशों से अपने देश में मँगाया जाता है, तब इसे आयात कहते हैं।
- जब कोई सामान अपने देश से दूसरे या बाहरी देशों को भेजा जाता है, तब इसे निर्यात कहा जाता है।

वर्तमान समय में विश्व के सभी देश अंतर्राष्ट्रीय व्यापार पर निर्भर कर रहे हैं। यह व्यापार कई कारणों से होता है, परंतु इसका सर्वप्रमुख कारण संसाधनों की क्षेत्रीय उपलब्धता या वितरण की असमानता का होना है, जबकि जरूरत सभी देशों को होती है। आयात और निर्यात का अंतर व्यापार संतुलन को निर्धारित करता है। जब निर्यात की तुलना में आयात अधिक होता है, तब इसे प्रतिकूल व्यापार संतुलन कहा जाता है। दूसरी ओर, जब आयात की तुलना में निर्यात अधिक होता है तब इसे अनुकूल व्यापार संतुलन कहा जाता है।

भारत का अंतर्राष्ट्रीय व्यापार

स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद देश में औद्योगिक एवं सामाजिक-आर्थिक विकास तेजी से हुआ है। ऐसी स्थिति में भारत विश्व के सभी भौगोलिक प्रदेशों एवं व्यापारिक खंडों के साथ व्यापारिक संबंध बनाए हुए है। यही नहीं, देश की आर्थिक प्रगति के साथ व्यापार भी लगातार बढ़ता जा रहा है। भारत का अंतर्राष्ट्रीय व्यापार 1950-51 ई० में 1214 करोड़ रुपये का था जो 1990-91 ई० में 75751 करोड़ रुपए एवं 2007-08 ई० में बढ़कर 1605022 करोड़ रुपए का हो गया।

भारत का विदेशी व्यापार

करोड़ रुपये में

वर्ष	निर्यात	आयात	व्यापार घाटा / घाटा
1991-92	44042	47851	−3809
2001-02	209018	245200	−36182
2005-06	456483	635013	−178530
2006-07	571779	840506	−268727
2007-08 (अस्थायी)	640172	964172	−324678

यद्यपि देश के कुल व्यापार में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है परंतु निर्यात की अपेक्षा आयात बढ़ता जा रहा है। फलतः देश का अंतर्राष्ट्रीय व्यापार प्रतिकूल व्यापार संतुलन का द्योतक बन गया है। यानि व्यापार घाटा वर्ष प्रति वर्ष बढ़ता ही जा रहा है। वास्तव में, पेट्रोलियम के मूल्य में लगातार वृद्धि होने के कारण आयात खर्च में वृद्धि इस घाटे के लिए जिम्मेदार है।

वर्ष 2006-07 और 2007-08 के दौरान भारत के कुल निर्यात का 51.54% निर्यात एशिया और ओशियाना को हुआ। इसके बाद यूरोप (22.99%) और अमेरिका (17.04%) का

स्थान रहा। उसी अवधि में भारत का आयात भी एशिया और ओशियाना से सर्वाधिक (65.52%) रहा, इसके बाद यूरोप (19.97%) और अमेरिका (9.05%) का स्थान रहा।

भारत से निर्यात की जानेवाली वस्तुओं में इंजीनियरी सामान, पेट्रोलियम उत्पाद, रत्न और आभूषण, रसायन एवं संबद्ध उत्पाद, वस्त्र, कृषि एवं संबद्ध उत्पाद, अयस्क एवं खनिज तथा अन्य सामान शामिल हैं, जबकि आयात की जानेवाली वस्तुओं में पेट्रोलियम एवं संबंधित उत्पाद, मशीनरी, इलेक्ट्रॉनिक सामान, सोना और चाँदी, उर्वरक, रसायन, अलौह धातुएँ एवं अन्य सामान शामिल हैं।

सरकार निर्यात संवर्द्धन के लिए लगातार प्रयासरत है। साथ ही निर्यात निष्पादन कार्य की सतत निगरानी भी कर रही है तथा निर्यात की नीतियाँ भी बना रही है। 31 अगस्त 2004 को विदेश व्यापार नीति 2004-09 की घोषणा इसी दृष्टि से की गई थी ताकि पाँच वर्षों में विश्व व्यापार में भारत का हिस्सा दो गुना हो सके।

भारत एशिया का पहला देश है जिसने निर्यात संवर्द्धन में निर्यात संसाधन क्षेत्र की महत्ता को पहचाना है। कांडला में एशिया का पहला निर्यात संवर्द्धन क्षेत्र स्थापित किया गया। इसके बाद सात और ऐसे क्षेत्र स्थापित किए गए। निर्यात संवर्द्धन क्षेत्र की खामियों को दूर करते हुए अप्रैल 2000 में विशेष आर्थिक क्षेत्र नीति की घोषणा की गई। विशेष आर्थिक क्षेत्र नियम 10 फरवरी 2006 से प्रभावी हो गया है। कांडला और सूरत (गुजरात) सांताक्रुज (महाराष्ट्र), चेन्नई (तमिलनाडु), कोच्चि (केरल), फाल्टा (प० बंगाल), विशाखापट्टनम (आंध्र प्रदेश) और नोएडा (उत्तर प्रदेश) स्थित सभी आठ निर्यात संवर्द्धन क्षेत्रों को विशेष आर्थिक क्षेत्र में बदल दिया गया है। विशेष आर्थिक क्षेत्रों से प्राप्त लाभ इस बात के सबूत हैं कि निवेश, रोजगार निर्यात और संरचनात्मक विकास में अतिरिक्त वृद्धि हुई है।

वर्तमान समय में भारत अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर साफ्टवेयर महाशक्ति के रूप में उभर रहा है। परिणामस्वरूप, सूचना प्रौद्योगिकी के व्यापार से भी भारत अत्यधिक विदेशी मुद्रा अर्जित कर रहा है।

अभ्यास

वस्तुनिष्ठ प्रश्न :

1. स्वतंत्रता प्राप्ति के समय देश में सड़कों की कुल लंबाई कितनी थी?

(क) 2.42 लाख कि॰मी॰ (ख) 1.46 लाख कि॰मी॰

(ग) 3.88 लाख कि॰मी॰ (घ) 5.78 लाख कि॰मी॰

2. पक्की सड़कों की लंबाई की दृष्टि से प्रथम स्थान पर कौन राज्य है ?

(क) बिहार (ख) महाराष्ट्र

(ग) तमिलनाडु (घ) केरल

3. निम्नलिखित में से कौन सड़कों का एक वर्ग नहीं है?

(क) पूरब-पश्चिम गलियारा (ख) एक्सप्रेस वे

(ग) स्वर्णिम त्रिभुज राजमार्ग (घ) सीमांत सड़कें

4. भारत के किन शहरों में मेट्रो रेल सेवा उपलब्ध है?

(क) कोलकाता एवं दिल्ली (ख) दिल्ली एवं मुंबई

(ग) कोलकाता एवं चेन्नई (घ) दिल्ली एवं बेंगलुरू

5. किस वर्ष इंडियन एयरलाइंस को 'इंडियन' नाम दिया गया?

(क) 2006 (ख) 2003

(ग) 2008 (घ) 2005

6. भारतीय अंतर्देशीय जलमार्ग प्राधिकरण का गठन किस वर्ष किया गया था?

(क) 1986 (ख) 1988

(ग) 1985 (घ) 1989

7. इन्नौर पत्तन किस राज्य में स्थित है?

(क) गुजरात (ख) गोवा

(ग) तमिलनाडु (घ) कर्नाटक

8. भारत को कुल कितने डाक क्षेत्रों में बाँटा गया है?
   (क) 7 (ख) 5
   (ग) 6 (घ) 8
9. देश में कितने विशेष आर्थिक क्षेत्र विकसित हैं?
   (क) 10 (ख) 7
   (ग) 15 (घ) 5
10. फाल्टा विशेष आर्थिक क्षेत्र कहाँ स्थित है?
   (क) बिहार (ख) प० बंगाल
   (ग) केरल (घ) उड़ीसा

लघु उत्तरीय प्रश्न :

1. भारत में सड़कों के प्रादेशिक वितरण का वर्णन प्रस्तुत कीजिए।
2. भारतीय रेल परिवहन की प्रमुख विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।
3. भारत के विभिन्न डाक चैनल का संक्षेप में विवरण दीजिए।
4. भारत की निर्यात एवं आयात वाली वस्तुओं का उल्लेख कीजिए।
5. भारत के प्रमुख राष्ट्रीय जलमार्गों के बारे में लिखिए।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न :

1. भारत के अंतर्राष्ट्रीय व्यापार की विशेषताओं का वर्णन कीजिए।
2. भारत में पाए जानेवाले विभिन्न प्रकार की सड़कों का विस्तृत विवरण दीजिए।
3. भारतीय अर्थव्यवस्था में परिवहन एवं संचार साधनों की महत्ता को स्पष्ट कीजिए।
4. भारत में पाइपलाइन परिवहन का वर्णन कीजिए।

मानचित्र कार्य :

भारत के मानचित्र पर निम्नलिखित को प्रदर्शित कीजिए :

1. पूरब-पश्चिम गलियारा दो सीमांत नगरों के साथ।
2. पूर्वी तट पर स्थित तीन प्रमुख बंदरगाह।

3. पूर्व-मध्य, पूर्व रेलवे एवं पूर्वोत्तर सीमांत रेलवे का मुख्यालय शहर।

4. भारत के पाँच प्रमुख अंतर्राष्ट्रीय हवाई अड्डे।

परियोजना कार्य

1. भारत के 16 रेल क्षेत्रों के मुख्यालय शहरों के नाम मानचित्र पर अंकित कीजिए।

क्रियाकलाप :

1. विद्यालय से अपने घर तक (सड़क) की दूरी ज्ञात कीजिए।
2. अपने क्षेत्र की पक्की एवं कच्ची सड़कों की लंबाई ज्ञात कीजिए।
3. पूरब-पश्चिम एवं उत्तर दक्षिण गलियारा पर स्थित महत्त्वपूर्ण शहरों की सूची तैयार कीजिए।
4. देश के पाँच प्रमुख राष्ट्रीय स्तर एवं पाँच क्षेत्रीय स्तर के समाचार पत्रों के नामों की सूची तैयार कीजिए।

इकाई – 5

बिहार : कृषि एवं वन संसाधन

कृषि एवं वन संसाधन (Agriculture & Forest Resources) :

बिहार एक कृषि प्रधान राज्य है, यहाँ की 80 प्रतिशत आबादी कृषि पर निर्भर है। झारखंड के अलग हो जाने के बाद, बिहार के लोगों के लिए कृषि का महत्व अधिक बढ़ गया है। 1990-91 में यहाँ 48.88 प्रतिशत भूमि पर कृषि की जाती थी। 2005-06 में बढ़ कर 59.37 प्रतिशत हो गया।

यहाँ चार फसलें-भदई, अगहनी, रबी एवं गरमा लगाई जाती हैं।

भदई (Autumn) - इसकी शुरूआत मई जून से होती है और अगस्त-सितम्बर में कटाई कर ली जाती है। भदई धान, ज्वार, बाजरा, मकई के अतिरिक्त जूट और सब्जी की खेती इस समय में की जाती है।

> **क्या आप जानते हैं ?**
> - बिहार में गहन खेती (Intensive farming) की जाती है।
> - अगहनी फसल को खरीफ फसल भी कहा जाता है।

अगहनी (Winter) - यह बिहार की सबसे महत्वपूर्ण फसल है, आधी से अधिक कृषिगत भूमि पर अगहनी फसल लगाई जाती है। यह फसल मध्य जून से अगस्त तक लगाई जाती है और नवम्बर-दिसम्बर में काट ली जाती है। धान, ज्वार, बाजरा, अरहर, गन्ना इस फसल की मुख्य पैदावार है, इनमें अरहर और गन्ना सालभर में तैयार होता है।

रबी (Spring) - इस फसल को अक्टूबर-नवम्बर के मध्य में लगाया जाता है और अप्रैल में काट लिया जाता है। गेहूँ, जौ, दलहन, तेलहन इस फसल की खास उपज है।

गरमा (Summer) - इस फसल को गर्मी के मौसम में उन क्षेत्रों में लगाया जाता है जहाँ सिंचाई की समुचित व्यवस्था है, या फिर निम्न भूमि में जहाँ स्थानीय जल-स्रोतों से मिट्टी गीली रहती है, इस फसल में गरमा, धान और ग्रीष्मकालीन सब्जियाँ उगाई जाती हैं।

बिहार की प्रमुख फसलों में धान, गेहूँ मकई, जौ, गन्ना (ईख) तम्बाकू, महुआ, ज्वार दलहन, और तेलहन हैं । इसके अतिरिक्त सब्जियों, फल, फूल, की भी खेती बड़े पैमाने पर की जाती है । मानचित्र 5.1 में बिहार के कृषि प्रदेशों को दिखाया गया है । कृषि प्रदेश फसलों के समूह को दर्शाता है । इस मानचित्र से स्पष्ट है कि बिहार मूलतः खाद्य फसलों का उत्पादक राज्य है ।

खाद्यान्न फसलें (Food Crops) :

धान (Paddy) बिहार की खाद्यान्न फसलों में महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है । भदई, अगहनी तथा गरमा, अर्थात् तीन फसलें लगाई जाती हैं और इसकी खेती राज्य के सभी भागों में होती है। 2006-07 में यहाँ 33.54 लाख हेक्टेयर भूमि पर, लगभग 50 लाख टन धान का उत्पादन दर्ज किया गया है ।

उत्तरी तथा पूर्वी भागों में भदई धान की खेती की जाती है, जबकि अगहनी धान की खेती पूरे राज्य में की जाती है ।

धान का सबसे अधिक उत्पादन, पश्चिमी चम्पारण, रोहतास तथा औरंगाबाद में होता है, इन तीन जिलों में बिहार का 18 प्रतिशत से अधिक धान का उत्पादन होता है । पहले स्थान पर पश्चिमी चम्पारण है जबकि रोहतास और औरंगाबाद का क्रमशः द्वितीय और तृतीय स्थान है । अगर क्षेत्रफल की दृष्टिकोण से देखा जाए तो रोहतास (5.76 प्रतिशत) अव्वल है ।

गेहूँ (Wheat) : द्यान्न फसलों में धान के बाद गेहूँ दूसरा महत्त्वपूर्ण फसल है, यह रबी फसल का मुख्य उत्पादन है । 2006-07 में कुल 20.5 लाख हेक्टेयर में लगभग 43 लाख टन गेहूँ का उत्पादन हुआ । विगत कई वर्षों से गेहूँ के उत्पादन और क्षेत्र में लगातार वृद्धि हुई है, इसका मुख्य कारण अब धान की कटाई के बाद खेत बेकार परती के रूप में नहीं रह पाता है, सिंचाई और रासायनिक उर्वरकों के बल पर इसकी खेती की जाती है । इस फसल की बोआई नवम्बर-दिसम्बर में की जाती है और मार्च-अप्रैल में काट लिया जाता है । 2006-07 में गेहूँ के उत्पादन में रोहतास जिला प्रथम रहा, इस जिले में इस वर्ष 4 लाख मीट्रिक टन (136 हजार हेक्टेयर) क्षेत्र में उत्पादन हुआ और उत्पादकता 2965.3 कि० ग्रा० प्रति हेक्टेयर था ।

मक्का (Maize) : बिहार का यह तीसरा मुख्य खाद्यान्न फसल है, यह भदई, अगहनी, रबी एवं गरमा चारों फसलों में पैदा होता है । सिंचाई की व्यवस्था एवं उत्तम बीजों के उपयोग से इसके उत्पादन में काफी वृद्धि हुई है। इसका कुल उत्पादन 2006-07 में 798.31 हजार मैट्रिक टन है और सबसे अधिक उत्पादन खगड़िया जिला में होता है, जबकि दूसरे एवं तीसरे स्थान पर क्रमशः समस्तीपुर एवं बेगूसराय है।

मोटे अनाज (Cereal Crops) : मोटे अनाजों में मड़ुआ, मिलेट, ज्वार और बाजरा को सम्मिलित किया जाता है । इसकी खेती 2006-07 में 46.71 हजार हेक्टेयर में हुई और कुल उत्पादन 45.07 हजार मैट्रिक टन हुआ। मधुबनी जिला मोटे अनाज के उत्पादन में प्रथम स्थान रखता है दूसरे स्थान पर किशनगंज है।

तेलहन (Oil Seeds) : राई, सरसों, तीसी, सूरजमुखी, कुसुम, रेड़ी, तिल, मूँगफली मुख्य रूप से तेलहन फसलें हैं, किन्तु तेल निकालने के लिए मुख्य रूप से सरसों, राई, तीसी एवं

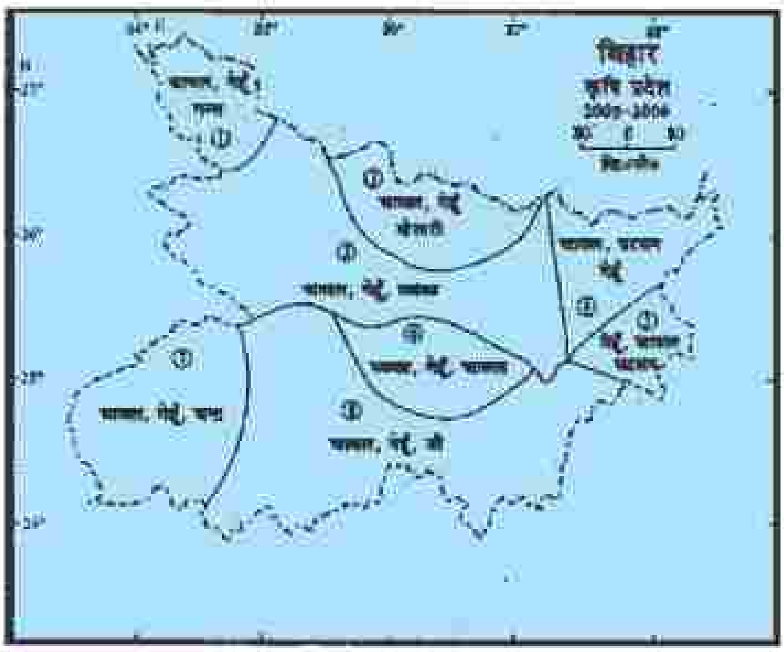

चित्र-5.1 : बिहार : प्रमुख फसलों का क्षेत्र

सूरजमुखी का उपयोग होता है। 2006-07 में 140.60 हजार हेक्टेयर भूमि पर तेलहन की खेती की गई तथा कुल उत्पादन 149 हजार मीट्रिक टन था। तिलहन उत्पादन में सबसे आगे पश्चिम चम्पारण है, इसके बाद बेगूसराय, पूर्णिया एवं सहरसा का स्थान आता है।

क्या आप जानते हैं ?
तेलहन की दो फसलें हैं एक है रबी जिसमें राई, सरसों, तीसी, सूरजमुखी कुसुम और रेड़ी को तथा दूसरी खरीफ है जिसमें तिल, सूरजमुखी और मुँगफली की खेती की जाती है।

दलहन (Pulses) : बिहार के दलहन फसलों में चना, मसूर, खेसारी, मटर, मूँग, अरहर, उरद, तथा कुरथी प्रमुख हैं। इनमें चना, मसूर, खेसारी, मटर एवं गरमा मूँग रबी दलहन की फसलें हैं, जबकि अरहर और मूँग खरीफ दलहन की फसलें हैं। 2006-07 ई० में बिहार में रबी दलहन की खेती 519.6 हजार हेक्टेयर भूमि में की गई और कुल पैदावार 372 हजार मीट्रिक टन था। इसी प्रकार खरीफ दलहन की खेती 87.26 हजार हेक्टेयर क्षेत्र में किया गया और कुल उत्पादन 74 हजार मीट्रिक टन था। दलहन उत्पादन में पटना जिला का स्थान सबसे आगे है, जबकि औरंगाबाद और कैमूर जिले क्रमशः दूसरे और तीसरे स्थान पर है।

व्यावसायिक फसलें (Commercial Crops) :

गन्ना (Sugarcane) : हमारे राज्य में गन्ना की खेती के लिए सभी अनुकूल भौगोलिक परिस्थितियाँ विद्यमान हैं, फिर भी यहाँ गन्ना का प्रति हेक्टेयर उत्पादन बहुत कम है, यहाँ के उत्तरी पश्चिमी भाग में इसकी खेती प्रमुखता से होती है। गण्डक, बागमती, कमला तथा घाघरा नदियों का दोआब प्रमुख उत्पादक क्षेत्र है, 2006-07 में 117 हजार हेक्टेयर भूमि पर गन्ना की खेती की गई और उत्पादन 5338 हजार मीट्रिक टन हुआ। विगत कई वर्षों से गन्ना के उत्पादन में वृद्धि हो रही है किन्तु 2005-06 की तुलना में 2006-07 में क्षेत्रफल और उत्पादन दोनों में वृद्धि दर्ज की गई है। 2005-06 में 101 हजार हेक्टेयर भूमि पर गन्ने की खेती की गई और कुल उत्पादन 42.40 हजार मीट्रिक टन था। गन्ने के उत्पादन में पश्चिमी चम्पारण पहले स्थान पर है जबकि दूसरे और तीसरे स्थान पर क्रमशः गोपालगंज और पूर्वी चम्पारण जिले हैं।

जूट (Jute) : जूट का उत्पादन बिहार के उत्तर-पूर्वी जिलों में होता है, क्योंकि यह अधिक वर्षा वाला क्षेत्र है, जो कि जूट उत्पादन के लिए उपयुक्त है। सम्पूर्ण देश का आठ प्रतिशत

जूट उत्पादन बिहार में होता है, और पश्चिम बंगाल और असम के बाद, बिहार का तीसरा स्थान है। 2006-07 में 1.45 लाख हेक्टेयर पर यहाँ लगभग 14 लाख गाँठ जूट का उत्पादन हुआ था किन्तु अब इसके उत्पादन में तेजी से गिरावट हो रही है । पूर्णिया, कटिहार, मधेपुरा, किशनगंज, सहरसा, मधुबनी, दरभंगा और समस्तीपुर, जिलों में जूट का उत्पादन मुख्य रूप से होता है ।

तम्बाकू (Tobbaco) : तम्बाकू उत्पादन में बिहार का भारत में छठा स्थान है, इसकी खेती के लिए गंगा का दियारा क्षेत्र सबसे उपयुक्त है । समस्तीपुर और वैशाली जिले इसके लिए प्रसिद्ध हैं । इसके अतिरिक्त दरभंगा, पटना, भागलपुर, मुंगेर और मुजफ्फरपुर जिलों में भी इसकी खेती होती है । तम्बाकू की खेती इन जिलों में 140 हेक्टेयर हजार क्षेत्र में 16140 हजार मीट्रिक टन तम्बाकू उत्पन्न होता है ।

सब्जियाँ, फल एवं मसाले (Vegetable, Spices and Fruits) :

बिहार में सब्जियों के अन्तर्गत आलू, प्याज, भिन्डी, परोर, लौकी, पालक, लाल साग, लूबिया, फूलगोभी, पटल, पत्तागोभी आदि की खेती की जाती हैं । इनमें आलू सबसे प्रमुख सब्जी ही नहीं बल्कि एक महत्त्वपूर्ण खाद्य पदार्थ भी है । इसकी खेती बिहार के लगभग सभी जिलों में होती है । कुछ जिलों में इसकी खेती दो-दो फसलों में होती है, बिहार में आलू का कुल उत्पादन 5,66000 मीट्रिक टन है और 168000 हेक्टेयर भूमि पर इसकी खेती की जाती है, पटना एवं नालन्दा आलू पैदावार में अग्रणी हैं ।

प्याज की खेती भी मुख्य रूप से पटना एवं नालन्दा जिले में की जाती है। नवादा, गया और जहानाबाद, में भी प्याज की खेती बड़े स्तर पर की जाती है । यहाँ प्याज का कुल उत्पादन 3,55,000 मीट्रिक टन है । अन्य सब्जियों की खेती बड़े पैमाने पर गंगा, गंडक एवं बागमती के दियारा क्षेत्र में होती है । पटना और उसके आस-पास में बड़े भू-भाग पर अनेक प्रकार की सब्जियाँ पैदा की जाती हैं।

मिर्च (Chilli) : मिर्च की खेती दियारा क्षेत्र में गंगा के दोनों किनारे पर वृहत् पैमाने पर की जाती है । बिहार में अन्य मसालों जैसे–हल्दी, अदरक, धनियां, सौंफ एवं लहसुन की भी खेती की जाती है ।

मौसमी फलों में आम, लीची, अमरूद, केला, पपीता, सिंघाड़ा एवं मखाने बिहार में उत्पन्न किए जाते हैं । आम के लिए भागलपुर, मुजफ्फरपुर, पूर्णिया, दरभंगा जिले प्रसिद्ध हैं । लीची के लिए मुजफ्फरपुर और वैशाली को ख्याति प्राप्त है । वैशाली, खगड़िया, बेगूसराय, समस्तीपुर में बड़े पैमाने पर केले के बागान विकसित हैं । मखाने के लिए मधुबनी एवं दरभंगा जिला प्रसिद्ध है। गंगा के दियारा क्षेत्र में खीरा, ककड़ी और तरबूजा की खेती की जाती है ।

कृषि की समस्याएँ (Problems of Agricultures) :

बिहार की 90 प्रतिशत आबादी देहातों में रहती है और 80 प्रतिशत जनसंख्या कृषि पर आश्रित है, इसके बावजूद यहाँ का प्रति हेक्टेयर उत्पादन अन्य राज्यों की अपेक्षा कम है, यह राज्य कृषि सम्बंधी अनेक समस्याओं से जूझ रहा है ।

(i) **feV~Vh dVko ,oa xq.koÙkk** बाढ़ के कारण मिट्टी का कटाव होता है, साथ ही वर्षों से लगातार रासायनिक खादों के उपयोग से भी मिट्टी का ह्रास हो रहा है ।

(ii) **?kfV;k chtksa dk** बीज का उपयोग नहीं होने के कारण प्रति एकड़ उपज अन्य राज्यों की अपेक्षा कम है ।

(iii) **[ksrksa dk NksVk vkdkj** हमारे राज्य में खेतों का आकार छोटा है जिसके कारण वैज्ञानिक पद्धति से खेती सम्भव नहीं हो पाती है।

(iii) **fdlkuksa esa :f<+okfnrk&** यहाँ के किसान परिश्रम पर कम, भाग्य और रूढ़िवादिता पर अधिक भरोसा करते हैं ।

क्या आप जानते हैं ?

- बिहार का भौगोलिक क्षेत्रफल 93.6 लाख हेक्टेयर है जिसमें 64 लाख हेक्टेयर बाढ़ ग्रस्त क्षेत्र है ।
- बिहार का कुल भौगोलिक क्षेत्र 59.36 प्रतिशत ही केवल बुआई क्षेत्र में आता है और 40 प्रतिशत से अधिक कृषि क्षेत्र अनुपयोगी रह जाता है ।
- बिहार में 9.41 लाख हेक्टेयर भूमि जल जमाव ग्रस्त है, इसमें 8.35 लाख हेक्टेयर भूमि उत्तर बिहार में है और शेष 1.06 लाख हेक्टेयर मोकामा टाल में है ।
- बिहार देश का तीसरा बड़ा सब्जी उत्पादक राज्य है ।
- बिहार देश का सबसे बड़ा अमरूद एवं लीची उत्पादक राज्य है ।

(v) **flapkbZ dh leL;k&** यहाँ की कृषि मॉनसून पर निर्भर है, बाढ़ और सुखाड़ यहाँ की नियति है, फिर भी सिंचाई की समुचित व्यवस्था नहीं है । यहाँ सकल की गई भूमि के मात्र 46 प्रतिशत पर ही सिंचाई हो पाती है, शेष भाग सिंचाई से वंचित रह जाता है ।

(vi) **ck<+&** यहाँ की अधिकतर नदियाँ विनाशकारी बाढ़ के लिए प्रसिद्ध हैं। हिमालय से निकलने वाली नदियाँ अपने साथ भारी मात्रा में सिल्ट जमा करती हैं, तलो सिल्ट के जमाव के कारण नदियाँ अपना मार्ग बदल देती हैं , जिसके कारण भयंकर बाढ़ आता है और बड़े पैमाने पर जान माल की क्षति होती है । योजना आयोग के अनुसार बिहार में 64 लाख हेक्टेयर भूमि बाढ़ग्रस्त है। बाढ़ ग्रसित क्षेत्रों में नदियों द्वारा मार्ग बदलने से नदी मार्ग से बाहर निकली हुई भूमि पर आधिपत्य को लेकर बाहुबलियों और नक्सलियों का आतंक दियारा प्रदेश की एक बड़ी समस्या बन गयी है। इसी वर्ष (2006) के अक्टूबर में खगड़िया जिला में इस प्रकार के भूमि विवाद के कारण भयंकर नरसंहार हुआ है।

इन सभी समस्याओं के अतिरिक्त, पूँजी का अभाव, पशुओं की दयनीय दशा, जनसंख्या, आर्थिक एवं सामाजिक समस्याएँ भी कृषि के विकास में बाधक हैं ।

Ñf"k dSysaMj (Agricultural Calendar) :

मध्य जून में भारी वर्षा के बाद खेत में हल चलाया जाता है। जुलाई में खरीफ की बुआई होती है। अगस्त में धान के पौधे को प्रतिरूपित (Transplant) किया जाता है, सितम्बर में खरीफ फसल तैयार हो जाता है, सितम्बर में खेत को रबी फसल के लिए तैयार किया जाता है जनवरी में रबी फसल की निकोनी की जाती है और मार्च अप्रैल में काट लिया जाता है इसके बाद गन्ने की खेती में लोग लग जाते हैं।

ty lalk/u (Water Resources) :

बिहार में जल का विशाल भण्डार है, जो इन दो प्रधान स्रोतों से प्राप्त होता है

(i) **/jkryh; ty %** इसमें नदियाँ, जलाशय, तालाब आते हैं।

(ii) **Hkwfexr ty %** इसमें कुआँ, झरने, नलकूप, हैंडपम्प आदि सम्मिलित हैं।

बिहार में जल संसाधन का उपयोग मुख्य रूप से सिंचाई, गृह एवं औद्योगिक संस्थानों में होता है। लेकिन वर्तमान में 95 प्रतिशत से अधिक जल संसाधन का टपयोग सिंचाई में होता है। मॉनसून से वर्षा की अवधि मात्र चार महीने की होती है। इसके अलावा अनियमित और असमान वर्षा भी होती है। यहाँ कुछ फसलें शीत ऋतु में होती हैं और यह मौसम शुष्क रहता है, गन्ना, आलू, प्याज आदि की खेती में समय पर पानी देने की अवश्यकता होती है। बढ़ती जनसंख्या के लिए अन्नोत्पादन बढ़ाने के लिए भी सिंचाई की आवश्यकता है। बिहार में सिंचाई के मुख्य साधनों में नहर, कुआँ, नलकूप तालाब, आहर, पईन है।

नहर :

बिहार में सिंचाई के लिए नहर प्रमुख साधन है। यहाँ कुल सिंचित भूमि का 40.63 प्रतिशत भाग नहरों द्वारा सिंचित होता है। मैदानी भागों में नहरों का विकास अधिक हुआ है,

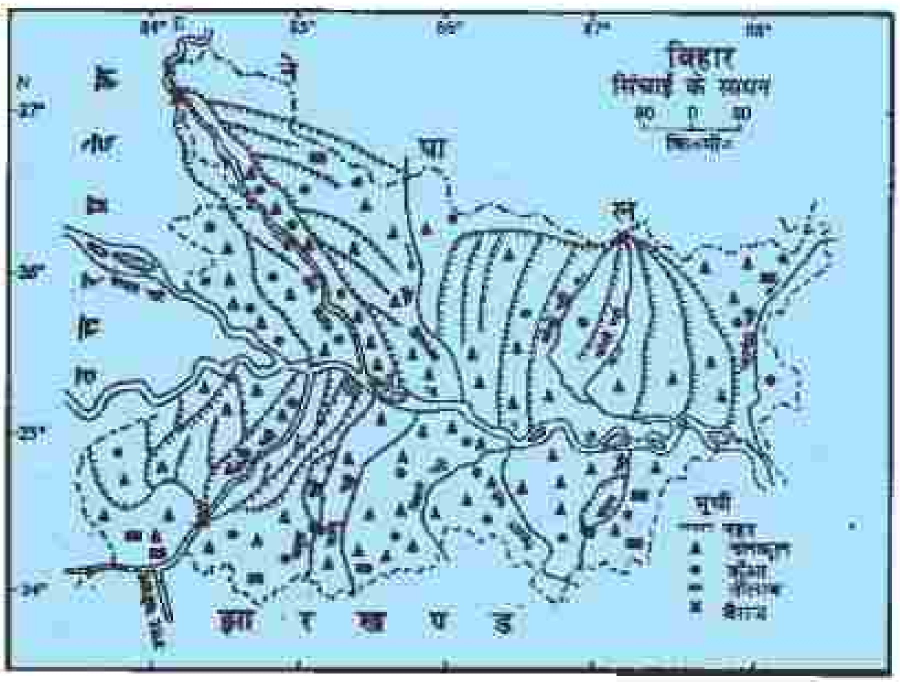

चित्र-5.2 : बिहार : सिंचाई के मुख्य साधन

क्योंकि यहाँ पर समतल भूमि, मुलायम मिट्टी, विस्तृत कृषि क्षेत्र तथा सततवाहिनी नदियों द्वारा जल की आपूर्ति होती है । उत्तरी बिहार की अधिकतर नदियाँ हिमालय से निकलने के कारण सततवाहिनी हैं । यहाँ की नहरों में वर्ष भर जल रहता है, इसके विपरीत दक्षिण गंगा के मैदान की नहरें छोटानागपुर पठार से निकलने के कारण बरसाती हैं। इनमें वर्ष भर जल नहीं रहता। इस भाग में नदियों पर बाँध बनाकर जल इकट्ठा कर लिया जाता है और आवश्यकतानुसार खेतों तक पानी पहुँचाया जाता है ।

बिहार में कुछ नहरों का विकास आजादी के पूर्व और कुछ का आजादी के पश्चात हुआ है।

आजादी के पूर्व की नहरें :

सोन नहर : यह सोन सिंचाई परियोजना का एक भाग है, यह बिहार का पहला आधुनिक सिंचाई परियोजना है, इसे 1874 में डिहरी पर निर्मित किया गया, इससे दो नहरें निकाली गईं । पूर्वी पश्चिमी सोन नहरें, इन नहरों के द्वारा भोजपुर, रोहतास, औरंगाबाद, गया, जहानाबाद और पटना के सूखाग्रस्त क्षेत्र की 4 लाख हेक्टेयर भूमि की सिंचाई की जाती है ।

सारण नहर : गोपालगंज प्रखंड में 1880 में इस नहर का निर्माण हुआ था ।

ढाका नहर : ढाका अनुमण्डल में ललबकिया नदी पर यह एक छोटा नहर है जिसकी कुल लम्बाई 30 कि० मी० है और इसके द्वारा 4500 हेक्टेयर भूमि सिंचित होती है।

त्रिवेणी नहर : इसका निर्माण 1903 में पश्चिमी चम्पारण में भारत-नेपाल सीमा पर गण्डक नदी त्रिवेणी नामक स्थान के निकट हुआ, इसकी कुल लम्बाई 1,094 किमी है और पश्चिमी चम्पारण जिले की लगभग 1.25 लाख हेक्टेयर भूमि की सिंचाई होती है ।

आजादी के बाद की नहरें :

कोसी नहर : कोसी नदी पर भारत-नेपाल सीमा पर हनुमान नगर के पास बाँध बना कर दो नहरें निकाली गई हैं—पूर्वी कोसी किनारे पर पूर्वी कोसी नहर और पश्चिमी किनारे पर पश्चिमी कोसी नहर।

पूर्वी कोसी नहर की कुल लम्बाई 44 किमी है और इस मुख्य नहर की चार शाखाएँ हैं- मुरलीगंज नहर, जानकी नहर, पूर्णिया नहर एवं अररिया नहर । इस प्रकार इस नहर की शाखाओं

और उप शाखाओं सहित इसकी कुल लम्बाई 3040 किमी है, इसके द्वारा पूर्णिया, सहरसा एवं मधेपुरा जिलों की लगभग 6 लाख हेक्टेयर भूमि की सिंचाई की जाती है।

पश्चिमी कोसी नहर 115 किमी लम्बी है। इसमें दरभंगा जिला की लगभग 3 लाख भूमि की सिंचाई की जाती है।

गण्डक नहर : गण्डक नदी पर त्रिवेणी नामक स्थान से 85 किमी दक्षिण वाल्मीकि नगर के पास एक 743 किमी० लम्बा और 760 मी० ऊँचा बाँध बनाया गया था। इस बाँध से पश्चिम की ओर तिरहुत नहर और पूर्व की ओर सारण नहर निकाली गई है। तिरहुत नहर से सारण जिले की लगभग 4.8 लाख हेक्टेयर भूमि सिंचित की जाती है और सारण नहर से चम्पारण, मुजफ्फरपुर और दरभंगा जिले की लगभग 6.9 हेक्टेयर भूमि सिंचित की जाती है।

नलकूप : सिंचाई के लिए नहर के बाद दूसरा प्रमुख साधन नलकूप है। आजादी के पूर्व बिहार में नलकूपों की व्यवस्था नहीं के बराबर थी, किन्तु आजादी के पश्चात् नलकूपों की व्यवस्था बहुत तेजी से होने लगी और अब इसके द्वारा कुल सिंचित भूमि का 38.77 प्रतिशत भाग की सिंचाई की जाती है। नलकूपों द्वारा सिंचाई समस्तीपुर एवं सीतामढ़ी जिलों में होती है।

कुआँ : बिहार राज्य में कुँऐं का उपयोग प्राचीन काल से ही होता रहा है, किन्तु अब इसका प्रचलन बहुत ही कम हो गया है। अब इसके स्थान पर पम्पसेटों का प्रयोग होने लगा है, कुओं से सिंचाई का काम केवल 2 प्रतिशत तक रह गया है, फिर भी कुछ मैदानी भागों में सिंचाई के लिए कुँए का प्रतिशत अधिक है। इनमें दरभंगा, मधुबनी और पश्चिमी चम्पारण जिले प्रमुख है। दक्षिण के मैदानी भागों में उत्तर के मैदानी भाग से कुँऐं से सिंचाई का काम अधिक होता है। इनमें नवादा, नालन्दा, गया और जहानाबाद जिले प्रमुख हैं। इन जिलों में जल की सतह ऊपर होने के कारण कुओं का निर्माण आसानी से होता है।

तालाब : तालाबों द्वारा सिंचाई करना और अन्य कार्य में उपयोग करना हमारे यहाँ की पुरानी पद्धति है, जिस गाँव अथवा नगर में नदी नहीं होती है वहाँ पूजा पाठ और अन्य धार्मिक संस्कार भी तालाबों के किनारे होता है, बिहार का पावन पर्व छठ का अर्घ्य अर्पण भी तालाबों के किनारे किया जाता है। बिहार में दो प्रकार के तालाबों की सुविधा बाढ़ग्रस्त क्षेत्रों में मिलती है, जबकि कृत्रिम तालाबों की सुविधा मैदानी भागों में अधिक है। इस भाग में मुलायम मिट्टी के

कारण जमीन खोदकर तालाब बनाना आसान होता है। यहाँ तालाबों में मछली पालन और मखाने की खेती की जाती है।

भारत में 9 प्रतिशत कृषि योग्य भूमि की सिंचाई तालाबों द्वारा किया जाता है। किन्तु बिहार में तालाबों द्वारा सिंचाई कुल 2.10 प्रतिशत रह गया है। तालाबों द्वारा सिंचाई में मधुबनी जिले का स्थान प्रथम है, जहाँ इससे 17 हजार हेक्टेयर भूमि सिंचित होती है, दूसरे स्थान पर नालन्दा है, यहाँ 12 हजार हेक्टेयर से अधिक भूमि सिंचित होती है।

क्या आप जानते है ?

छठ मुख्य रूप से बिहार एवं पूर्वी उत्तर प्रदेश का एक आंचालिक पर्व है, यह बहुत ही पावन पर्व है और अब यह भारत के बहुत सारे क्षेत्रों में मनाया जाता है, यह वर्ष में दो बार सम्पन्न होता है एक शारदीय और दूसरा चैती छठ कहलाता है, जो क्रमशः कार्तिक षष्टी एवं चैत षष्टी में आयोजित होता है, इस पर्व में पानी में डूब कर भगवान भास्कर को अर्घ्य अर्पित किया जाता है।

अन्य साधन :

सिंचाई के अन्य साधनों में, पईन, अहर, झील, पोखर, कृत्रिम झील, ढेकू और मोट आदि हैं। इनमें पईन और अहर प्रमुख हैं। पईन का प्रयोग ऐसे क्षेत्रों में होता है जहाँ पानी की कमी है। इनमें, रोहतास, गया, जहानाबाद, नवादा, नालन्दा, पटना जिले प्रमुख हैं।

नदीघाटी योजनाएँ (River Valley Project) :

अपार जल संसाधन के उपयोग के लिए एवं बाढ़ की विभीषिका, सूखे की प्रचण्डता को देखते हुए बिहार में बहुउद्देशीय नदी घाटी योजनाओं का विकास किया गया है जिससे जल-विद्युत, उत्पादन, सिंचाई, मछली पालन, पेयजल, औद्योगिक उपयोग, मनोरंजन एवं यातायात का विकास हो सके। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए कई परियोजनाएँ बनाई गई हैं। इनमें तीन प्रमुख हैं–

1. सोन नदी घाटी परियोजना
2. गण्डक नदी घाटी परियोजना
3. कोसी नदी घाटी परियोजना

अन्य परियोजनाएँ हैं–

1. दुर्गावती जलाशय परियोजना
2. चन्दन बहुआ परियोजना
3. बागमती परियोजना
4. बरनार जलाशय परियोजना

1. सोन नदी घाटी परियोजना :

यह परियोजना बिहार की सबसे पुरानी और पहली नदी घाटी परियोजना है इसका विकास अंग्रेज सरकार ने 1874 में सिंचाई के लिए किया था । इससे डेहरी के पास से पूरब एवं पश्चिम की ओर नहरें निकाली गई है । इसकी कुल लम्बाई 130 किमी थी । इस नहर से पटना एवं गया जिले की कई नहरों की शाखाएं और उपशाखाएँ विकसित की गईं जिससे औरंगाबाद, भोजपुर, बक्सर, रोहतास जिलों की भूमि सिंचाई की जाती है और अब कुल 4.5 लाख हेक्टेयर भूमि की सिंचाई की जाती है । इस परियोजना से सूखा प्रभावित क्षेत्र को सिंचाई की सुविधा प्राप्त होने से बिहार का दक्षिणी पश्चिमी क्षेत्र का प्रति हेक्टेयर उत्पादन काफी बढ़ गया और चावल की अधिक खेती होने लगी है। इस कारण से इस क्षेत्र को बिहार का "चावल का कटोरा" (Rice Bowl of Bihar) कहते हैं ।

इस बहुद्देशीय परियोजना के अन्तर्गत जल विद्युत उत्पादन के लिए शक्ति-गृहों की स्थापना की गई है, पश्चिमी नहर पर डेहरी के पास 6.6 मेगावाट उत्पादन क्षमता का शक्ति-गृह स्थापित है। इसी प्रकार पूर्वी नहर शाखा पर बारूण नामक स्थान पर 3.3 मेगावाट क्षमता का शक्ति-गृह निर्माण किया गया है । इस परियोजना के नवीनीकरण पर विचार किया जा रहा है । सोन नदी पर इन्द्रपुरी के पास एक बाँध के निर्माण का प्रस्ताव भी है और 450 मेगावाट पनबिजली उत्पादन का लक्ष्य है ।

2. गण्डक नदी घाटी परियोजना :

उत्तर प्रदेश और बिहार की यह एक संयुक्त परियोजना है जो कि भारत और नेपाल के सहयोग से वाल्मीकिनगर के पास शुरू किया गया है । इस परियोजना द्वारा बिजली सिंचाई तथा जल की आपूर्ति नेपाल को भी की जाती है । इस परियोजना के निर्माण के लिए भैंसालोटन नामक स्थान

पर नदी के आर-पार 743 मीटर लम्बा अवरोधक बाँध बनाकर बाल्मीकि जलाशय का निर्माण किया गया है । इस जलाशय से दो मुख्य नहरें निकाली गई हैं, पश्चिमी प्रमुख नहर और पूर्वी प्रमुख नहर । इस नहर प्रणाली द्वारा बिहार के तीन पश्चिमी जिलों गोपालगंज, सारण, और सिवान में लगभग 4 लाख हेक्टेयर भूमि में सिंचाई की जाती है । बाल्मीकि के पूर्वी भाग में पूर्वी मुख्य नहर निकाली गई है, इसे तिरहुत नहर भी कहा जाता है, यह गण्डक नदी के समानान्तर है, इसकी कई उपशाखाएँ हैं, इन नहरों द्वारा पश्चिमी चम्पारण, पूर्वी चम्पारण, मुजफ्फरपुर, वैशाली तथा समस्तीपुर जिले की लगभग 5-4 लाख हेक्टेयर भूमि की सिंचाई की जाती है ।

इस परियोजना द्वारा बाल्मीकि नगर से थोड़ा पूरब हटकर ऊपर से गिरते हुए जल से जल विद्युत केन्द्र स्थापित किया गया है, इससे नेपाल को विद्युत आपूर्ति की जाती है ।

3. कोसी नदी घाटी परियोजना :

इस परियोजना की कल्पना 1896 ई० में किया गया था किन्तु वास्तविक रूप से 1955 ई० में कार्य प्रारम्भ हुआ ।

यह परियोजना नेपाल सरकार, भारत सरकार तथा बिहार राज्य की सामूहिक प्रयास का फल है । इसका मुख्य उद्देश्य नदी के बदलते मार्ग को रोकना है। उपजाऊ भूमि की बर्बादी पर नियन्त्रण, भयानक बाढ़ से क्षति पर रोक, जल से सिंचाई का विकास, जल विद्युत उत्पादन, मत्स्य पालन, नौका रोहण एवं पर्यावरण पर नियंत्रण आदि है । इस परियोजना को कई चरणों में पूरा किया गया है पहले चरण में मार्ग परिवर्तन पर नियंत्रण, बिहार-नेपाल सीमा पर स्थित हनुमाननगर स्थान पर बैराज का निर्माण, बाढ़ नियंत्रण के लिए दोनों ओर तटबंध का निर्माण, पूर्वी एवं पश्चिमी कोसी नहर एवं उसकी शाखाओं का निर्माण सम्मिलित किया गया । इसी क्रम में नदी के दोनों ओर 240 किमी० लम्बे बाढ़ नियंत्रण बाँध का निर्माण हुआ ।

पूर्वी नहर तथा इसकी चार प्रमुख सहायक नहरों द्वारा लगभग 14 लाख एकड़ भूमि में सिंचाई की योजना बनाई गई थी । इससे पूर्णिया, सहरसा, मधेपुरा, और अररिया जिलों में सिंचाई होती है। पूर्वी नहर को और भी विस्तृत किया गया है । इसकी एक शाखा राजपुर नहर निकाली गई है । पश्चिमी नहर से कई उप नहरें निकली हैं, पश्चिमी नहर का लगभग 35 किमी का क्षेत्र नेपाल में पड़ता है और शेष भाग मधुबनी एवं दरभंगा जिलों में पड़ता है । कोसी बैराज 12,161.30 मीटर लम्बा है जो कि 1963 में बनकर तैयार हुआ था ।

दूसरे चरण में इस परियोजना द्वारा जब विद्युत संबंधी कार्य सम्पन्न हुए और पूर्वी कोसी नहर पर शक्ति गृह 20,000 किलोवाट क्षमता वाला एक जल विद्युत शक्ति गृह निर्माणाधीन है।

दुर्गावती जलाशय परियोजना- इस परियोजना का मुख्य उद्देश्य कैमूर एवं रोहतास जिले के सूखाग्रस्त क्षेत्रों को सिंचित करना एवं बाढ़ नियंत्रण है। दुर्गावती नदी में कुद्र के पास 1962 में 17,325 हेक्टेयर भूमि की सिंचाई के लक्ष्य से बाँध का निर्माण किया गया किन्तु पर्याप्त सफलता नहीं मिलने के कारण चेनारी के प्रखण्ड में करमचाट के पास इसी नदी पर 45.72 मीटर ऊँचा बाँध बनाने की योजना है जिससे 36,000 हजार हेक्टेयर भूमि की सिंचाई की जा सकेगी।

ऊपरी किऊल जलाशय परियोजना- यह एक बहुउद्देश्यीय परियोजना है, इसका निर्माण किऊल नदी के ऊपरी भाग में हुआ है। इससे मुंगेर तथा लक्खीसराय जिलों के 14000 हेक्टेयर भूमि में सिंचाई करने की योजना है । इसका मुख्य उद्देश्य सिंचाई, बाढ़ नियंत्रण और पर्यावरण सम्वर्द्धन है ।

बागमती परियोजना- यह परियोजना बागमती नदी पर सीतामढ़ी जिला में स्थित है, नदी के निचले भाग में रामनगर के समीप एक बाँध बनाया गया है । यह भी एक बहुउद्देश्यीय परियोजना है। इसका उद्देश्य सिंचाई, बाढ़ नियंत्रण, नदी कटाव रोकना, जल निकास तथा पर्यावरण सम्वर्द्धन है। इसके द्वारा पूर्वी चम्पारण, सीतामढ़ी, शिवहर, मुजफ्फरपुर जिले की 1,19,800 हेक्टेयर भूमि पर सिंचाई की जा सकती है ।

बरनार जलाशय परियोजना- इस परियोजना द्वारा बरनार नदी पर पक्का बाँध बनाकर जमुई जिले के सूखा प्रभावित क्षेत्रों में 22,400 हेक्टेयर भूमि पर सिंचाई का काम हो सकेगा ।

वन संसाधन (Forest Resources) :

बिहार विभाजन के बाद अधिकतर वनाच्छादित क्षेत्र झारखंड में चला गया है । वर्तमान बिहार में 76.87 प्रतिशत भौगोलिक क्षेत्र में ही वन है और प्रति व्यक्ति वन भूमि का औसत मात्र 0.05 हेक्टेयर है जो राष्ट्रीय औसत 0.53 हेक्टेयर से बहुत ही कम है ।

बिहार के वनों को दो वर्गों में रखा जा सकता है।

(i) आर्द्र पतझड़ वन, एवं (ii) शुष्क पतझड़ वन ।

(i) vknZ ir>M+ ou (Moist Deciduous Forestइस प्रकार के वन दक्षिण पहाड़ी क्षेत्र एवं उत्तर पश्चिमी भाग में पाए जाते हैं । सुमेश्वर-दून (शिवालिक क्षेत्र) में 917 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में इस वन का विस्तार है । इस प्रकार के वनों के मुख्य रूप से साल और शीशम के वृक्षों की प्रधानता है, इसके अतिरिक्त बांस, सबई घास, महुआ, जामुन, कटहल, कुसुम, केन्दु, गुल्लड़, अमलतास, गम्हार, कारंज आदि के वृक्ष भी पाए जाते हैं ।

क्या आप जानते हैं?

बिहार में कुल 6374 वर्ग कि० मी० अधिसूचित वन क्षेत्र है ।

मात्र 76 वर्ग कि० मी० में अतिसघन वन है ।

अधिसूचित क्षेत्र का लगभग 50 प्रतिशत भाग विरान अथवा विलुपित हैं ।

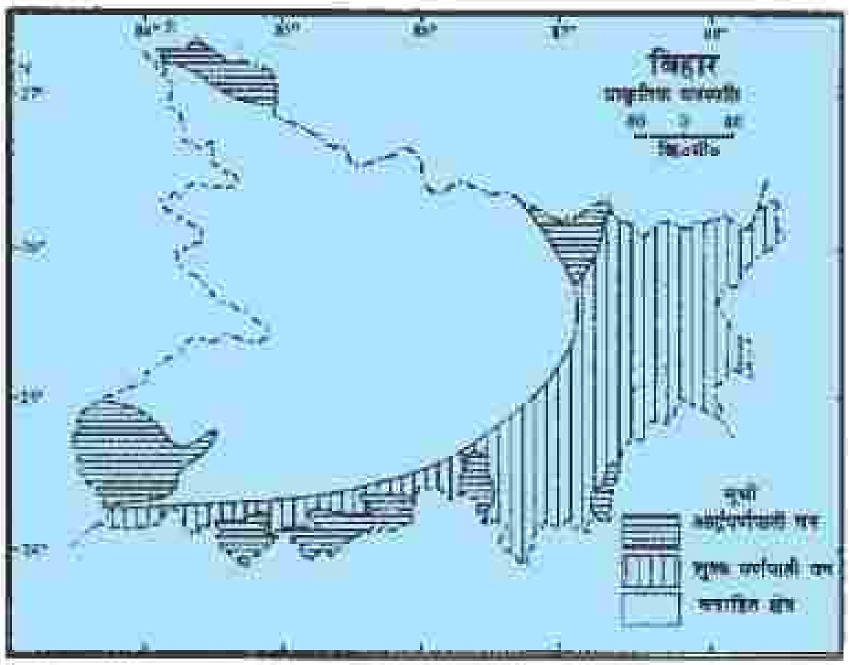

चित्र-5.3 : बिहार : प्राकृतिक वनस्पति

(ii) शुष्क पतझड़ वन (Dry Deciduous Forest) : बिहार पूर्वी मध्यवर्ती भाग तथा दक्षिण-पश्चिमी पहाड़ी भागों में इस प्रकार के वनों का विस्तार है । कैमूर और रोहतास जिले में इसका अधिक विस्तार है । यहाँ के प्रमुख वृक्ष खैर, बहेड़ा, पलास, महुआ, असलतास, शीशम, नीम, हर्रे आदि हैं।

> **क्या आप जानते हैं ?**
> आर्द्र पतझड़ वन एवं शुष्क पतझड़ वन को 125 सेन्टीमीटर वर्षा रेखा विभाजित करता है ।

बिहार में वनों का वितरण बहुत ही असमान है । मैदानी भागों एवं दियारा क्षेत्रों में तो प्राकृतिक वनों का पूर्णतः अभाव है । सीवान, सारण, भोजपुर, बक्सर, पटना, गोपालगंज, वैशाली, मुजफ्फरपुर, मोतीहारी, दरभंगा, मधुबनी, समस्तीपुर, बेगूसराय, मधेपुरा, खगड़िया, नालन्दा में एक प्रतिशत से भी कम भूमि में वन मिलते हैं । पश्चिमी चम्पारण, कैमूर, बाँका, जमुई, गया और मुंगेर जिलों के पहाड़ी भागों में वनों का विस्तार है ।

कृषि एवं निर्मित क्षेत्रों के विस्तार के कारण वनों का विनाश हो रहा है । सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि यहाँ वनों के महत्त्व से संबंधित जागरूकता नहीं है, इन कारणों से भी बिहार में वनों का तेजी से ह्रास हो रहा है । वनों के अभाव के कारण यहाँ वन्य जीवनों की भी कमी है । यहाँ के मुख्य वन्य जीवों में बाघ, चीता, हिरण, चितल, भालू, बनैले सुअर, जंगली सांढ, सांभर आदि है, पक्षी में मोर और जल-जीव में घड़ियाल, सोस, मगर प्रमुख हैं । ये जल-जीव यहाँ की नदियों में पाये जाते हैं । वनों की अंधाधुंध कटाई और वन्य पशुओं पक्षियों के शिकार के कारण भी वन्य जीवों की संख्या तेजी से घटती जा रही है ।

वनों एवं वन्य जीवों का संरक्षण (Forest And Wild Life Conservation) :

बिहार में कुल भौगोलिक क्षेत्र का मात्र 6.87 प्रतिशत भाग ही वनाच्छादित है, जबकि राष्ट्रीय नीति के अनुसार 33 प्रतिशत भाग में वनों से आच्छादित होना चाहिए । अतः वनों की कटाई पर रोक, उद्यानों का विकास, विलुप्त वन क्षेत्र को पुनर्वासित करने के साथ-साथ कृषि वानिकी को भी बल प्रदान करने का प्रयास किया जा रहा है । इन प्रयासों के फलस्वरूप विलुप्त वनों का पुनर्वासित क्षेत्रफल 2004-05 के 2849 हेक्टेयर से बढ़कर 2006-07 में 15237 हेक्टेयर हो गया है । इसके अलावा वनरोपण में भी काफी वृद्धि हुई है । यहाँ 2005-07 में 2 करोड़

से अधिक वृक्ष रोपण हुआ । कृषि वानिकी की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम बिहार सरकार द्वारा उठाया गया है, राष्ट्रीय सम विकास योजना (RSVY) के तहत समुदाय आधारित वन प्रबंध एवं संरक्षण योजना प्रारम्भ की है । इस कृषि वानिकी से न केवल राज्य की आय में वृद्धि होने बल्कि काष्ठ आधारित उद्योगों की स्थापना के लिए कच्चे माल का आधार भी उपलब्ध होगा । इन दिनों राज्य में सामाजिक वानिकी एवं व्यवसायिक वानिकी का भी प्रचलन बढ़ा है ।

क्या आप जानते हैं?

संजय गाँधी जैविक उद्यान, पटना, लगभग 980 एकड़ क्षेत्र में विकसित है और यह बिहार का एकलौता राष्ट्रीय उद्यान है।

कावर झील प्रवासी पक्षियों का प्रमुख पड़ाव है।

प्रसिद्ध पक्षी वैज्ञानिक डा० सालीम अली ने इसे "पक्षियों का स्वर्ग" कहा था।

कावर झील में 300 प्रजातियों के पक्षियों का अध्ययन एक साथ सम्भव है।

बिहार में वन एवं वन्य प्राणियों के संरक्षण के लिए आदि काल से भी कई रीति-रिवाजों का प्रचलन है । कई धार्मिक अनुष्ठान तो वृक्षों के नीचे ही किए जाते हैं । कई ऐसे आंचलिक त्योहार भी हैं जो वृक्षों से सम्बंधित हैं । इस राज्य में परम्परागत रूप से वट, पीपल, आँवला और तुलसी के पेड़ पौधों की पूजा की जाती है। हमारे यहाँ चींटी से लेकर साँप जैसे विषैले जन्तु को भोजन दिया जाता है और पूजा की जाती है । पक्षियों को भी दाने देने का प्रचलन है । साथ ही राष्ट्रीय एवं राज्य स्तर पर वन्य प्राणियों के संरक्षण के लिए कई कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं । यहाँ 14 अभ्यारण्य एवं एक राष्ट्रीय उद्यान है जिसके अन्तर्गत कुल 2064.41 हेक्टेयर भूमि है, इनमें पटना का संजय गाँधी जैविक उद्यान, बेगुसराय जिला अन्तर्गत मंझौल अनुमंडल में 2500 एकड़ पर फैला कावर झील, दरभंगा जिला में कुशेश्वर स्थान वन्य जीवों के संरक्षण के लिए प्रसिद्ध हैं ।

कुशेश्वर स्थान में पहले बड़ी संख्या में प्रवासी पक्षियों को फंसाया जाता था लेकिन जन जागरण के कारण अब यहाँ पर किसी भी प्रकार का शिकार करना पूर्णतः वर्जित हो गया है ।

वन एवं वन्य प्राणियों के संरक्षण में राज्य सरकार की कई संस्थाएँ कार्यरत हैं । इनमें वन, पर्यावरण तथा जल संसाधन विकास विभाग प्रमुख हैं, इनके अतिरिक्त इस क्षेत्र में कई स्वयंसेवी संस्थाएँ भी काम कर रही हैं । इनमें प्रयास, तरुमित्र, प्रत्युष और भागलपुर में मंदार नेचर क्लब (Mandar Nature Club) प्रमुख है।

अभ्यास

वस्तु निष्ठ प्रश्न :

1. बिहार में कितने प्रतिशत क्षेत्र में खेती की जाती है?

   (क) 50 (ख) 60

   (ग) 80 (घ) 36.5

2. राज्य की कितनी प्रतिशत जनसंख्या कृषि कार्य में लगी हुई है ?

   (क) 80 (ख) 75

   (ग) 65 (घ) 86

3. इनमें से कौन गन्ना उत्पादक जिला नहीं है ?

   (क) दरभंगा (ख) पश्चिमी चम्पारण

   (ग) मुजफ्फरपुर (घ) रोहतास

4. बिहार के जूट उत्पादन में

   (क) वृद्धि हो रही है (ख) गिरावट हो रहा है

   (ग) स्थिर है (घ) इनमें कोई नहीं

5. तम्बाकू उत्पादन क्षेत्र है–

   (क) गंगा का उत्तरी मैदान (ख) गंगा का दक्षिणी मैदान

   (ग) हिमालय की तराई (घ) गंगा का दियारा

6. कोसी नदी घाटी परियोजना का आरम्भ हुआ–

   (क) 1950 में (ख) 1948 में

   (ग) 1952 में (घ) 1954 में

7. गण्डक परियोजना का निर्माण किस स्थान पर हुआ ?

   (क) बेतिया (ख) बाल्मीकिनगर

   (ग) मोतीहारी (ग) छपरा

8. बिहार में नहरों द्वारा सर्वाधिक सिंचाई किस जिले में होती है ?

(क) रोहतास (ख) सीवान

(ग) गया (घ) पश्चिमी चम्पारण

9. बिहार में कुल कितने अधिसूचित क्षेत्र में वन का विस्तार है ?

(क) 6374 किमी० (ख) 6370 किमी०

(ग) 6380 किमी० (घ) 6350 किमी०

10. कुशेश्वर स्थान किस जिला में स्थित है ?

(क) वैशाली में (ख) दरभंगा में

(ग) बेगूसराय में (घ) भागलपुर में

11. काँवर झील स्थित है-

(क) दरभंगा जिला में (ख) भागलपुर जिला में

(ग) बेगूसराय जिला में (घ) मुजफ्फरपुर जिला में ।

12. संजय गाँधी जैविक उद्यान किस नगर में स्थित है ?

(क) राजगीर (ख) बोधगया

(ग) बिहारशरीफ (घ) पटना ।

लघु उत्तरीय प्रश्न :

13. बिहार में धान की फसल के लिए उपयुक्त भौगोलिक दशाओं का उल्लेख करें ।
14. बिहार में दलहन के उत्पादन एवं वितरण का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत कीजिए ।
15. कृषि बिहार की अर्थ-व्यवस्था की रीढ़ है-इस कथन की व्याख्या कीजिए ।
16. नदी घाटी परियोजनाओं के मुख्य उद्देश्यों को लिखें ।
17. बिहार के नहरों के विकास से सम्बन्धित समस्याओं को लिखिए ।
18. बिहार के किस भाग में सिंचाई की आवश्यकता है और क्यों ?

19. बिहार में वनों के अभाव के चार कारणों को लिखिए ।

20. संक्षेप में शुष्क पतझड़वन की चर्चा कीजिए ।

21. बिहार में ऐसे जिलों का नाम लिखिए जहाँ वन विस्तार एक प्रतिशत से भी कम है ।

22. बिहार में स्थित राष्ट्रीय उद्यान एवं अभ्यारण्यों की संख्या बताएँ और दो अभ्यारण्यों की चर्चा करें ।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न :

23. बिहार की कृषि की समस्याओं पर विस्तार से चर्चा कीजिए।

24. बिहार में कौन-कौन सी फसलें लगाई जाती हैं? किसी एक फसल के मुख्य उत्पादनों की व्याख्या कीजिए।

25. बिहार की मुख्य नदी घाटी परियोजनाओं का नाम बताएँ एवं सोन अथवा कोसी परियोजना के महत्त्व पर प्रकाश डालें।

26. बिहार में वन्य जीवों के संरक्षण पर विस्तार से चर्चा करें।

क्रियाकलाप :

बिहार की नहरों की सूची तैयार करें और यह अंकित करें कि वे किस नदी से निकाली गयी हैं।

वन एवं वन्य प्राणी संरक्षण के संदर्भ में कोई स्थानीय गीत अथवा कहानी लिखें ।

खनिज एवं उर्जा संसाधन
(Minerals and Energy Resources)

खनिज सम्पदा की उपलब्धता किसी भी क्षेत्र के आर्थिक विकास का सूचक होता है। बिहार विभाजन के बाद खनिज सम्पन्न क्षेत्र झारखंड में चला गया और बिहार राज्य खनिज सम्पदा से लगभग खाली हो गया है। अब यहाँ देश के खनिज संसाधन का भण्डार एक प्रतिशत से भी कम है, चूना पत्थर और पाइराईट ही दो ऐसे खनिज हैं जो यहाँ पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हैं इसके अतिरिक्त बॉक्साइट, क्वार्टजाइट, फेल्सपार मैग्नेटाइट आदि थोड़ी बहुत मात्रा में संचित हैं। 2005-06 में खनिज सम्पदा से बिहार को 96.38 करोड़ रु० का राजस्व प्राप्त हुआ था। बिहार के खनिजों को निम्नांकित वर्गों में रखा जा सकता है।

(i) धात्विक खनिज (Metallic Minerals) : इसके अंतर्गत बॉक्साइट मैग्नेटाइट और सोना अयस्क आते हैं। बॉक्साइट का भंडार बिहार में 1.5 हजार मीट्रिक टन है, यह गया, जमुई और बाँका जिले में मिलता है। मैग्नेटाईट पत्थर का कुल भण्डार 0.59 हजार मीट्रिक टन है, यह बिहार के पहाड़ी क्षेत्र में मिलता है। सोना अयस्क यहाँ बहुत अल्प मात्रा में दक्षिणी बिहार की नदियों के बालू के रेत के साथ मिलता है, जिसमें सोना धातु की मात्रा 0.1 से 0.6 ग्राम प्रति टन प्राप्त है, सोना अयस्क का कुल भंडार 128.88 मीट्रिक टन है, बिहार में इसका वाणिज्यिक उत्पादन नहीं होता है।

> **क्या आप जानते हैं ?**
> **मस्कोव्हाइट (Muscovite) बहुत ही उच्च कोटि का अभ्रक होता है इसे बंगाल रूबी (Bengal Rubiy) के नाम से भी जाना जाता है, यह लाल तांबे के रंग का होता है और इसकी परतें बहुत मोटी होती हैं, 15 से 30 सेंटीमीटर लम्बी और 8–10 सेंटीमीटर चौड़ी होती है।**
> **अभ्रक मुख्य रूप से तीन प्रकार का होता है, मस्कोव्हाईट, फ्लोगोफाइट (Phlogopite) एवं बायोटाइट (Biotite)।**

(ii) अधात्विक खनिज (Non Metallic Minerals) : चूना पत्थर, अभ्रक, डोलोमाइट, सिलिका सैंड, पाइराइट, क्वार्टज, फेल्सपार, चीनी मिट्टी, स्लेट एवं शोरा जैसी अधात्विक खनिज भी यहाँ मिलते हैं, बिहार में चूना पत्थर का कुल भंडार 210.85 हजार मीट्रिक टन है, यह मुख्य रूप

से कैमूर एवं रोहतास में मिलता है, इसका वार्षिक उत्पादन 260 लाख टन है, और इसका उपयोग मुख्य रूप से सीमेंट उद्योगों में कच्चे माल के रूप में होता है । इसे घरेलू उपयोग में भी लाया जाता है ।

अभ्रक का कुल भण्डार 60.35 हजार मीट्रिक टन है, और यह झारखण्ड से संलग्न क्षेत्रों में पाया जाता है, नवादा, जमुई और बाँका जिलों में इसका भंडार है । बिहार में मस्कोव्हाइट अभ्रक पाया जाता है ।

क्या आप जानते हैं ?

अमझोर पहाड़ी (रोहतास) के पाईराईट से 40 प्रतिशत गंधक (sulpher) मिलता है ।

सिन्दरी उर्वरक उद्योग के लिए पाईराईट रोहतास एवं कैमूर के खदानों से जाता है ।

अमझोर पहाड़ी में पाईराईट का जमाव 125 किमी में है ।

कैमूर और रोहतास जिलों में डोलोमाइट का भण्डार है, इसका कुल संचित भंडार बिहार में 180 हजार टन है । सिलिका सैंड मुख्य रूप से मुंगेर जिलों से प्राप्त होता है । इसका कुल भण्डार 5.25 हजार मीट्रिक टन पाईराईट है। इसके लिए रोहतास का अमझोर पहाड़ी प्रसिद्ध है दूसरा केन्द्र कैमूर जिला है, बिहार में पाईराईट भण्डार 98.79 हजार मीट्रिक टन है और अब यह बिहार का सबसे महत्वपूर्ण खनिज है ।

गया, नवादा, मुंगेर, एवं बाँका जिलों में क्वार्टज की खानें हैं, यह एक कीमती पत्थरों में से एक है । बिहार में इसका कुल भंडार 10.83 हजार मीट्रिक टन है । बिहार में कुछ मात्रा में फेल्सपार (लगभग 5 हजार मीट्रिक टन) उपलब्ध है, यह भी एक कीमती पत्थर है जो कि दक्षिण जिलों से प्राप्त होता है । चीनी मिट्टी का भंडार भागलपुर, मुंगेर एवं बाँका जिले में है, इसका कुल उत्पादन 1.2 लाख मीट्रिक टन है । लखीसराय, मुंगेर और भागलपुर जिलों में स्लेट के सम्भावित भंडार हैं इसका कुल भंडार 4 लाख घन मीटर से कुछ अधिक है । सारण, पूर्वी चम्पारण, पश्चिमी चम्पारण, मुजफ्फरपुर, पटना, नालन्दा, जहानाबाद, औरंगाबाद में शोरा पर्याप्त मात्रा में मिलता है ।

परमाणु खनिज (Atomic Minerals)— ग्रेफाइट, जिसे हम ब्लैक लेड (Black Lead) या Plumbgo के नाम से भी जानते हैं, यह मुख्य रूप से Refractory उद्योग में उपयोग होता है । यह मुंगेर एवं रोहतास जिले से प्राप्त होता है ।

ईंधन खनिज–(Fuel Minerals) गंगा द्रोणी (बिहार) में खनिज तेल मिलने की सम्भावना है, तेल एवं प्राकृतिक गैस निगम (ONGC) केर्नो बहुराष्ट्रीय कम्पनी की मदद से इस ओर प्रयास चला रहा है। दरभंगा तथा चम्पारण क्षेत्रों में खोज का काम चल रहा है।

चित्र-5.4 बिहार : खनिज

इन खनिजों के अतिरिक्त, ग्रेनाइट, उच्च कोटि के बालू एवं क्लेमिट्टी का पर्याप्त भण्डार है, ग्रेनाइट का भण्डार गया, जहानाबाद, अरवल, मुंगेर, जमुई, नवादा, भागलपुर और बाँका जिले में है।

शक्ति के साधन (Sources of Energy) :

बिहार शक्ति के साधनों में से किसी भी साधन में विकसित नहीं है। इस सम्बन्ध में दूसरे पर अधिक निर्भर रहना पड़ता है। इस क्षेत्र में कुछ इकाई विकसित हैं भी तो वह परम्परागत ऊर्जा स्रोतों में तापीय विद्युत केन्द्र हैं।

परम्परागत ऊर्जा के स्रोत (Conventional Sources of Energy) :

परम्परागत ऊर्जा स्रोतों में बिहार में कई तापीय विद्युत केन्द्र हैं। इनमें कहलगाँव, कांटी और बरौनी तापीय विद्युत केन्द्र प्रमुख हैं । कहलगाँव सुपर थर्मल पावर की उत्पादन क्षमता 840 मेगावाट है, यह केन्द्र द्वारा प्रयोजित एन० टी० पी० सी० (NTPC) के अधीन कार्य करता है, भविष्य में इसकी क्षमता 1500 मेगावाट करने की योजना है ।

कांटी तापीय विद्युत केन्द्र मुजफ्फरपुर के निकट है, इसकी उत्पादन क्षमता 120 मेगावाट है और बरौनी ताप विद्युत परियोजना की स्थापना रूस के सहयोग से किया गया था, इसकी उत्पादन क्षमता 145 मेगावाट है ।

इन परियोजनाओं के अतिरिक्त कुछ प्रस्तावित तापीय परियोजनाएँ भी हैं, इनमें बाढ़ और नबीनगर तापीय विद्युत परियोजना है । बाढ़ प्रस्तावित तापीय विद्युत परियोजना की प्रस्तावित उत्पादन क्षमता 200 मेगावाट है । इसके तैयार हो जाने के बाद दक्षिणी बिहार का बिजली संकट समाप्त हो जाएगा । इस तापीय विद्युत परियोजना का निर्माण कार्य एन० टी० पी० सी० द्वारा हो रहा है। यह पटना जिला के बाढ़ अनुमण्डल में है। यहाँ काम तेजी से चल रहा है ।

क्या आप जानते हैं?

कहलगाँव सुपर थर्मल पावर बिहार की सबसे बड़ी तापीय विद्युत परियोजना है । इसकी स्थापना 1979 में की गई थी ।

बरौनी ताप विद्युत परियोजना 1970 में स्थापित हुआ ।

कहलगाँव एवं कांटी के लिए कोयला झारखण्ड के खानों से प्राप्त किया जाता है, जबकि बरौनी के लिए कच्चा माल एवं डीजल बरौनी तेल शोध क कारखाने से मिलता है ।

नबीनगर तापीय विद्युत परियोजना का निर्माण रेलवे एवं एन० टी० पी० सी० के संयुक्त प्रयास से हो रहा है । इसका प्रस्तावित उत्पादन क्षमता 1000 मेगावाट है और यह औरंगाबाद जिला में है ।

जल विद्युत (Hydro Electricity) :

बिहार में जल विद्युत परियोजना पर तेजी से काम हो रहा है, इसके विकास के लिए 1982 में बिहार राज्य जल विद्युत निगम (Bihar State Hydroelectric Power Corporation, BHPC) का गठन किया गया इसके द्वारा 2055 मेगावाट उत्पादन का लक्ष्य रखा गया है ।

डेहरी (रोहतास जिला) में स्थित पश्चिमी सोन परियोजना, बारूण (औरंगाबाद जिला) पूर्वी सोन लिंक नहर, बाल्मिकी नगर (पश्चिमी चम्पारण) तथा कटैया परियोजना (ये चारों परियोजनाएँ बी० एच० पी० सी० के अधीन संचालित हैं) जिन से मात्र 44.10 मेगावाट जल विद्युत उत्पन्न होता है जो क्रमशः 6.60,3.30,15.00 और 1.20 मेगावाट है ।

कैमूर एवं औरंगाबाद जिलों में बी० एच० पी० सी० की अधीन कई प्रस्तावित जल विद्युत परियोजनाओं पर काम चल रहा है, इसके अतिरिक्त छः निर्माणाधीन जलविद्युत परियोजनाएँ भी हैं– कलेर (अरवल) अगनूर बगहा (प०चम्पारण), ओबरा (औरंगाबाद), तेजपुर डेहरी (रोहतास) का डेलबाग, नासरीगंज (रोहतास) का नासरीगंज, नोखा (रोहतास) का जयनगर जल विद्युत परियोजनाएँ हैं।

गैर-परम्परागत ऊर्जा के स्रोत (Non-Conventional Sources of Energy) :

बिहार में गैर-परम्परागत एवं नवीकरणीय ऊर्जा की भारी सम्भावनाएँ मौजूद हैं । बहुत हद तक जल ऊर्जा बायोगैस ऊर्जा, सौर-ऊर्जा और पवन-ऊर्जा द्वारा ग्रामीण क्षेत्रों में ऊर्जा की आवश्यकता की पूर्ति हो सकती है । बिहार में नवीकरणीय ऊर्जा विकास अभिकरण (ब्रेडा) को राज्य में ऊर्जा के गैर पारंपारिक स्रोतों के जरिए दूरस्थ गाँवों के विद्युतीकरण तथा नवीकरणीय ऊर्जा कार्यक्रमों के विकास के लिए नोडल एजेंसी बनाया गया है ।

बिहार में 92 सम्भावित स्थलों की पहचान की गई है जहाँ लघु जल-विद्युत परियोजनाओं को विकसित किया जा सके, जिनकी कुल क्षमता 46.1 मेगावाट है ।

बिहार में यह उत्पादन योजना समेत बायोमास आधारित विद्युत परियोजनाओं की स्थापना के द्वारा 200 मेगावाट बिजली उत्पादन की क्षमता मौजूद है।

पवन ऊर्जा आधारित विद्युत परियोजनाओं की स्थापना उपयुक्त सम्भावित स्थलों की पहचान के लिए राज्य की नोडल एजेंसी चेन्नई के सहयोग से पवन संसाधन आकलन कार्यक्रम हाथ में लेने के प्रयास में है।

बायोगैस गाँवों में भोजन बनाने सम्बंधी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए नवीकरणीय ऊर्जा का एक महत्वपूर्ण स्रोत है। इस दिशा में प्रयास जारी है और अबतक 1.25 लाख संयंत्र स्थापित किए जा चुके हैं।

अभ्यास

वस्तुनिष्ठ प्रश्न :-

1. बिहार में खनिज तेल मिलने की संभावनाएँ हैं :-

(क) हिमालय क्षेत्र में (ख) दक्षिण बिहार के मैदान में

(ग) दक्षिण बिहार के पहाड़ी क्षेत्र में (घ) गंगा के द्रोणी में

2. चूना-पत्थर का उपयोग मुख्य रूप से किस उद्योग में होता है?

(क) सीमेंट उद्योग (ख) लोहा उद्योग

(ग) शीशा उद्योग (घ) इनमें से कोई नहीं।

3. पाइराइट खनिज है –

(क) धात्विक (ख) अधात्विक

(ग) परमाणु (घ) ईंधन

4. बिहार के सोना अयस्क से प्रतिटन शुद्ध सोना प्राप्त होता है –

(क) 05 से 06 ग्राम (ख) 0.1 से 0.6 ग्राम

(ग) 00.00 से 0.1 ग्राम (घ) 0.001 से 0.003 ग्राम

5. कहलगाँव तापीय विद्युत परियोजना किस जिला में अवस्थित है?

(क) भागलपुर (ख) मुंगेर

(ग) जमुई (घ) साहेबगंज

6. कांटी तापीय विद्युत परियोजना किस जिला में स्थापित है?

(क) पूर्णिया (ख) सीवान

(ग) मुजफ्फरपुर (घ) पूर्वी चम्पारण

7. बिहार में बी० एच० पी० सी० द्वारा वृहत् परियोजनाओं की संख्या कितनी है?

(क) 3 (ख) 10

(ग) 5 (घ) 7

8. बिहार में कार्यरत जल-विद्युत परियोजनाओं की कुल विद्युत उत्पादन क्षमता कितनी है?

(क) 35.60 मेगावाट (ख) 44.20 मेगावाट

(ग) 50.60 मेगावाट (घ) 30 मेगावाट

लघु उत्तरीय प्रश्न :

9. अभ्रक कहाँ मिलता है? इसका क्या उपयोग है?
10. बिहार में ग्रेफाइट एवं यूरेनियम के वितरण को लिखिए।
11. बिहार में तापीय विद्युत केन्द्रों का उल्लेख कीजिए।
12. सोन नदी घाटी परियोजना से उत्पादित जल विद्युत का वर्णन कीजिए।
13. बिहार में जल विद्युत विकास पर प्रकाश डालिए।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न :

14. बिहार में पाए जानेवाले खनिजों को वर्गीकृत कर किसी एक वर्ग के खनिज का वितरण एवं उपयोगिता को लिखिए।
15. बिहार के प्रमुख ऊर्जा स्रोतों का वर्णन कीजिए और किसी एक स्रोत का विस्तार से चर्चा कीजिए।

क्रियाकलाप :

गाँव या मुहल्ले में पवन ऊर्जा एवं बायोगैस का महत्त्व समझायें ।

बिहार : उद्योग एवं परिवहन

(Bihar : Industries And Transport)

अधिकतर बड़े उद्योगों का छोटानागपुर क्षेत्र में स्थित होने के कारण बिहार विभाजन के बाद वे झारखण्ड राज्य के अंग बन गये और बिहार के मानचित्र से बड़े उद्योग लगभग विलुप्त हो गये। लेकिन यहाँ औद्योगिक विकास की सम्भावनाओं की कमी नहीं है।

औद्योगिक विकास के लिए सभी अनुकूल भौगोलिक परिस्थितियाँ यहाँ वर्तमान हैं। पर आधारित उद्योग के लिए कच्चे माल निकट में पड़ोस के राज्यों में उपलब्ध है और सभी खनन क्षेत्र सुगम रेल एवं सड़क मार्गों से जुड़े हुए हैं, कृषि एवं अन्य साधनों पर उद्योगों के लिए विविध प्रकार के प्राकृतिक संसाधन और सुविधाएँ मौजूद हैं।

क्या आप जानते हैं?

संयुक्त राज्य अमेरिका के न्यू इंगलैंड राज्य के पास औद्योगिक विकास के लिए अनुकूल भौगोलिक परिस्थितियाँ नहीं थीं इसके बावजूद इस राज्य ने परिश्रम के बल पर और पड़ोस के राज्यों से कच्चा माल प्राप्त कर औद्योगिक विकास का अच्छा उदाहरण प्रस्तुत किया।

भारत में भिलाई में स्थापित लौह इस्पात उद्योग के लिए कच्चे माल विशेष रूप से कोयला पड़ोस के राज्यों से प्राप्त करता है।

दसवीं पंचवर्षीय योजना काल में औद्योगिक विकास दर 9.8 प्रतिशत था। किन्तु बिहार की औद्योगिक आय पूरे देश की औद्योगिक आय का मात्र 0.4 प्रतिशत (2004-05) था। एक तथ्य यह भी है कि राज्य के समग्र औद्योगिक प्रक्षेत्र में अनुबंधित इकाईयों का बाहुल्य है जिनकी आय इस प्रक्षेत्र की कुल आय की आधी है।

बिहार सरकार के सर्वेक्षण रिपोर्ट 2007-08 के अनुसार बिहार में बड़ी एवं मंझोली औद्योगिक इकाइयों की कुल संख्या 262 है जो राज्य के सीमित क्षेत्रों में केंद्रित है। बड़ी एवं मंझोली इकाइयों का सर्वाधिक केन्द्रीकरण पटना प्रमंडल में (38.2%) है, जबकि तिरहुत प्रमंडल में 21.6 प्रतिशत और मगध प्रमंडल में 9.7 प्रतिशत है।

बिहार में लघु, अतिलघु एवं अत्यंत लघु उद्योगों का अधिक विस्तार है। यह रोजगार सृजन

में एक अहम भूमिका अदा करती है। वर्ष 2007-08 में इसके द्वारा 5.5 लाख मानव दिवस का रोजगार सृजित किया गया। यह भी अनुमान किया जाता है कि बिहार में 1500 लघु उद्योग, 98000 अतिलघु/ अत्यन्त लघु औद्योगिक इकाइयाँ और 68000 शिल्पोद्योग इकाइयाँ मौजूद हैं। तीसरे अखिल भारतीय लघु उद्योग गणना (2001-02) में बिहार में केवल 72.6 हजार स्थायी रूप से निर्बंधित लघु इकाइयाँ हैं, जिसमें 52.1 हजार इकाइयाँ कार्यशील हैं। लघु, अतिलघु इकाईयाँ एवं शिल्पोद्योग इकाइयाँ पूरे राज्य में फैले हैं।

क्या आप जानते हैं?

भारत की पहली चीनी मिल डच कम्पनी द्वारा 1840 मोतिहारी में स्थापित किया गया था।

बिहार में 10 टन गन्ना से एक टन चीनी प्राप्त होता है।

1960 के पूर्व यहाँ पूरे भारत की लगभग एक तिहाई चीनी बिहार से प्राप्त होता था।

कृषि पर आधारित उद्योग :

चीनी उद्योग (Sugar Industries)- बिहार के उद्योगों में चीनी उद्योग एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है। वस्तुतः इसके साथ कई अन्य सहायक उद्योगों का भी विकास होता है। बीसवीं सदी के मध्य तक भारत में चीनी उद्योग के क्षेत्र में बिहार का स्थान महत्वपूर्ण था। किन्तु 1960 के बाद इस उद्योग में ह्रास होने लगा किन्तु अब यह सातवें स्थान पर है, जबकि यहाँ इस उद्योग के लिए सभी अनुकूल भौगोलिक परिस्थितियाँ वर्तमान हैं। अतः हाल के कुछ वर्षों में इसमें सुधार होने लगा है जो तालिका 1.1 से स्पष्ट है ।

तालिका 1.1

	2004-05	2005-06	2006-07
ईख की खेती का कुल क्षेत्रफल (लाख हे० में)	2.27	2.30	2.52
ईख का उत्पादन (लाख टन में)	125.82	129.95	143.64
चीनी का उत्पादन (लाख मी० टन में)	5.54	4.22	4.52
पेराई अवधि (दिनों में)	85	126	150

स्रोत - ईख विभाग, बिहार सरकार

पूर्व में यहाँ चीनी की मिलों की संख्या 29 थी लेकिन 2006-07 में इसकी संख्या घटकर मात्र 09 रह गई है। वर्तमान में चीनी का कुल उत्पादन 4.52 लाख मीट्रिक टन है।

बिहार में चीनी की अधिकतर मिलें उत्तरी–पश्चिमी क्षेत्र में विकसित हैं । पश्चिमी चम्पारण, पूर्वी चम्पारण, सीवान, गोपालगंज, और सारण जिला में चीनी मिलें केंद्रित हैं, क्योंकि यह क्षेत्र गन्ना उत्पादन के लिए अत्यन्त ही अनुकूल हैं ।

बिहार में कुछ चीनी मिलें दरभंगा जिला के सकरी, लोहार, हसनपुर एवं मुजफ्फरपुर जिला के मोतीपुर में है। राज्य के दक्षिणी भाग में भी चीनी के कुछ कारखाने स्थित हैं । इनमें विक्रमगंज, बिहटा और गुराड़ू की चीनी मिलें हैं ।

राज्य में चीनी उत्पादन के प्रोत्साहन के लिए ग्यारहवीं योजना अवधि के दौरान विशेष बल दिया गया है और ईख उत्पादकता एवं क्षेत्रफल बढ़ाने पर अधिक जोर दिया गया है । बिहार राज्य चीनी निगम के बंद पड़े 15 चीनी मिलों एवं दो निर्माणाधीन इकाइयों को पुनः जीवित करने की योजना है । राज्य सरकार द्वारा यह भी निर्णय लिया गया है कि (ग्यारह) चीनी मिलों का परिचालन की जिम्मेदारी रिलायंस, हिन्दुस्तान पेट्रोलियम एवं बहुराष्ट्रीय कम्पनियों को दे दी जाएगी ।

चीनी मिलों से सह उत्पादन के रूप में विद्युत, कागज, छोवा एवं इथेनॉल निर्माण भी होता है । वर्तमान में इसके सह उत्पादन पर काफी बल दिया जा रहा है और कई नई योजनाओं को दिया जा रहा है ।

जूट उद्योग : जूट बिहार का ही नहीं बल्कि पूर्व भारत का एक महत्वपूर्ण उद्योग है । आजादी से पूर्व भारत में 110 जूट के कारखाने थे इनमें सबसे अधिक पश्चिम बंगाल एवं बिहार में ही केंद्रित थे । लेकिन आजादी के बाद जूट पैदा करने वाला अधिकतर भाग बंगलादेश में चला गया जिसके कारण इस उद्योग को भारी झटका लगा । बिहार में जूट के तीन बड़े कारखाने हैं कटिहार, पूर्णिया, और दरभंगा । वर्तमान में सिर्फ कटिहार का कारखाना कार्यरत है ।

तम्बाकू उद्योग : तम्बाकू उत्पादन में बिहार का स्थान देश में छठा है । तम्बाकू पर आधारित बीड़ी तथा सिगरेट के कारखाने कई जगहों पर स्थापित हैं, मुंगेर में इम्पेरियल टोबैको दिलावरपुर में स्थापित हैं । बीड़ी उद्योग के लिए तेन्दू के पत्ते यहाँ झारखंड के पठारी क्षेत्र से प्राप्त किए जाते हैं । यहाँ बीड़ी के 250 से अधिक कारखाने मुंगेर, गया, पटना, झाझा लक्खीसराय, जमुई बिहार शरीफ, आरा, बक्सर, महनार, दलसिंहसराय, शाहपुर आदि में स्थित है ।

चावल, दाल एवं आटा मिल : बिहार का सबसे प्रमुख फसल धान है। धान को कूट कर चावल तैयार किया जाता है। बिहार के तराई क्षेत्र में चावल कूटने की अनेक मिलें हैं। दूसरा धान उत्पादन क्षेत्र दक्षिण पश्चिमी बिहार भोजपुर, रोहतास, गया, जहनाबाद, औरंगाबाद हैं इसलिए यहाँ अनेक चावल की मिलें विस्तृत हैं, बिहार में सबसे अधिक चावल की मिलें भोजपुर रोहतास और पूर्वी चम्पारण जिलों में हैं, इन जिलों में चावल की मिलों की संख्या 520 हैं। इसके अतिरिक्त चावल की मिलें शहरों में भी स्थापित हैं। यह कार्य घरेलू उद्योग के रूप में गाँव में भी किया जाता है।

गंगा नदी के दोनों ओर तटीय जिलों में दलहन का अधिक उत्पादन होता है, इसलिए यहाँ दलहन की छोटी मिलें विकसित हैं। इनमें बाढ़, मोकामा, बरबीघा, शेखपुरा, पटना, बिहारशरीफ प्रमुख हैं।

बिहार में गेहूँ से आटा, मैदा, सूजी एवं दलिया बनाने के भी कारखाने विकसित हैं। यहाँ लगभग 2000 आटा की मिलें हैं, आटा मिलें पटना और गया में सबसे अधिक है। भोजपुर, रोहतास, मुजफ्फरपुर, दरभंगा और भागलपुर जिलों में भी इसका विकास हुआ है।

तेल मिल : बिहार में तीसी, राई, सरसों एवं सूरजमुखी से तेल निकाले जाते हैं और इसकी फसल भी लगाई जाती है। यहाँ 500 तेल मिलें हैं (बिहार सरकार के प्रतिवेदन के अनुसार)। इसका विस्तार पूरे राज्य में है परन्तु पटना, गया जहानाबाद, नालन्दा, रोहतास, भोजपुर मुंगेर और भागलपुर में विस्तार अधिक है।

गैर कृषि आधारित उद्योग

चर्म उद्योग : बिहार में गाय-भैंसों की बड़ी तादाद तथा उनकी खालों एवं चमड़ों की उच्च गुणवत्ता को देखते हुए चर्म उद्योग के विकास की भारी संभावना है। बिहार में यह उद्योग मुख्य रूप से कुटीर उद्योग के रूप में विस्तृत है, लगभग 50000 कारीगर जूता-चप्पल निर्माण कार्य में लगे हुए हैं। अधिकांश चर्म उद्योग बेतिया, मुजफ्फरपुर, पूर्णिया, कटिहार पटना, आरा और औरंगाबाद में अवस्थित हैं।

बिहार के चर्म उद्योग के तीन संघटन हैं–(क) बिहार राज्य चर्म उद्योग विकास निगम और इसकी सहायोगी इकाई फिनिश्ड लेदर लिमिटेड के अंतर्गत स्थापित इकाइयाँ, (ख) मुजफ्फरपुर में स्थित निजी चर्मशोधन कारखाने तथा (ग) मोकामा और पटना के दीघा में बाटा चर्मशोधन एवं निर्माण उद्योग। 1970 के दशक में बिहार राज्य चर्म उद्योग विकास निगम के अंतर्गत राज्य के 7 चर्मशोधन कारखानों की स्थापना हुई, थी लेकिन वित्तीय अवरोधों के कारण अधिकतर शाखायें बंद पड़ी हैं । मुजफ्फरपुर जिला के बेला में स्थापित 9 में से 7 इकाइयां अभी भी चालू हैं । यहाँ से सभी उत्पादों को तमिलनाडु और मध्य प्रदेश में स्थित टाटा की इकाईयों को चमड़ा के सामान बनाने के लिए पहुँचाया जाता है ।

बिहार राज्य चर्मोद्योग विकास निगम के अधीन 5 ईकाइयाँ हैं जो जूते (Boots) और सुरक्षा जूते (Safety boots) का निर्माण करती है । फैंसी जूते–चप्पल का निर्माण बाटा की इकाइयों द्वारा होता है । शिल्पोद्योग कुटीर उद्योग वाले असंगठित प्रक्षेत्र में मोटे तौर पर 10 ईकाइयाँ कार्यरत हैं जो मुजफ्फरपुर, बेतिया दानापुर तथा पटना एवं उप नगरीय क्षेत्र में अवस्थित हैं । बाटा की दो बड़ी इकाइयाँ दानापुर एवं (जो अब बाटा गंज के नाम से प्रसिद्ध है) मोकामा हैं। जहाँ क्रमशः जूते एवं चप्पल निर्माण कार्य तथा ट्रैनिंग का कार्य होता है ।

वस्त्र उद्योग बिहार का एक प्राचीन उद्योग है, इस उद्योग में एक विशेष समुदाय की भागीदारी रही है । यह काम यहाँ ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र दोनों में होता हैं । भागलपुर के तसर कपड़े, लुंगी एवं चादर देश विदेश में प्रसिद्ध है । औरंगाबाद जिले के ओबरा तथा दाउदनगर के बने कालीन की मांग सम्पूर्ण भारत में है । बिहार में सूती, रेशमी एवं ऊनी वस्त्र तैयार किया जाता है ।

कच्चे माल के अभाव के कारण बिहार में सूती वस्त्र उद्योग का अधिक विकास नहीं हुआ हैं, लेकिन सस्ते मजदूर तथा बाजार की उपलब्धता के कारण डुमरांव, गया, मोकामा, मुंगेर फुलवारीशरीफ ओरमांझी, भागलपुर में यह उद्योग विकसित हुआ है । यहाँ छोटी-छोटी मिलें स्थापित हैं । सूत कानपुर एवं अहमदाबाद से मंगाया जाता है ।

रेशमी वस्त्र उद्योग का सबसे अधिक विकास भागलपुर में हुआ है । हस्तकरघा एवं रेशमी वस्त्र निदेशालय की स्थापना की गई है, इसके द्वारा क्षेत्रीय स्तर पर भागलपुर, मुजफ्फरपुर, गया, एवं दरभंगा में रेशमी वस्त्र उद्योग का विकास हुआ है । इस निदेशालय के अधीन भभुआ में

बनारसी साड़ी नालन्दा तथा नवादा में रेशमी वस्त्र उत्पादन को प्रोत्साहन दिया गया है ।

बिहार में ऊनी वस्त्र उद्योग नहीं के बराबर है केवल स्थानीय भेड़ों के ऊन से कम्बल आदि निर्माण होता है । औरंगाबाद के ओबरा एवं दाउद नगर क्षेत्र में कम्बल और कालीन तैयार किया जाता है । इसके अलावा मुंगेर, मुजफ्फरपुर तथा पटना जिलों में स्थानीय भेड़ों से प्राप्त ऊन से कम्बल बनाए जाते हैं ।

बिहार में हथकरघा प्रक्षेत्र राज्य का एक बड़ा औद्योगिक प्रक्षेत्र है । यहाँ 34,320 करघे हैं जिसमें 10817 सहकारिता क्षेत्र में तथा 23503 गैर सहकारिता क्षेत्र में हैं । इनके अलावा 11,361 विद्युत चालित करघे हैं । हथकरघा उद्योग पटना, गया, भागलपुर, बांका, दरभंगा, अरवल, जहानाबाद, औरंगाबाद, भभुआ, नवादा, खगड़िया, नालंदा, मधुबनी तथा सिवान जिलों में संकेन्द्रित है । यहाँ 1089 प्राथमिक बुनकर सहाकारी समितियाँ हैं और कुल बुनकरों की संख्या 1,32,294 (98 हजार सरकारी क्षेत्र और 34367 सहकारी क्षेत्र में) हैं ।

वर्ष 2007-08 की नई स्कीमों में इस उद्योग के प्रोत्साहन के लिए मेला एवं प्रदर्शनी, टेक्सटाइल पार्क, हैण्डलूम पार्क, हैण्डलूम कलस्टर योजना, जूट पार्क, वर्कशाप एवं सेमिनार योजना, समन्वित हथकरघा विकास योजना, मलवरी एवं तसर परियोजनाओं को सम्मिलित किया गया है साथ ही बुनकरों के लिए हथकरघा आधुनिकीकरण योजना, विद्युत करघा के लिए जेनरेटरों की उपलब्धता एवं बुनकरों को आधुनिक प्रशिक्षण की योजनाएँ हैं ।

खनिज आधारित उद्योग :

बिहार में खनिज का अभाव है यहाँ मात्र चूना-पत्थर एवं पायराइट पर्याप्त परिमाण में उपलब्ध हैं । खनिज पर आधारित उद्योगों में सीमेन्ट उद्योग रसायन उद्योग एवं काँच उद्योग प्रमुख हैं ।

सीमेन्ट उद्योग :

सीमेन्ट उद्योग के लिए सबसे प्रमुख कच्चा माल चूना पत्थर है । साधारणतः एक टन सीमेन्ट उत्पादन के लिए 2.02 टन कच्चे माल की आवश्यकता होती है । राज्य में कैमूर की पहाड़ियों से चूना-पत्थर का खनन किया जाता है । बिहार में सम्पूर्ण देश का लगभग 5% चूना पत्थर प्राप्त होता है । सीमेन्ट उद्योग रोहतास जिला में डेहरी ओन सोन के पास डालमियानगर में

अवस्थित है । परन्तु तत्काल बंद है एवं रुग्नावस्था में है । राज्य सरकार द्वारा सीमेंट के छोटे कारखानों को प्राथमिकता दी जा रही है । यही कारण है कि रोहतास और कैमूर जिलों में छोटे कारखाने (मिनी प्लांट) खोलने की एक बड़ी योजना है ।

रसायनिक उद्योग :

अम्ल, क्षार एवं उर्वरक रासायनिक उद्योग में भारी वस्तुओं के उद्योग हैं । बिहार में उर्वरक का सबसे महत्वपूर्ण कारखाना बरौनी में स्थापित है जो हिन्दुस्तान फर्टिलाइजर्स उद्योग के नाम से प्रसिद्ध है । इसकी उत्पादन क्षमता चार लाख टन है । बरौनी पेट्रो केमिकल से नेप्था प्राप्त किया जाता है । इसके अतिरिक्त रंग, वार्निश, तेल, साबुन, दवाइयाँ एवं हल्के वर्ग की रासायनिक वस्तुएँ भी तैयार की जाती हैं ।

काँच उद्योग :

यह उद्योग यहाँ का प्राचीन उद्योग है, यहाँ पहले काँच की चूड़ियाँ बनाई जाती थीं अब औषधि निर्माण के विकास के साथ काँच उद्योग का विकास हुआ है । शीशी बोतल तथा अन्य कार्यों के लिए बालू, सिलिका, सोडा ऐश, चूनापत्थर, सोडियम सल्फेट, पोटैशियम कार्बोनेट, शोरा, सुहागा, बोरिक एसिड, शीशा, सूखा संखिया, बेरियम ऑक्साईड आदि पदार्थ कच्चे माल के रूप में प्रयुक्त होते हैं । यहाँ काँच का उत्पादन पटना, हाजीपुर, दरभंगा और भागलपुर में होता है ।

वन्य पदार्थों पर आधारित उद्योग

(INDUSTRIES BASED ON FOREST PRODUCTS)

वन्य पदार्थों पर आधारित उद्योगों में यहाँ लकड़ी कागज एवं लुग्दी तथा लाह उद्योग विकसित हैं ।

बिहार में नेपाल की सीमा पर नरकटिया गंज, जोगबनी, बैरगनिया, बैरगनिया गोपालगंज, मुजफ्फरपुर, समस्तीपुर, पटना, भागलपुर और कटिहार में लकड़ी के कारखाने हैं । हाजीपुर और बेतिया में प्लाईवुड के कारखाने प्रसिद्ध हैं । गन्ने की खोई एवं चावल के छिलके बांस, सबाई घास, मुलायम लकड़ियों की प्रचुर उपलब्धता के कारण कागज तथा लुग्दी के कारखानों का यहाँ विकास हो पाया है । यहाँ कागज के प्रमुख कारखाने ठाकुर पेपर मिल्स समस्तीपुर तथा अशोक पेपर मिल, डालमियानगर में स्थापित हैं । छोटे कागज के कारखाने बरौनी और पटना में स्थापित हैं ।

लाह (लाख) के कीड़े पलास, बेर, कुसुम आदि की वृक्षों पर विशेषरूप से पनपते हैं, और यह वृक्ष नवादा, गया, बांका, मुंगेर तथा पूर्णिया जिलों में पर्याप्त मात्रा में मिलते हैं इसलिए लाह (लाख) उद्योग इन्हीं जिलों में विस्तृत हैं ।

पर्यटन उद्योग (Tourism Industries) :

बिहार में पर्यटन प्रमुख उद्योग के रूप में उभरने की क्षमता है । ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य से अन्तर्राष्ट्रीय महत्व के बिहार के स्मारकों एवं खंडहरों को ख्याति प्राप्त है । यहां की सांस्कृतिक विरासत, धार्मिक स्थलें, प्राकृतिक सौंदर्य पूरे संसार के लोगों को आकृष्ट करने की क्षमता रखता है, बिहार के पर्यटन मानचित्र में बौद्ध मठ मंदिर, जैन मंदिर, सिक्खों के गुरुद्वारे और सूफी संतों की दरगाहें मौजूद है । इन पर्यटन स्थलों में राजगीर, पाटलीपुत्र, वैशाली, बोधगया, नालंदा, पावापुरी, पटना साहेब, गया, सुलतानगंज, बाल्मिकीनगर, देव, सोनपुर, सासाराम, मनेर, बिहारशरीफ जैसे अनेक स्थान प्रसिद्ध हैं ।

बिहार में इस उद्योग पर विशेष ध्यान नहीं है, फिर भी यहाँ राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय पर्यटकों की संख्या में वृद्धि हो रही है। सरकारी रिपोर्ट 2007–08 के अनुसार वर्ष 2003 में 61.30 लाख तथा 2006 में 1.07 करोड़ पर्यटक बिहार में आये । इससे 2007–08 में बिहार राज्य पर्यटन विकास निगम को 156 लाख का लाभ हुआ था जो कि पिछले वर्षों से अधिक है। वर्ष 2006 में पर्यटक के आगमन की तादाद तालिका 1.2 से स्पष्ट है ।

तालिका 1.2

वर्ष	भारतीय	विदेशी	योग
2003	6044170	60820	6105530
2005	8667220	63321	8730541
2006	10670268	94446	10764714

स्रोत–बिहार सरकार आर्थिक सर्वेक्षण 2007–08

अन्य प्रमुख उद्योग–ऊपर वर्णित उद्योगों के अतिरिक्त कुछ अन्य उद्योगों का भी यहाँ विकास हुआ है । इन में बरौनी में तेलशोधन कारखाना और पेट्रो रसायन उद्योग स्थापित हैं, मुंगेर में बंदूक, पूर्णिया में कीटनाशक उद्योग और बेतिया में प्लास्टिक उद्योग स्थापित हैं । कहलगाँव,

बरौनी तथा काँटी में ताप विद्युत केन्द्र स्थापित हैं । नालंदा में कोल्डस्टोरेज और आलू से सम्बंधित (पाउडर, चिप्स) उद्योग खोले गये हैं । हाल ही में भारत सरकार द्वारा चार वृहत् औद्योगिक इकाइयों की आधारशीला रखी गई है । हरनौत में रेलवे कोच फैक्ट्री, राजगीर में आयुद्ध कारखाना, मण्डी में जैविक खाद्य कारखाना तथा दरियापुर (छपरा) में रेलवे चक्का निर्माण उद्योग । इसके अतिरिक्त बाढ़ और नबीनगर में ताप विद्युत उद्योग निर्माणाधीन है ।

क्या आप जानते हैं ?

जमालपुर में 1875 ई० में एक बड़ा रेलवे वर्कशाप स्थापित हुआ था जिसमें कभी 10 हजार मजदूरों को रोजगार मिला था और यह एशिया का सब से पहला वर्कशाप था ।

केन्द्र सरकार के सार्वजनिक प्रबंधन के भारी उद्योग के उपक्रम में भारत वैगन एण्ड इन्जीनियरिंग कम्पनी लिमिटेड मोकामा में स्थापित किया गया है । यह रेलवे वैगन और इन्जीनियरिंग के सामान तैयार करता है । मुंगेर जिला के जमालपुर में डीजल इंजन का कार्य होता है । यह एक बड़ा रेलवे वर्कशाप है ।

बिहार में इन दिनों सूचना प्रौद्योगिकी का भी विकास हो रहा है, पटना सिलकोन पार्क का विकास किया गया है, कम्प्यूटर हार्डवेयर के क्षेत्र में भी कई संस्थाएँ काम कर रही हैं ।

बिहार के औद्योगिक पिछड़ेपन का प्रमुख कारण निम्नांकित समस्याएं हैं ।

(i) कच्चे माल की कमी: सबसे बड़ी समस्या है । यहाँ न सिर्फ खनिजों का अभाव है वरन गन्ना और जूट के अन्तर्गत कृषि क्षेत्र में कमी आने से इसके कच्चे माल की भी कमी है अतः इनसे सम्बंधित अनेक कारखाने बन्द हैं ।

(ii) संरचनात्मक सुविधाओं की कमी- परिवहन, ऊर्जा, भण्डारण (Storing facilities) की कमी, बाजार की कमी ।

(iii) आधुनिकरण हेतु पूँजी और तकनीकी की कमी कृषि आधारित उद्योगों तथा जमालपुर कारखाने के पतन का प्रमुख कारण है । सीमेन्ट उद्योग और बरौनी की अनेक इकाइयों के बंद होने का कारण हुआ ।

(iv) विदेशी निवेश की कमी–प्रस्ताव MOU पर समझौता हुआ किन्तु वास्तविक निवेश नहीं है उपभोक्ता उद्योगों में रूचि है जब कि आधारभूत उद्योगों में कोई रूचि नहीं है, आन्तरिक पूंजी भी मूलतः हॉस्पिटल और होटल उद्योग में लग रहे हैं । जिसमें शीघ्र ही लाभ मिलता है । फिर भी नई औद्योगिक नीति 2006 के आने और वर्त्तमान राज्य सरकार द्वारा नए निवेशों को प्रोत्साहित करने के लिए उठाए गए कदम के बाद इस प्रक्षेत्र में काफी उत्साह बढ़ा है । राज्य में निवेश के कुल 245 प्रस्ताव प्राप्त हुए हैं जिनमें 57.84 हजार करोड़ रू० का निवेश प्रस्तावित है । राज्य निवेश प्रोत्साहन बोर्ड (SIPB) इनमें से 115 प्रस्तावों को अनुमोदित भी कर चुका है, जिनमें कुल 40.72 हजार करोड़ रू० का निवेश प्रस्तावित है । बिहार औद्योगिक क्षेत्र विकास प्राधिकार (Bihar Industrial Area Development Authority बिआडा) द्वारा इस प्रक्षेत्र में साहसिक कदम उठाए गए हैं । उनमें मुख्य बातें हैं वर्ष 2006–07 में 172.45 करोड़ रू० परियोजना लागत वाली 15 इकाइयों को जमीन दी गई । इसके विपरीत इस वर्ष 4,218.62 करोड़ रू० निवेश वाली 627 नई इकाइयों को जमीन अवंटित की गई है । पहले आवंटन में काफी समय लगता था । किन्तु अब बिआडा ने नई इकाइयों को 24 घंटे में आवंटन की व्यवस्था की । हाजीपुर में 1.5 करोड़ रू० सामान्य मूल्यग्रात्र परिशोधन संयंत्र का निर्माण कार्य आरम्भ हुआ । यहीं राज्य का पहला फूड पार्क भी विकसित होने जा रहा है । भागलपुर एवं बेगुसराय में हथकरघा पार्क का निर्माण, पटना हवाई अड्डे में कारगो कम्पलेक्स की स्थापना और फतुहा में अन्तर्देयशीय कंटेनर डीपो की स्थापना होने जा रहा है ।

परिवहन (Transportation) :

बिहार का अधिकतर भाग मैदानी है, इसलिए यहाँ परिवहन के प्रायः सभी स्थलीय साधनों का विकास हुआ है । इसका उत्तरी भाग बाढ़ प्रभावित रहता है इसलिए इस क्षेत्र में समान यातायात के साधनों का विकास दक्षिणी भाग की अपेक्षा कम हो पाया है । यहाँ पर मूल रूप से सड़क मार्ग (Road ways) एवं रेल मार्ग (Railways) तथा सीमित रूप से नदी जलमार्ग (Water Ways), वायु मार्ग (Air ways) एवं रज्जूमार्ग का विकास हुआ है ।

सड़क मार्ग (Road ways) :

बिहार में सबसे पहले सड़क मार्ग का विकास हुआ और यह बिहार के प्राचीन साधनों में से है, यही नहीं यहाँ दो सम्राटों (अशोक एवं शेरशाह) ने सड़क मार्ग के विकास में जो योगदान दिया है वह स्वर्णाक्षरों में लिखने योग्य है। आजादी के बाद बिहार में सड़क का विस्तार अधिक हुआ है, आजादी के समय विभिन्न प्रकार की सड़कों की कुल लम्बाई 2,104 कि मी० थी जबकि वर्तमान सड़कों की कुल लम्बाई 81,680 किमी० है। वर्तमान सड़क मार्ग को प्रशासनिक एवं कार्मिक दृष्टि से पाँच वर्गों में रखा गया है तालिका 1.3 (क) में इनकी लम्बाई को दिखाया गया है।

तालिका 1.3 (क)

बिहार में सड़कों का नेट वर्क

सड़कों की लम्बाई (किमी० में)

क्र सं०	प्रकार/श्रेणी	पक्की	कच्ची	कुल	कुल का प्रतिशत
1.	राष्ट्रीय उच्च पथ	37,34.00	0.00	37,34.00	4.57
2.	राज्य उच्च पथ	3849.00	0.00	3849.00	4.71
3.	मुख्य जिला सड़कें	7017.25	0.00	7017.25	8.59
4.	अन्य जिला सड़कें	2828.00	990.00	3818.00	4.67
5.	ग्रामीण सड़कें	27400.00	35861.63	63261.63	77.46.
	कुल लम्बाई	44828.47	36851.63	81680.10	100.00

स्रोत-बिहार सरकार-आर्थिक सर्वेक्षण 2007-08

राष्ट्रीय उच्च मार्ग बिहार को अन्य राज्यों एवं क्षेत्रों से जोड़ता है बिहार में सब से प्रमुख राष्ट्रीय उच्च मार्ग संख्या 2 (दो) है, यह ग्राण्ड ट्रंक रोड के नाम से प्रसिद्ध है इसका निर्माण मुगल काल में शेरशाह द्वारा हुआ था बिहार राष्ट्रीय उच्च मार्गों की कुल लम्बाई 3,734.00 किलो मीटर है।

उत्तर प्रदेश की सीमा तक जाने वाली ग्राण्ड ट्रंक रोड के बाद दूसरी सड़क गोपालगंज-पिपरा कोठी मुजफ्फरपुर बरौनी उच्चपथ संख्या 28 है जो बिहार में 266.30 किमी० लम्बी है इसी प्रकार आरा बक्सर उच्च पथ संख्या 84 छपरा-सिवान गोपालगंज उच्च पथ संख्या 85 है, गया, मोकामा- फरक्का (राज मार्ग पथ संख्या–80) गया-राजगीर-बिहारशरीफ बरबिघा सरमेरा मोकामा उच्च पथ संख्या 82 है जो कि 147 किमी० लम्बी है, बिहार में सबसे लम्बी सड़क (398 किमी० लम्बी) उच्च पथ संख्या 31 है, यह रजौलीघाट-बख्तियारपुर-बरौनी सड़क है। राष्ट्रीय राजमार्ग विकास परियोजना के अन्तर्गत NH 77 और 28 पर पटना से मुजफ्फरपुर तक 55 किमी तक चार लेन वाला राजमार्ग NHA—1 द्वारा निर्माण किया जा रहा है। राष्ट्रीय प्राधिकरण द्वारा स्वर्णिम चतुर्भुज योजना के अन्तर्गत 206 किमी० और पूरब पश्चिम कोरीडोर के अन्तर्गत 512 किमी० का भाग इस राज्य से होकर गुजरता है।

क्या आप जानते हैं ?

ग्राण्ड ट्रंक रोड (Grand Trank) की बिहार में कुल लम्बाई 204 किमी है, यह सड़क पूर्व में कलकत्ता से होते हुए पश्चिम में दिल्ली और पेशावर तक जाती है (पेशावर अब पाकिस्तान में है)। यह राज मार्ग बिहार में शेरघाटी सासाराम, मोहनिया होकर गुजरती है। इस समय यह सड़क चार लेन (four Lane) हो गया है और राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण (NHA.I) के अधीन है।

केन्द्रीय पथ निर्माण मन्त्रालय द्वारा उत्तरी बिहार एवं दक्षिणी बिहार की अधिकतर सड़कों का निर्माण अपने हाथ में लेने का निर्णय लिया है।

बिहार में कुछ राजमार्ग प्रस्तावित भी हैं। जो तालिका 1.3 (ख) में अंकित है।

तालिका 1.3 (ख)

बिहार का प्रस्तावित राष्ट्रीय राजमार्ग

क्रमांक	संख्या	नाम	लम्बाई
01	98	फुलवारी, भूसौला, नौबतपुर, बिक्रम अरवल औरंगाबाद	110.00
02	99	डोभी (NH2) चीलाजान	10.00
03	101	छपरा, बनियापुर, महाराजगंज, बरौली (NH28)	60.00
04	102	छपरा रेवाघाट, मुजफ्फरपुर (NH28	80.00

05	103	हाजीपुर मुसरीघरारी (NH28)	55.00
06	104	चकिया, नरहर, पकरी ब्रिज, मधुबनी, शिवहर, सीतामढ़ी हरलाखी, उमरगांव, जयनगर खरौना, नरहिया (NH 57)	160.00
07	105	दरभंगा, औसी, जयनगर	66.00
08	106	बीरपुर, बिहपुर (NH 31)	130.00
09	107	महेशखूंट, सोनबरसा, सिमरी, बख्तियारपुर बैराती सहरसा बैजनाथपुर, मधेपुरा	
		मुरलीगंज, पूर्णिया (NH 31)	145.00

स्रोत–पथ निर्माण विभाग, बिहार सरकार (2004)

बिहार में 3849.22 किमी राज्य स्तरीय सड़क मार्ग का विस्तार है, इन सड़कों की देख रेख बिहार सरकार करती है और यह मुख्य रूप से जिला मुख्यालयों को जोड़ती हैं।

बिहार में जिला स्तरीय सड़क मार्ग को भी विस्तृत किया गया है। सभी सड़कें भी पक्की हैं। और इनकी कुल लम्बाई 7017.25 किमी० है। ये सड़कें जिला के मुख्य नगरों एवं अनुमण्डलों को जोड़ती है। अन्य जिला स्तरीय सड़कें अनुमंडलों एवं प्रखण्ड मुख्यालयों से सम्पर्क बनाती हैं। अन्य जिला स्तरीय सड़कें अनुमण्डलों एवं प्रखण्ड मुख्यालयों से सम्पर्क बनाती हैं। इसमें कुछ सड़कें (990.00 किमी०) कच्ची हैं और 2828.00 किमी० सड़कें पक्की हैं। मुख्य जिला स्तरीय सड़कों एवं अन्य जिला स्तरीय सड़कों का निर्माण एवं देख रेख का कार्य सार्वजनिक निर्माण विभाग (PWD) द्वारा किया जाता है।

राज्य में सबसे अधिक विस्तार ग्रामीण सड़कों का है, इसकी कुल लम्बाई 83261.36 किमी० है, जिसमें 27.400 किमी पक्की एवं 35861.63 किमी० सड़कें हैं। ये राज्य की सड़कों का 77.46 प्रतिशत है। इन सड़कों के निर्माण एवं रख-रखाव का कार्य ग्राम पंचायत या प्रखंड विकास कार्यालय द्वारा होता है। ये सड़कें अन्य सड़कों की अपेक्षा कम चौड़ी होती हैं।

वर्तमान में सड़कों के विकास पर अधिक बल दिया जा रहा है । इसमें सम्पूर्ण उच्च पथों की मरम्मति, नवीकरण और उन्नयन का कार्य सम्मिलित है। वर्ष 2006-07 में 773 किमी० और जनवरी 2008 तक 552 किमी० राष्ट्रीय उच्च पथों का नवीकरण किया गया । राज्य उच्च पथों का भी उन्नयन तेजी से हो रहा है । प्रमुख जिला सड़कों के उन्नयन कार्य भी हो रहा है । वर्ष 2006 में 1054 किमी० सड़कों को राज्य पथ घोषित किया गया है और एशियन बैंक के सहयोग से इन्हें दो लेन वाले उच्च पथों में उन्नयन का काम जारी है । वर्ष 2008 में 722 किमी० सड़कों को राज्य पथ घोषित किया गया है ।

बिहार की कई सड़कें अन्तर्राष्ट्रीय सीमा तक भी जाती हैं । ये सड़कें नेपाल की सीमा तक जाती हैं।

कई क्षेत्रों में प्राकृतिक बाधाओं के कारण सड़कों का विस्तार कम हुआ है । इसमें कोसी बेसीन का बाढ़ ग्रस्त क्षेत्र तथा टाल एवं चाउर तथा दियारा के अतिरिक्त अन्य बाढ़ प्रभावित क्षेत्र हैं । उत्तर बिहार की अधिकतर सड़कें बाढ़ से प्रभावित होती हैं और यातायात बाधित होता रहता है ।

गंगा नदी पर कई स्थानें पर पुलों के निमार्ण से उत्तरी बिहार का दक्षिणी बिहार से सम्पर्क बढ़ गया है, महात्मा गांधी सेतु के निर्माण के बाद राजधानी पटना और दक्षिणी बिहार का सीधा सम्पर्क उत्तरी बिहार से हो गया है।

गंगा नदी पर एक और पुल मुंगेर के पास निर्माणाधीन है, इसका कार्य पूरा हो जाने पर उत्तरी पश्चिमी बिहार से दक्षिणी बिहार का सीधा सम्पर्क स्थापित हो जाएगा । लगभग एक सौ करोड़ लागत से अरवल में सोन नदी पर पुल का निर्माण कार्य चल रहा है । इस पुल के चालू हो जाने पर राजगीर और सामननाथ की दूरी बहुत ही कम हो जाएगी और पर्यटकों का आगमन सुगम हो जाएगा। गंडक पर पश्चिम चम्पारण और गोपालगंज के बीच एक एवं कोसी पर सहरसा और दरभंगा के बीच बड़े पुलों का निर्माण कार्य चल रहा है। इन सभी बड़े पुलों के निर्माण के बाद सड़क मार्ग और विकसित हो जाएगा । दूरस्थ एवं ग्रामीण क्षेत्रों से सम्पर्क के लिए डेढ़ हजार से अधिक छोटे पुलों का निर्माण कार्य हो रहा है । राज्य में पुलों के निर्माण की जवाबदेही बिहार राज्य सेतु निर्माण निगम लिमिटेड पर है ।

राज्य में सड़कों के विकास एवं विस्तार के फलस्वरूप मोटर वाहनों की संख्या लगातार

बढ़ रही है । वर्ष 2005-06 में निबंधित मोटर वाहनों की संख्या 80,363 थी जो वर्ष 2006-007 में बढ़ कर 1,47,309 हो गई ।

तालिका 1.4

निबंधित मोटर वाहनों की संख्या

वर्ष	ट्रक	बस	कार	टैक्सी	जीप	ऑटोरिक्शा	दोपहिया	ट्रैक्टर	ट्रेलर	अन्य	योग
2005–06	579	113	5062	427	2321	3273	61333	509	2440	1306	80363
2006–07	1989	921	7409	1326	4430	5027	112985	6160	5281	147309	147309

स्रोत परिवहन विभाग, बिहार सरकार

रेल मार्ग (Railways) : बिहार में रेलमार्ग का विकास ब्रिटिशकाल में सर्वप्रथम 1860 में हुआ था । इस अवधि में गंगा के किनारे इस्ट इंडिया कम्पनी ने कोलकाता तक पहली रेल लाईन बिछाई । यह रेल मार्ग मुख्यतः सुरक्षा और प्रशासनिक कार्य के लिए बनाया गया था और इस से पटना का सम्पर्क पश्चिमी और पूर्वी भारत से स्थापित हो गया । इसके बाद उत्तरी बिहार में पूरब-पश्चिम रेलमार्ग का निर्माण हुआ । इस प्रकार रेल मार्ग का विकास कार्य आगे बढ़ता रहा है ।

उन्नीसवीं सदी के अन्तिम दशक तक कोलकाता से तत्कालीन बिहार के कई स्थानों को मिला दिया गया । बीसवीं सदी के मध्य तक अर्थात आजादी के समय तक उत्तरी बिहार में मीटर गेज के विकास के साथ कई शहरों को जोड़ दिया गया था । जबकि दक्षिण बिहार में अधिकतर बड़ी गेज का विकास हुआ था । स्वतंत्रता के बाद मोकामा के पास 1959 में राजेन्द्र सेतु निर्माण के उपरान्त उत्तरी और दक्षिणी बिहार का रेल मार्ग द्वारा सम्पर्क स्थापित हो गया ।

2001 तक इस राज्य में रेल लाईन की कुल लम्बाई 6,283 किमी० हो गई और हाजीपुर में 2002 में पूर्व–मध्य रेलवे का मुख्यालय स्थापित हो गया । 2003 में रेल लाईन को और विकसित किया गया और फतुहा इस्लामपुर बड़ी लाइन बिछाइ गई, इसके बाद राजगीर-नटेसर रेल लाईन विस्तार हुआ । राजगीर से हिसुआ होते हुऐ बोधगया तक रेल लाईन बिछाया जा रहा है। बांका को भागलपुर मन्दार हिल रेल लाईन से जोड़ दिया गया । मन्दार हिल से दुमका तक रेल लाईन निर्माणाधीन है। दीघा-सोनपुर के बीच गंगा पर रेल पुल का निर्माण काम चल रहा है।

किऊल गंगा मार्ग में तिलैया स्टेशन के दक्षिण में कोडरमा तथा उत्तर में राजगीर से जोड़ने का काम हो रहा है ।

वर्तमान समय में बिहार के रेलमार्ग का नक्शा काफी बदल चुका है । अब यहाँ से विभिन्न स्थानों के लिए एक्सप्रेस एवं सवारी गाड़ियाँ गुजरती हैं । और प्राय: सभी राज्यों की राजधानियों या मुख्य नगरों के लिए पटना से रेलगाड़ी रवाना होती है ।

राज्य के भीतरी भागों में सवारी, एक्सप्रेस, शटल इ० एम० यू० तथा डी० एम० यू० गाड़ियां दौड़ती हैं । बड़े एवं प्रसिद्ध नगरों के लिए इन्टर सिटी गाड़ियां दौड़ाई जा रही हैं । रेलवे के विकास एवं विस्तार के क्रम में कई बड़ी योजनाएं चल रही हैं । किऊल-मुगलसराए रेल लाईन पटना गया रेल लाईन का विद्युतीकरण हो चुका है । पटना जंकशन का विस्तार कर राजेन्द्र नगर तक कर दिया गया है । पटना-गया लाईन का दोहरी करण हो रहा है ।

जल मार्ग (Water Ways) :

बिहार एक भू-आवेशित (Land Locked) राज्य है । यही कारण है कि इसे समुद्री मार्ग से कोई सम्पर्क नहीं है । यहाँ जलमार्ग के लिए नदियों का उपयोग किया जाता है । बिहार में कई बड़ी नदियाँ हैं जिसमें सालोभर जल प्रवाहित होता रहता है, शायद यही कारण है कि इस राज्य में प्राचीन काल से ही जल परिवहन का कार्य होता रहा है । मध्यकाल में भी यातायात का मुख्य साधन जल मार्ग ही था, इसी कारण से नगरों का विकास नदियों के तट पर हुआ । गंगा, घाघरा, कोसी, गण्डक और सोन नदियाँ मुख्य रूप से जल परिवहन के लिए उपयोग की जाती हैं । घाघरा नदी से खाद्यान, गण्डक से लकड़ी फल सब्जी, सोन नदी से बालू और पुन-पुन नदी से बाँस ढोये जाते किन्तु अब नदियों में अवसाद के जमाव, बाढ़ और ग्रीष्म काल में जल के अभाव के कारण परिवहन बाधित हो गया है । गंगा के कई घाटों पर स्टीमर की सुविधा है किन्तु अब पुलों के निर्माण से स्टीमर का परिचालन बहुत ही कम हो गया बड़ी-बड़ी नावें कार्यरत हैं । गंगा नदी में स्थानीय कार्य के लिए बड़ी-बड़ी नावें कार्यरत हैं ।

वर्तमान में गंगा नदी में हल्दिया इलाहाबाद राष्ट्रीय जल मार्ग विकसित किया गया है हाल ही में महेन्द्रू घाट के पास एक राष्ट्रीय पोत संस्थान (*National Ship Institute*) की स्थापना की गई है । नदियों से सम्बंधित सिंचाई योजना के अन्तर्गत नहरों के निमार्ण में जलमार्ग के विकास की सम्भावनाएँ देखी गई हैं । दक्षिणी बिहार की सोन नदी से निकाली गई नहरों को परिवहनीय

बनाया गया है । पश्चिमी सोन नहर से निकला आरा नहर नाव परिवहन परिचालन की सुविधा प्रस्तुत करता है । नहरों से परिवहन के लिए कई योजनाओं पर कार्य चल रहा है ।

वायु मार्ग (Air Ways) :

बिहार की ढीली अर्थव्यवस्था के कारण वायु मार्ग का विकास पूरी तरह नहीं हो पाया है। यहाँ सिर्फ पटना एवं बोध गया में अन्तर्राष्ट्रीय महत्व के हवाई अड्डों का विकास हुआ है । पटना का हवाई अड्डा जय प्रकाश अन्तर्राष्ट्रीय हवाई पत्तन के नाम से जाना जाता है । यहाँ से काठमाण्डू, कोलकाता, मुम्बई, लखनऊ, राँची तथा दिल्ली के लिए वायु सेवा उपलब्ध है, बोध गया से साप्ताहिक उड़ान बैंकाक के लिए होती है । इसके अलावा मुजफ्फरपुर, जोगबनी, रक्सौल, भागलपुर, बिहटा आदि सात हवाई अड्डे हैं । पटना बोधगया सेवा भी शुरू कर दी गई है। पटना तथा बोधगया से विशेष विमान द्वारा हज यात्री भी प्रस्थान करते हैं ।

पटना हवाई पत्तन से निजी कम्पनियों द्वारा भी वायु सेवा दी जाती है, इन में जेट एयर वैज, जेट लाईट, किंगफीशर तथा सहारा प्रमुख है । पटना में एक वायुयान विद्यालय (Flying School) और उड़ान क्लब भी है ।

रज्जू मार्ग (Rope Ways) :

रज्जू मार्ग का उपयोग पर्वतीय एवं दुर्गम स्थानों के लिए होता है । बिहार में राजगीर के गृद्धकूट पर्वत पर बौद्ध शान्ति स्तूप पर जाने के लिए रज्जू मार्ग का विकास किया गया है । यह 1972 में जापान सरकार द्वारा बनाया गया था और अब यह बिहार राज्य पर्यटन विकास प्राधिकरण को सौंप दिया गया है । बांका जिला में मन्दार हिल को भी रज्जूमार्ग से शीघ्र ही जोड़ दिया जायेगा यह स्थान जैनियों के लिए प्रसिद्ध तीर्थ स्थल है ।

अभ्यास

वस्तुनिष्ठ प्रश्न :-

1. बिहार के किस शहर में काँच उद्योग स्थापित है ?
   (क) हाजीपुर (ख) शाहपुर
   (ग) मुरकुण्डा (घ) भवानी नगर
2. सिगरेट का कारखाना कहाँ है ?
   (क) मुंगेर में (ख) पटना में
   (ग) शाहपुर में (घ) गया में
3. रेल वर्कशॉप कहाँ स्थित है ?
   (क) जमालपुर (ख) भागलपुर
   (ग) मुंगेर (घ) पटना
4. खाद कारखाना कहाँ स्थित है ?
   (क) बरौनी (ख) बाढ़
   (ग) मोकामा (घ) लक्खीसराय
5. किस नगर में कालीन तैयार होता है ?
   (क) ओबरा (ख) दाउदनगर
   (ग) बिहारशरीफ (घ) गया
6. अशोक पेपर मिल किस जिला में स्थित है ?
   (क) समस्तीपुर (ख) पटना
   (ग) पूर्णिया (घ) अररिया ।

7. बिहार की पहली रेल लाईन थी ?

(क) मार्टीन लाइट रेलवे (ख) ईस्ट इन्डिया रेल मार्ग

(ग) भारत रेल (घ) बिहार रेल सेवा

8. पटना हवाई अड्डा का क्या नाम है ?

(क) जय प्रकाश अन्तर्राष्ट्रीय हवाई पत्तन

(ख) पटना हवाई अड्डा

(ग) राजेन्द्र प्रसाद अन्तर्राष्ट्रीय हवाई अड्डा

(घ) बिहार हवाई अड्डा

9. ग्रांड ट्रंक रोड का राष्ट्रीय राज मार्ग संख्या क्या है?

(क) 1 (ख) 2

(ग) 3 (घ) 4

10. बिहार में रेल परिवहन का शुभारम्भ कब से माना जाता है ?

(क) 1842 से (ख) 1860 से

(ग) 1858 से (घ) 1862 से

11. मध्य-पूर्व रेलवे का मुख्यालय कहाँ है ?

(क) पटना में (ख) हाजीपुर में

(ग) मुजफ्फरपुर में (घ) समस्तीपुर में

12. बिहार की सीमा में रेलमार्ग की कुल लम्बाई कितनी है ?

(क) 6,283 किमी० (ख) 5,283 किमी०

(ग) 7,283 किमी० (घ) 8500 किमी०

13. बिहार में रज्जू मार्ग कहाँ है?

(क) बिहारशरीफ (ख) राजगीर

(ग) गया (घ) बांका

14. मन्दार हिल किस जिला में स्थित है ?

(क) मुंगेर (ख) भागलपुर

(ग) बांका (घ) बक्सर

15. राष्ट्रीय पोत संस्थान पटना के किस घाट पर स्थित है ?

(क) महेन्द्रू घाट (ख) गाँधी घाट

(ग) रौशा घाट (घ) बांस घाट

लघु उत्तरीय प्रश्न :

1. बिहार में जूट उद्योग पर टिप्पणी लिखिए ।
2. गंगा किनारे स्थित महत्त्वपूर्ण औद्योगिक केन्द्रों का उल्लेख कीजिए ।
3. औद्योगिक विकास हेतु बिआडा के पहल को बताएँ ।
4. नई औद्योगिक नीति के मुख्य बिन्दुओं का वर्णन कीजिए ।
5. जमालपुर में किस चीज का वर्कशाप है, और क्यों प्रसिद्ध है ?
6. राजगीर के औद्योगिक विकास पर अपना विचार प्रकट कीजिए ।
7. मुंगेर में कौन-कौन से उद्योग विकसित है वर्णन कीजिए ।
8. उत्तरी बिहार की अपेक्षा दक्षिणी बिहार में सड़कों का विकास अधिक हुआ है, क्यों ?
9. बिहार में नदियों का परिवहन क्षेत्र में क्या योगदान है?
10. बिहार के प्रमुख हवाई अड्डों का नाम लिखिए और वह कहाँ स्थित हैं ?
11. उत्तरी बिहार के रेल मार्ग की विवेचन कीजिए ।
12. बिहार के जल मार्ग पर अपना विचार प्रस्तुत करें ।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न :

1. बिहार के कृषि आधारित किसी एक उद्योग के विकास एवं वितरण पर प्रकाश डालिए।
2. बिहार में वस्त्र उद्योग पर विस्तार से चर्चा कीजिए।
3. बिहार के प्रमुख सड़क मार्गों के विस्तार एवं विकास पर प्रकाश डालिए।
4. बिहार के रेल अथवा जलमार्ग के सम्बंध में विस्तार से चर्चा कीजिए।

क्रियाकलाप :

1. बिहार के मानचित्र पर G.T. रोड को दर्शाएँ और सड़क के किनारे प्रमुख नगरों एवं प्रसिद्ध स्थानों को अंकित कीजिए।

बिहार : जनसंख्या एवं नगरीकरण

(Bihar : Population And Urbanisation)

बिहार आरम्भ से ही सघन जनसंख्या वाला प्रदेश रहा है, यहाँ 3000 वर्ष पूर्व से ही मानव बसाव के प्रमाण मिलते हैं । मगध साम्राज्य में 80 हजार से भी अधिक गांव आबाद थे। आज भी यह भारत के घने आबाद राज्यों में से एक है, इसका मुख्य कारण यहाँ की भौगोलिक स्थिति है, अर्थात् समतल भूभाग, उपजाऊ मिट्टी, सालो भर जल से भरी नदियाँ एवं सुगम पहुंचने की सुविधा है। वर्तमान समय में यह जनसंख्या आकार की दृष्टि से उत्तर-प्रदेश, महाराष्ट्र के बाद तीसरे स्थान पर है तथा घनत्व की दृष्टि से पश्चिमी बंगाल के बाद दूसरे स्थान पर है। 2011 की जनगणना के अनुसार यहाँ की कुल जनसंख्या 104,099,452 है, इन में 54,278,157 पुरुष और 49,821,295 महिलाएँ हैं, यह जनसंख्या भारत की कुल जनसंख्या का 8.07 प्रतिशत है।

क्या आप जानते हैं?
बिहार भारत के सभी बड़े राज्यों में सबसे कम शहरीकृत राज्य है

केन्द्रीय सांख्यिकी संगठन (CAO) के अनुसार 2007 में बिहार की जनसंख्या बढ़कर 9.31 करोड़ हो गई है। बिहार की दशकीय वृद्धि दर 1991-2001 के दौरान 28.62 प्रतिशत था, जबकि राष्ट्रीय वृद्धि दर 21.11 प्रतिशत है। यहाँ की कुल आबादी का 89.05 प्रतिशत ग्रामीण क्षेत्रों में वास करता है।

बिहार में लिंग अनुपात 919 महिलायें प्रति हजार पुरुष है। यह राष्ट्रीय अनुपात 933 से कम है। जहाँ आबादी आयु संवितरण का सम्बंध है तो बिहार में 0-6 और 7-14 वर्ष आयु समूहों की आबादी में सबसे अधिक प्रतिशत (तालिका-1.6)। इसका मुख्य कारण है ऊँची जन्मदर।

तालिका - 1.6

बिहार की आबादी का आयु समूह वर्गीकरण (2001 की जनगणना)

कुल समूह	कुल	पुरूष	महिला
0-4	13.3	13.0	13.5
5-9	15.4	15.5	15.3
10-14	13.3	13.8	12.8
15-19	8.7	9.3	7.9
20-24	7.6	7.3	7.9
25-29	7.1	6.7	7.6
30-34	6.7	6.3	7.1
35-39	6.1	6.0	6.3
40-44	5.0	5.1	5.9
45-49	4.2	4.1	4.2
50-54	3.3	3.6	2.9
55-59	2.5	2.3	2.7
60-64	2.5	2.6	2.5
65-69	1.6	1.6	1.7
70-74	1.2	1.3	1.2
75-79	0.5	0.5	0.5
80-+	0.7	0.7	0.6
अकथित आयु	0.2	0.0	0.2
समस्त आयु समूह	100.0	100.0	100.0

राज्य की कुल जनसंख्या में 83.23 हिन्दू और 16.53 प्रतिशत मुस्लिम रहते हैं. इसके अलावा यहाँ ईसाई, सिक्ख, बौद्ध और जैन धर्मावलम्बी भी रहते हैं जो तालिका-1.7 से स्पष्ट है।

तालिका - 1.7

धर्म के अनुसार आबादी का वर्गीकरण (2001 की जनगणना)

क्रम०सं०	समुदाय	आबादी	प्रतिशत
1.	हिन्दू	6,9076919	83.23
2.	मुस्लिम	1,3722048	16.53
3.	ईसाई	53137	0.06
4.	सिक्ख	20780	0.02
5.	बौद्ध	18.818	0.02
6.	जैन	16085	0.02
7.	अन्य धार्मिक व्यक्ति	52,905	0.06
8.	अकथित धर्म	37,817	0.05

राष्ट्रीय लोक सहयोग एवं बाल विकास संस्थान (NIPCCD) भारतीय महिलाओं से सम्बंधित अंकित 2007 एवं आर्थिक सर्वेक्षण, बिहार सरकार 2007-08 के अनुसार 2005 में बिहार में जन्म दर 30.4 थी जबकि राष्ट्रीय औसत 23.8 और मृत्यु दर 8.1 थी जो राष्ट्रीय औसत 7.6 था ऊंची जन्म दर के कारण बिहार की वार्षिक जनसंख्या वृद्धि दर 2.23 प्रतिशत है, जबकि राष्ट्रीय औसत 1.63 प्रतिशत है।

जनसंख्या वितरण (Population Distribution) :

बिहार की जनसंख्या वितरण सभी जगह समान रूप से नहीं है। कहीं पर जनसंख्या बहुत अधिक है तो कहीं पर बहुत ही कम। इसका मुख्य कारण यहाँ की आर्थिक, सामाजिक परिवेश और भौतिक विविधता है।

जहाँ भी धरातल समतल जलोढ़ एवं मैदानी हैं वहाँ घनी आबादी है। जहाँ भी सिंचाई की सुविधा, कृषि में नये तकनीक का उपयोग, प्रतिव्यक्ति आय नगरीकरण अधिक है वहाँ और भी आबादी अधिक है। पटना, नालन्दा, मुजफ्फरपुर और भोजपुर जिलों में इन्हीं कारणों से जनसंख्या अधिक है।

क्या आप जानते हैं ?
बिहार में सबसे अधिक जनसंख्या वाला जिला पटना है और पटना नगर भी सर्वाधिक जनसंख्या वाला नगर है।

बिहार में सबसे अधिक जनसंख्या पटना जिला में बसी है, यहाँ राज्य के कुल क्षेत्रफल 3.40 पर 5.68 प्रतिशत जनसंख्या का बोझ है, इसका एक बड़ा कारण पटना महानगर का राज्य की राजधानी होना है, इसके अतिरिक्त नगरीकरण, विकास, प्रशासनिक केन्द्र, वाणिज्यिक, औद्योगिक और पर्यटन की सेवा केन्द्र का स्थित होना है।

गया, मुजफ्फरपुर, पूर्णिया, हाजीपुर, बेतिया, मोतीहारी, छपरा, सिवान, दरभंगा, मधुबनी, सीतामढ़ी और समस्तीपुर जिले में 3.00 से 5.00 प्रतिशत आबादी है, ये जिले बिहार के उच्च आबादी वाले जिले हैं, इन में केवल गया जिला दक्षिणी बिहार में स्थित है, शेष 11 जिले उत्तरी बिहार में अवस्थित है, यह बिहार के कुल क्षेत्रफल का 39 प्रतिशत है और इन जिलों में राज्य की 46 प्रतिशत जनसंख्या संकेन्द्रित है।

मध्यम जनसंख्या वाले जिलों में सुपौल, नवादा, औरंगाबाद, अररिया, गोपालगंज, भोजपुर, बेगुसराय, नालन्दा, कटिहार, भागलपुर, रोहतास, मुंगेर, खगड़िया, कैमूर, किशनगंज, जमुई, बक्सर, सहरसा, जहानाबाद, अरवल, मधेपुरा एवं बाँका सम्मिलित है, इन जिलों की जनसंख्या 1.00-2.99 प्रतिशत है, इस क्षेत्र में राज्य के 54.85 प्रतिशत क्षेत्रफल पर 45.84 प्रतिशत जनसंख्या का निवास है। यहाँ कृषि से सम्बन्धित कार्यों और नगर पुंजों के विस्तार के कारण साकारात्मक जनसंख्या का केन्द्रित है।

शिवहर, शेखपुरा, लक्खीसराय जिलों में जनसंख्या का प्रतिशत 1.00 से भी कम (0.60 से 0.97 के बीच) है, इन तीन में राज्य के क्षेत्रफल के मात्र 2.48 प्रतिशत में 2.22 प्रतिशत आबादी रहती है। इन जिलों में कृषि के पिछड़ापन एवं कम क्षेत्रफल होने के कारण जनसंख्या का संकेद्रण कम है।

उत्तरी बिहार अपेक्षाकृत गहन जनसंख्या वाला क्षेत्र है, जहाँ राज्य के कुल क्षेत्रफल के 43.80 प्रतिशत पर 63.42 प्रतिशत जनसंख्या संकेंद्रण है। इसके विपरीत दक्षिणी बिहार में 56.20 प्रतिशत क्षेत्रफल पर राज्य की 36.58 प्रतिशत जनसंख्या केन्द्रित है।

BIHAR
DENSITY OF POPULATION

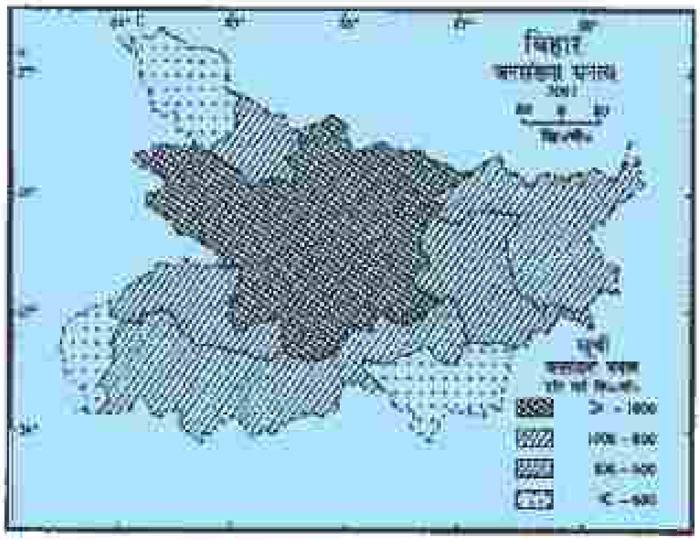

जनसंख्या घनत्व (Population Density) :

2001 की जनसंख्या के अनुसार बिहार में प्रतिवर्ग किलोमीटर घनत्व 881 व्यक्ति है। सबसे अधिक घनत्व पटना जिला में है जहाँ प्रतिवर्ग किलोमीटर 1,471 व्यक्ति निवास करते हैं। इसके बाद दरभंगा और वैशाली का स्थान आता है, जहाँ क्रमशः 1,342 और 1,332 व्यक्ति प्रतिवर्ग किलोमीटर रहते हैं। चौथे स्थान पर बेगुसराय जिला है यहाँ प्रतिवर्ग किलोमीटर 1,222 व्यक्ति प्रतिवर्ग किलोमीटर है।

यहाँ के विभिन्न जिलों की जनसंख्या घनत्व बहुत ही असमान है। इस असमान घनत्व के आधार पर बिहार को निम्नलिखित पाँच वर्गों में बाँट सकते हैं।

1. अत्यधिक घनत्व वाले जिले- जिन जिलों का घनत्व 1200 व्यक्ति, वर्ग किलोमीटर है उसे इस वर्ग में रखा गया है। पटना, दरभंगा, वैशाली, बेगुसराय, सीतामढ़ी, सारण सीवान आदि

इसके अन्तर्गत आते हैं। इन जिलों में राज्य की 17.50 प्रतिशत भूमि पर 28.17 प्रतिशत आबादी रहती है।

2. उच्च घनत्व के जिले- इसके अर्न्तगत वे जिले आते हैं, जहाँ औसत घनत्व 1000–1200 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर के बीच है। मुजफ्फरपुर, समस्तीपुर, गोपालगंज, मधुबनी तथा नालन्दा जिले इस वर्ग के अन्तर्गत आते हैं। राज्य के इन छः जिलों में 14.41 प्रतिशत भूमि पर बिहार की कुल जनसंख्या का 19.25 प्रतिशत जनसंख्या निवास करती है। इस समूह में नालन्दा जिला को छोड़कर सभी जिले उत्तरी बिहार में स्थित हैं।

3. मध्यम घनत्व के जिले- इसके अंतर्गत 1000–800 व्यक्ति प्रतिवर्ग किलोमीटर लोग रहते हैं। पूर्वी चम्पारण, भागलपुर, जहानाबाद, अरवल, भोजपुर, सहरसा, खगड़िया, मधेपुरा, बक्सर, और मुंगेर जिले इस वर्ग में सम्मिलित हैं। इन जिलों में राज्य की 24 प्रतिशत से अधिक भूमि और राज्य की कुल जनसंख्या की 18 प्रतिशत आबादी आवास करती हैं।

4. कम घनत्व के जिले- इस वर्ग के अन्तर्गत पूर्णिया, कटिहार, अररिया, नवादा, शेखपुरा, सुपौल, गया, किशनगंज, लक्खीसराय, रोहतास और औरंगाबाद जिले आते हैं। इन जिलों में औसत घनत्व 600 800 व्यक्ति प्रति वर्ग कि०मी० है। इन जिलों में राज्य की लगभग 30 प्रतिशत भूमि पर 26 प्रतिशत आबादी का वास है।

5. अत्यन्त कम घनत्व वाले जिले- इस वर्ग में वे जिले आते हैं जिनकी आबादी 600 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर से कम है। इस वर्ग के अन्तर्गत पश्चिमी चम्पारण, बाँका जमुई और कैमूर जिला है, जिसका घनत्व 382 व्यक्ति प्रतिवर्ग किलोमीटर है। इन जिलों में राज्य की भूमि का 14.58 प्रतिशत एवं कुल जनसंख्या का लगभग 9 प्रतिशत भाग निवास करते हैं।

नगरों का विकास :

बिहार में नगरों के विकास का इतिहास बहुत पुराना है यहाँ के अधिकतर प्रमुख नगर किसी न किसी नदी तट पर विकसित हैं। यहाँ के प्राचीन नगरों का विकास राजधानी, शिक्षा, धार्मिक एवं व्यापारिक केन्द्र के रूप में हुआ है। इनमें पाटलीपुत्र, नालन्दा, राजगीर, गया, वैशाली, बोधगया, उदवंतपुरी, सीतामढ़ी आदि प्राचीन नगरों के उदाहरण हैं। मध्यकाल में भी यहाँ नगरों का विकास एवं सड़कों के विकास प्रशासनिक कारणों से हुआ था। ऐसे नगरों में सासाराम, दरभंगा, पूर्णिया,

छपरा, सिवान आदि आते है। अंग्रेजों के समय में बिहार में कुछ बदलाव आया रेल और सड़क मार्गों का विकास हुआ जिसके कारण सड़कों के किनारे नगर विकसित होने लगे। कुछ नगरों का विकास इस समय रेल व्यवस्था के कारण हुआ। आजादी के बाद यहाँ नगरों के विकास में तेजी आयी राज्य में औद्योगिक विकास स्वास्थ्य, शिक्षा एवं जीवन की मौलिक सुविधाओं के विकास के कारण कई नये नगर भी विकसित हुए। इनमें बरौनी, हाजीपुर, दानापुर, डालमिया नगर, मुंगेर, जमालपुर, कटिहार आदि हैं। किन्तु आज के बिहार में नगरों का विकास भारत के बड़े राज्यों की तुलना में बहुत ही कम हुआ है, यह सबसे कम शहरीकृत राज्य है। यहाँ की नगरीय आबादी (2001 की जनगणना के अनुसार) मात्र 10.5 प्रतिशत है, जब कि भारत की नगरीय जनसंख्या 27.78 प्रतिशत है। वर्तमान में बिहार में एक लाख से अधिक जनसंख्या वाले नगरों की संख्या मात्र 19 है। दस लाख से ऊपर आबादी वाले महानगर में केवल पटना नगर अंकित है। 2001 की जनगणना के अनुसार कुल नगरीय बस्तियों की संख्या 131 है।

बिहार के नगरों का कार्यात्मक स्वरूप इनकी उत्पत्ति से सम्बंधित है। यहाँ के पुराने नगर प्रशासन तथा व्यापार से जुड़े थे। परन्तु आधुनिक नगर, उद्योग, यातायात, व्यापार एवं शिक्षा से सम्बंधित है। यहाँ के लगभग सभी जिला मुख्यालय शुरू से ही प्रशासनिक कार्य के साथ-साथ थोक व्यवसाय, शिक्षा तथा स्वास्थ्य जैसे नगरीय कार्यों से विकसित हैं। यहाँ के मैदानी भागों के अधिकतर नगर सेवा ऐसे कार्यों से संबंधित हैं। बिहार में कुछ चुने हुऐ नगरों में ही औद्योगिक इकाइयाँ स्थापित हैं। इन में डालमियानगर, मुंगेर बरौनी, जमालपुर, कटिहार, प्रमुख हैं।

बिहार विभाजन से पूर्व टाटा नगर इस राज्य का मात्र नियोजित नगर था, जमशेदजी टाटा ने केवल बिहार को बल्कि भारत को आधुनिक नगर नियोजन से सर्वप्रथम परिचय कराया। किन्तु विभाजन के उपरांत बिहार में एक भी नियोजित नगर विकसित नहीं है । प्राचीन काल से प्रसिद्ध पटना नगर भी आंशिक रूप से ही नियोजित नगर के रूप में विकसित हुआ है। यह नगर बिहार की राजधानी है । बिहार के अधिकतर नगर अनियोजित एवं अव्यवस्थित हैं । कुछ नियोजित नगरों में बरौनी तथा बाल्मिकी नगर को रखा जा सकता है ।

अभ्यास

वस्तुनिष्ठ प्रश्न :-

1. 2001 में बिहार की कुल जनसंख्या थी-
   (क) 8 करोड़ से कम (ख) 9 करोड़ से अधिक
   (ग) 8 करोड़ से अधिक (घ) इनमें से कोई नहीं
2. 1991-2001 के दौरान बिहार की जनसंख्या वृद्धि दर है।
   (क) 30 प्रतिशत (ख) 28 प्रतिशत
   (ग) 28.63 प्रतिशत (घ) इनमें से कोई नहीं।
3. बिहार में ग्रामीण आबादी है-
   (क) 89.5 प्रतिशत (ख) 79.5 प्रतिशत
   (ग) 99.5 प्रतिशत (घ) शून्य प्रतिशत
4. 2001 की जनगणना के अनुसार बिहार में प्रतिवर्ग किलोमीटर कितने व्यक्ति रहते है?
   (क) 772 व्यक्ति (ख) 881 व्यक्ति
   (ग) 981 व्यक्ति (घ) 781 व्यक्ति
5. सबसे अधिक आबादी वाला कौन जिला है?
   (क) भागलपुर (ख) पटना
   (ग) नालन्दा (घ) मुंगेर
6. सासाराम नगर का विकास हुआ था-
   (क) मध्ययुग में (ख) प्राचीन युग में
   (ग) वर्तमान युग में (घ) आधुनिक समय में
7. अविभाजित बिहार में एक मात्र नियोजित नगर था-
   (क) पटना (ख) मुंगेर
   (ग) टाटानगर (घ) गया

8. 2001 की जनगणना के अनुसार बिहार की नगरीय आबादी है-

(क) 20.5 प्रतिशत (ख) 15.5 प्रतिशत

(ग) 10.5 प्रतिशत (घ) 25.5 प्रतिशत

9. बिहार का सबसे बड़ा नगर कौन है?

(क) पटना (ख) गया

(ग) भागलपुर (घ) दरभंगा

लघु उत्तरीय प्रश्न :

1. बिहार के अत्यधिक घनत्व वाले जिले का नाम लिखिए।
2. बिहार में अत्यन्त कम घनत्व वाले जिले कौन-कौन हैं।
3. बिहार की जनसंख्या आकार को बताइये।
4. बिहार की जनसंख्या सभी जगह एक समान नहीं है। स्पष्ट कीजिए।
5. मध्ययुग में बिहार में नगरों का विकास किस प्रकार हुआ।
6. दो प्राचीन एवं दो आधुनिक नगरों का नाम लिखिए।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न :

1. बिहार की जनसंख्या घनत्व पर विस्तार से चर्चा कीजिए।
2. बिहार में नगर विकास पर एक विश्लेषण प्रस्तुत कीजिए।

इकाई-6

मानचित्र अध्ययन

उच्चावच निरूपण

आप सभी जानते हैं कि पृथ्वी पर विभिन्न प्रकार की भू-आकृतियाँ पायी जाती हैं। इनमें से कुछ भू-आकृतियों के नाम आप जानते हैं। इनमें शंक्वाकार पहाड़ी, पठार, 'V' आकार की घाटी, जलप्रपात, झील इत्यादि प्रमुख हैं। इन आकृतियों का मानचित्र पर निरूपण ही उच्चावच निरूपण कहलाता है। दूसरे शब्दों में-उच्चावच निरूपण का तात्पर्य मानचित्रण की वह विधि है, जिसके द्वारा धरातल पर पायी जानेवाली त्रिविमीय आकृति का समतल सतह पर प्रदर्शन किया जाता है।

पृथ्वी पर पायी जानेवाली सभी भू आकृतियों में लंबाई, चौड़ाई एवं ऊँचाई होती है जिसके कारण वे त्रिआयामी होते हैं। इन भू आकृतियों को समतल सतह पर द्विआयामी रूप में प्रदर्शित किया जाता रहा है। अतः मानचित्र पर इन त्रिआयामी स्वरूपों को प्रदर्शित करने के लिए समय-समय पर अनेक विधियों का विकास किया गया है।

उच्चावच प्रदर्शन की विधियाँ :

धरातल पर पायी जानेवाली उच्चावच को प्रदर्शित करने के लिए विकसित की गई विधियों में से कुछ प्रमुख का विवरण यहाँ दिया जा रहा है

1. हैश्यूर विधि :

इस विधि का विकास ऑस्ट्रिया के एक सैन्य अधिकारी लेहमान ने किया था। उच्चावच-निरूपण के लिए इस विधि के अंतर्गत मानचित्र में छोटी, महीन एवं खंडित रेखाएँ खींची जाती हैं। ये रेखाएँ ढाल की दिशा अथवा जल बहने की दिशा में खींची जाती हैं। फलतः अधिक

या तीव्र ढाल वाले भागों के पास-पास इन रेखाओं को मोटी एवं गहरी कर दिया जाता है । जबकि, मंद ढालों के लिए ये रेखाएँ पतली एवं दूर-दूर बनाई जाती हैं। समतल क्षेत्र को खाली छोड़ दिया जाता है। ऐसी स्थिति में धरातल का जो भाग जितना अधिक ढालुवाँ होता है, हैश्यूर विधि के मानचित्र पर वह भाग उतना ही अधिक काला दिखाई देता है। इस विधि से मानचित्र काफी आकर्षक एवं सजीव दिखता है, तथा इससे ढाल प्रवणता का सही-सही ज्ञान हो पाता है। परंतु इस विधि से उच्चावच प्रदर्शित करने में काफी समय एवं मेहनत लगता है।

चित्र-6.1 : हैश्यूर

2. पर्वतीय छायाकरण :

इस विधि के अंतर्गत उच्चावच-प्रदर्शन के लिए भू-आकृतियों पर उत्तर पश्चिम कोने पर ऊपर से प्रकाश पड़ने की कल्पना की जाती है। इसके कारण अंधेरे में पड़ने वाले हिस्से को या ढाल को गहरी आभा से भर देते हैं जबकि प्रकाश वाले हिस्से या कम ढाल को हल्की आभा से (या छोड़) भर देते हैं या फिर खाली भी छोड़ सकते हैं ।

चित्र-6.2 : पर्वतीय छायाकरण

इस विधि से पर्वतीय देशों के उच्चावच को प्रभावशाली ढंग से दिखाना संभव होता है परन्तु इन मानचित्रों से भी ढाल की मात्रा का सही ज्ञान नहीं हो पाता है।

3. तल चिन्ह :

वास्तविक सर्वेक्षण के द्वारा भवनों, पुलों, खंभों, पत्थरों जैसे स्थाई वस्तुओं पर समुद्र तल से मापी गई ऊँचाई को प्रदर्शित करने वाले चिह्न को तल चिह्न (Bench Mark) कहा जाता है। मानचित्र पर ऐसे ऊँचाई को प्रदर्शित करने के लिए ऊँचाई फीट अथवा मीटर किसी एक इकाई में लिखा जाता है।

4. स्थानिक ऊँचाई :

तल चिह्न की सहायता से किसी स्थान विशेष की मापी गई ऊँचाई को स्थानिक ऊँचाई (Spot Height) कहा जाता है। इस विधि में बिंदुओं के द्वारा मानचित्र में विभिन्न स्थानों की ऊँचाई संख्या में लिख दिया जाता है।

5. त्रिकोणमितीय स्टेशन :

त्रिकोणमितीय स्टेशन का संबंध उन बिंदुओं से है जिनका उपयोग त्रिभुजन विधि (एक प्रकार का सर्वेक्षण) द्वारा सर्वेक्षण करते समय स्टेशन के रूप में हुआ था। मानचित्र पर त्रिभुज बनाकर उसके बगल में धरातल की समुद्र तल से ऊँचाई लिख दी जाती है।

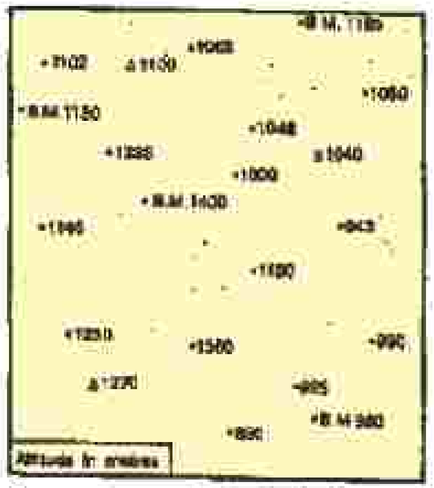

चित्र-6.3 : स्थानिक ऊँचाईयाँ, तल चिह्न तथा त्रिकोणमितीय स्टेशन

6. स्तर रंजन :

रंगीन मानचित्रों में रंगों की विभिन्न आभाओं के द्वारा उच्चावच प्रदर्शन का एक मानक निश्चित किया गया है। एटलस एवं दीवार मानचित्रों में इस विधि का उपयोग आपने अवश्य ही देखा होगा। ऊँचाई में वृद्धि के अनुसार रंगों की आभाएँ हल्की होती जाती हैं। इनमें समुद्र या जलीय भाग को नीले रंग से दिखाया जाता है। मैदान को हरा रंग से तथा पर्वतों को बादामी हल्का कत्थई रंग से दिखाया जाता है। जबकि बर्फीले क्षेत्र को सफेद रंग से दिखाया जाता है।

7. समोच्च रेखाएँ :

समोच्च रेखाओं की सहायता से उच्चावच प्रदर्शन की विधि को सर्वश्रेष्ठ माना गया है। यह एक मानक विधि है। वस्तुतः समोच्च रेखाएँ भूतल पर समुद्र जल तल से एक समान ऊँचाई वाले बिंदुओं / स्थानों को मिलाकर मानचित्र पर खींची जानेवाली काल्पनिक रेखाएँ हैं। इन रेखाओं को क्षेत्र में सम्पन्न किए गए वास्तविक सर्वेक्षण के आधार पर खींचा जाता है। मानचित्र में प्रत्येक

समोच्च रेखा के साथ उसकी ऊँचाई का मान लिख दिया जाता है। मानचित्र पर इन समोच्च रेखाओं को बादामी रंग से दिखाया जाता है।

विभिन्न प्रकार के उच्चावच को प्रदर्शित करने के लिए समोच्च रेखाओं के खींचने या बनाने का प्रारूप अलग-अलग होता है। एक समान ढाल को दिखाने के लिए समोच्च रेखाओं को समान दूरी पर खींचा जाता है। खड़ी ढाल को दिखाने के लिए समोच्च रेखाएँ पास-पास बनाई जाती हैं। जबकि मंद ढाल के लिए इन रेखाओं को दूर-दूर बनाया जाता है। जब किसी मानचित्र में अधिक ऊँचाई (मान) की समोच्च रेखाएँ पास-पास तथा कम ऊँचाई की समोच्च रेखाएँ दूर-दूर बनी होती हैं तब यह समझना चाहिए कि इन समोच्च रेखाओं का समूह अवतल ढाल का प्रदर्शन कर रहा है। इसके विपरीत स्थिति उत्तल ढाल का प्रतिनिधित्व करती है। सीढ़ीनुमा ढाल के लिए दो-दो समोच्च रेखाएँ अंतराल खींची जाती हैं। इसी तरह अन्य अनेक भूआकृतियों को मानचित्र पर समोच्च रेखाओं द्वारा दिखाया जाता है।

समोच्च रेखाओं पर विभिन्न भू-आकृतियों का प्रदर्शन :

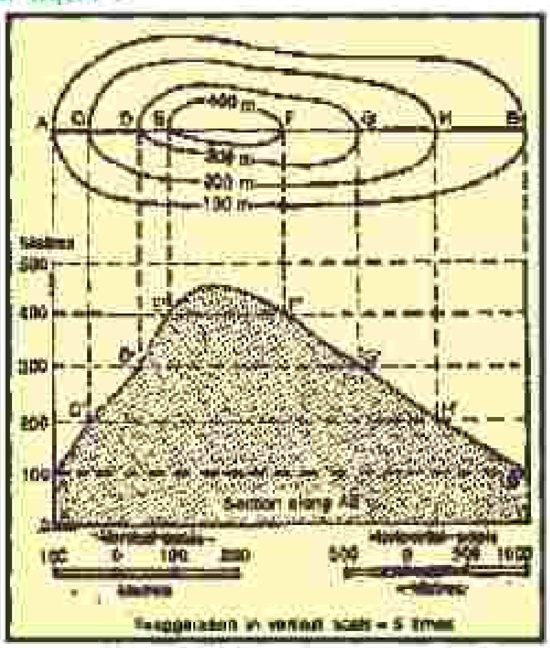

चित्र-6.4

समोच्च रेखाओं की सहायता से भू-आकृतियों को प्रदर्शित करने के लिए उन आकृतियों की जानकारी होनी चाहिए क्योंकि भू-आकृतियों के अनुरूप ही समोच्च रेखाओं का प्रारूप बनता है तथा उन समोच्च रेखाओं पर संख्यात्मक मान (ऊँचाई के अनुसार) बैठाया जाता है। उदाहरण के लिए, यदि आप वृत्ताकार प्रारूप में आठ-दस समोच्च रेखाएँ खींचते हैं तब इससे दो भू-आकृतियाँ दिखाई जा सकती हैं। पहला शंक्वाकार पहाड़ी एवं दूसरा झील। परंतु इन दोनों भू- आकृतियों में समोच्च रेखाओं का मान ऊँचाई के अनुसार

अलग अलग होता है। शंक्वाकार पहाड़ी के लिए बनाए जाने वाले समोच्च रेखाओं का मान बाहर से अंदर की ओर बढ़ता हुआ होता है, यानि अधिक ऊँचाई वाली समोच्च रेखा अन्दर की ओर होती है। दूसरी ओर झील आकृति दिखाने के लिए समोच्च रेखाओं में बाहर की ओर अधिक मान वाली तथा अंदर की ओर कम मानवाली समोच्च रेखाएँ होती हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि समोच्च रेखाओं पर भू-आकृति प्रदर्शित करते समय उन रेखाओं के मान अच्छी तरह समझकर लिखने चाहिए। समोच्च रेखीय मानचित्र पर अनुभाग रेखा खींचने के बाद पार्श्वचित्र बनाया जाता है। इस पार्श्वचित्र की सहायता से संबंधित भू-आकृतियों को स्पष्टः समझा जा सकता है।

पर्वत :

पर्वत स्थल पर पाई जानेवाली वह आकृति है जिसका आधार काफी चौड़ा एवं शिखर काफी पतला अथवा नुकीला होता है। आसपास की स्थलाकृति से यह पर्याप्त ऊँची उठी हुई होती है। इसका रूप शंक्वाकार या शंकुनुमा होता है। ज्वालामुखी से निर्मित पहाड़ी, शंकु-आकृति की होती है। शंक्वाकार पहाड़ी की समोच्च रेखाओं को लगभग वृत्ताकार रूप में बनाया जाता है। बाहर से अन्दर की ओर वृत्तों का आकार छोटा होता जाता है। बीच में सर्वाधिक ऊँचाई वाला वृत्त होता है। बाहर से अंदर की ओर सर्वोच्च रेखाओं का मान क्रमशः बढ़ता जाता है।

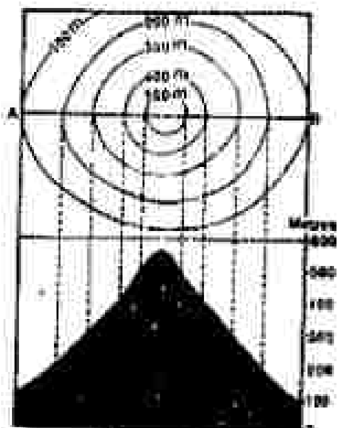

चित्र-6.5 : शंक्वाकार पहाड़ी/पर्वत

पठार :

पठार धरातल पर पायी जानेवाली ऐसी आकृति है जिसका आधार और शिखर दोनों चौड़ा एवं विस्तृत होता है। परंतु इसका विस्तृत शिखर उबड़-खाबड़ होता है। परिणामस्वरूप, पठारी भाग को दिखाने के लिए समोच्च रेखाओं को लगभग लंबाकार आकृति में बनाते हैं। प्रत्येक समोच्च रेखा बंद आकृति में बनाया जाता है। इसका मध्यवर्ती समोच्च रेखा भी पर्याप्त चौड़ा बनाया जाता है।

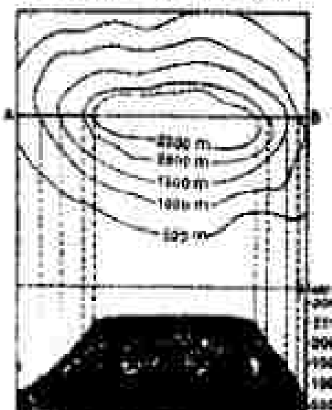

चित्र-6.5 : पठार

जलप्रपात :

जब किसी नदी का जल अपनी घाटी से गुजरने के दौरान ऊपर से नीचे की ओर तीव्र ढाल पर अकस्मात गिरती है तब इसे जलप्रपात कहा जाता है। इस आकृति को दिखाने के लिए खड़ी ढाल के पास कई समोच्च रेखाओं को एक स्थान पर मिला दिया जाता है। तथा शेष रेखाओं को ढाल के अनुरूप बनाया जाता है।

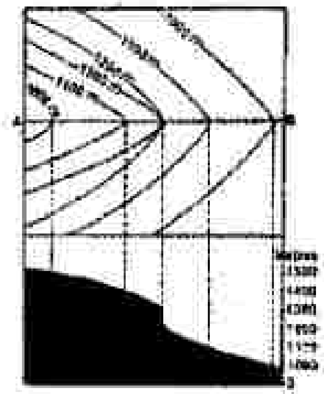

चित्र-6.7 : जलप्रपात

'V' आकार की घाटी :

इस प्रकार की घाटी का निर्माण नदी द्वारा किया जाता है। खड़ी 'V' आकार की घाटी का निर्माण नदी द्वारा उसके युवावस्था में किया जाता है। इस आकृति को प्रदर्शित करने के लिए समोच्च रेखाओं को अंग्रेजी के 'V' अक्षर की उल्टी आकृति बनाई जाती है। जिसमें समोच्च रेखाओं का मान बाहर से अंदर की ओर क्रमशः घटता जाता है।

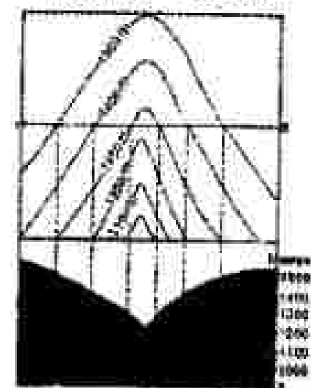

चित्र-6.8 : घाटी

अभ्यास-प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न :-

1. उच्चावच प्रदर्शन के लिए हैश्यूर विधि का विकास किसने किया था?

   (क) गुटेनबर्ग (ख) लेहमान

   (ग) गिगर (घ) रिटर

2. पर्वतीय छायाकरण विधि में भू-आकृतियों पर किस दिशा से प्रकाश पड़ने की कल्पना की जाती है?

   (क) उत्तर-पूर्व (ख) पूर्व-दक्षिण

   (ग) उत्तर-पश्चिम (घ) दक्षिण-पश्चिम

3. छोटी, महीन एवं खंडित रेखाओं को ढाल की दिशा में खींचकर उच्चावच प्रदर्शन की विधि को क्या कहा जाता है?

   (क) स्तर रंजन (ख) पर्वतीय छायाकरण

   (ग) हैश्यूर (घ) तल चिह्न

4. तल चिह्न की सहायता से किसी स्थान विशेष की मापी गई ऊँचाई को क्या कहा जाता है?

   (क) स्थानिक ऊँचाई (ख) विशेष ऊँचाई

   (ग) समोच्च रेखा (घ) त्रिकोणमितीय स्टेशन

5. स्तर रंजन विधि के अंतर्गत मानचित्रों में नीले रंग से किस भाग को दिखाया जाता है?

   (क) पर्वत (ख) पठार

   (ग) मैदान (घ) जल

लघु उत्तरीय प्रश्न :

1. हैश्यूर विधि तथा पर्वतीय छायाकरण विधि में अंतर स्पष्ट कीजिए।
2. तल चिह्न और स्थानिक ऊँचाई क्या है?
3. समोच्च रेखा से आप क्या समझते हैं?
4. स्तर रंजन क्या है?
5. समोच्च रेखाओं द्वारा शंक्वाकार पहाड़ी का प्रदर्शन किस प्रकार किया जाता है?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न :

1. उच्चावच प्रदर्शन की प्रमुख विधियों का उल्लेख कीजिए।
2. समोच्च रेखा क्या है? इसके द्वारा विभिन्न प्रकार के ढालों का प्रदर्शन किस प्रकार किया जाता है?

खण्ड (ख)

इकाई : 1

प्राकृतिक आपदा : एक परिचय

आपने नौवीं कक्षा में उन आपदाओं का अध्ययन किया है जो मानवीय गलतियों के कारण घटित होती हैं। आपने उसके प्रबंधन का काफी ज्ञान भी हासिल किया है। लेकिन आप इस भ्रम में न रहें कि आपदाओं के लिए सिर्फ मनुष्य ही जिम्मेदार है। सच तो यह है कि कई भयावह आपदाओं की स्थिति में मनुष्य निःसहाय होता है। उसका कारण प्रकृति होती है। प्राकृतिक व्यवस्था में जब कई कारणों से अकारण व्यवधान उत्पन्न होते हैं, तो वे व्यवधान ही प्रकृति जनित आपदा के रूप में हमारे सामने उपस्थित होते हैं। इन्हीं आपदाओं की जानकारी आपको दसवीं कक्षा में दी जायेगी।

क्या आप जानते हैं कि सुनामी क्या है?
जब समुद्र की तली पर उत्पन्न भूकम्पीय तरंगों के कारण लहरदार होकर तट से टकराता है तो तट के ओर जल कई मीटर की ऊँचाई तक उछाल लेकर तटीय क्षेत्र में तबाही मचाते हैं। इसे ही सुनामी कहा जाता है।
तुम यह भी जानते होगे कि जब किसी नदी का जल-स्तर औसत प्रवाह से ऊपर उठकर आसपास के क्षेत्रों में फैल जाता है तो उस परिस्थिति को ही बाढ़ कहते हैं।

प्राकृतिक आपदाओं में बाढ़, सूखाड़, भूकंप और सुनामी अति विनाशकारी हैं। इसके अतिरिक्त चक्रवात, ओलावृष्टि, हिमस्खलन, भूस्खलन जैसी घटनाएँ भी प्राकृतिक आपदा के ही अंग हैं लेकिन बाढ़, सूखाड़, भूकंप और सुनामी के बड़े स्तर पर प्रभाव के कारण ही इनके कारणों की समीक्षा के साथ परिणाम और प्रबंधन का अध्ययन दसवीं वर्ग में प्रस्तुत किया जा रहा है।

क्या आपने कभी भूकंप अनुभव किया है ? यदि नहीं किया है, तो यह जान लें कि पृथ्वी में जब भी कोई कंपन होती है तो वही भूकंप कहलाता है इसका मापन रिक्टर स्केल के द्वारा होता है।

जब औसत वार्षिक वर्षा की मात्रा में 25 प्रतिशत से अधिक की कमी आ जाती है तो उसे सुखाड़ की स्थिति माना जाता है। सामान्यता 50 से० मी० से कम वर्षा वाले क्षेत्रों में प्राय: प्रतिवर्ष सूखाड़ की स्थिति उत्पन्न होती है ।

अपने माता-पिता या दादी से पूछ सकते हो कि उन्होंने कोई प्राकृतिक आपदा झेली है अथवा नहीं ? आप स्वयं पिछले वर्ष (2008) समाचारपत्रों, टेलीविजन में देखे होंगे कि कोसी नदी की बाढ़ ने किस प्रकार लोग को दहला कर रख दिया था । कोसी नदी की धारा ही बदल गई, बिहार के लोगों के लिए यह कोई नई घटना नहीं है। कोसी की इसी विनाशलीला के कारण इसे 'बिहार का शोक' (Sorrow of Bihar) भी कहा जाता है ।

इस वर्ष (2009) बिहार सहित देश के अनेक भागों में वर्षा की मात्रा कम होने के कारण सुखाड़ की स्थिति उत्पन्न हो गई है । बाढ़ और सूखा तो बिहार के लोगों के लिए एक स्थाई त्रासदी है ।

यदि आप अपने दादा -दादी से बात करेंगे तो वह 1934 की भूकंप की याद दिलाते हैं। बिहार के कई भागों में जमीन के फटने की घटना हुई थी, सैकड़ों लोग मौत के शिकार हुए हैं । हजारों लोग बेघर हो गये । समुद्र तट से दूर होने के कारण बिहार में सुनामी का तो प्रकोप नहीं है लेकिन चक्रवातीय प्रभाव से लगभग प्रतिवर्ष बिहार में जान और माल की भारी बर्बादी होती है ।

भारत के पर्वतीय क्षेत्रों में भू-स्खलन और मृदा – स्खलन जैसी घटनायें अक्सर होती हैं। जम्मू कश्मीर, हिमाचल प्रदेश एवं उत्तराखंड इससे सर्वाधिक ग्रसित रहते हैं । हिमालय प्रदेश में विकास कार्यों में लगातार हो रही वृद्धि तीव्र ढाल पर अवस्थित चट्टानों को कमजोर बना देती है और उन्हीं चट्टानों के टूटने से भू-स्खलन जैसी समस्या उत्पन्न होती है । हिम स्खलन की समस्या अत्यंत ऊँचे पर्वतीय क्षेत्रों में घटती है । मैदानी भारत के लोगों के लिए और विशेषकर बिहार के लोगों के लिए यह कोई प्राकृतिक आपदा नहीं है । लेकिन भारत के पर्वतीय राज्यों के लिए यह एक गंभीर आपदा है ।

प्राकृतिक आपदा प्रबंधन

आपदा कोई भी हो उसका प्रबंधन अनिवार्य है। आपदा से न सिर्फ विकास कार्य अवरूद्ध होते हैं वरन् विकास कार्यों में कई व्यवधान भी उत्पन्न होते हैं। यद्यपि राष्ट्रीय स्तर तथा राज्य मुख्यालय स्तर पर आपदा प्रबंधन की व्यवस्था की गई है, लेकिन इन व्यवस्थाओं के असफल होने से नवीन प्रकार की समस्यायें उत्पन्न हो सकती हैं।

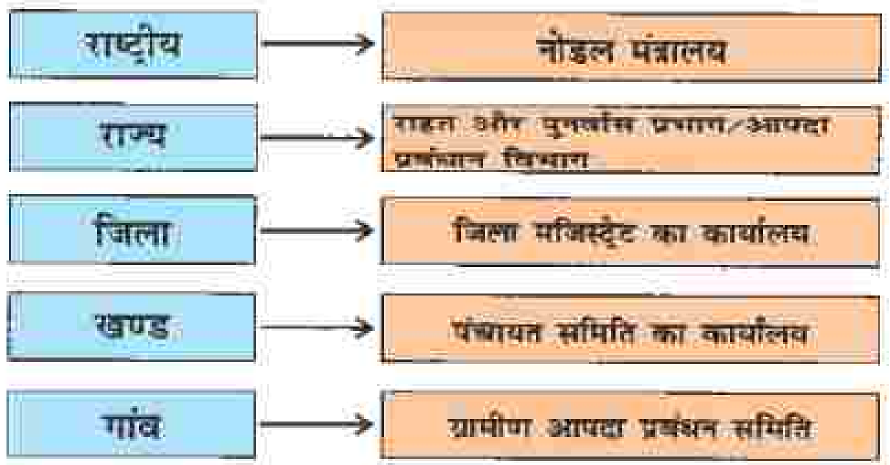

उत्तर बिहार के लोग और विशेषकर कोसी प्रदेश के लोग परंपरागत रूप से बाढ़ नियंत्रण में दक्ष होते हैं, उन्होंने अनादि काल से बाढ़ के अनुरूप जीवनशैली बना ली है।

सुखाड़ के प्रबंधन हेतु भी आम लोगों के सहयोग से कार्य करना आवश्यक होता है। सामूहिक प्रयास से ही कुँयें की खुदाई हो सकती है। सामूहिक रूप से ही तालाब की खुदाई और रोजगार के नये क्षेत्र तलाशे जा सकते हैं।

भूकंप और सुनामी भी भारत के लिए बड़ी चुनौती है। भूकंप के प्रबंधन हेतु नये तकनीक आधारित भवन निर्माण का कार्य किया गया है। भूकंप निरोधी भवनों के निर्माण में वृत्ताकार या बहुभुजीय आकृति के बदले आयताकार अथवा वर्गाकार भवन आकृति को

प्राथमिकता दी गई है । इसी प्रकार से तटीय भारत में सुनामी की चेतावनी और प्रबंधन के लिए विशेष कार्य किये गये हैं ।

भारत के विनाशकारी चक्रवात	**– 29 अक्टूबर 1999**
भारत के विनाशकारी भूकंप	**– 1934**
भारत के प्रमुख सुखाड़ वर्ष	**– 1966**
भारत के प्रमुख सुनामी	**– 26 दिसंबर, 2004**

2002 में भारत के पूर्वी तट तथा अंडमान और निकोबार द्वीप समूह में सुनामी से भारी बर्बादी हुई थी । इसी तथ्य को ध्यान में रखकर चक्रवात तथा सुनामी प्रभाव को कम करने की नीति आवश्यक है ।

कोई भी प्रबंधन कार्य तब तक सफल नहीं हो सकता है जब तक कि उसमें आमलोगों की सहभागिता नहीं होती है। आमलोगों की सहभागिता तथा पंचायत की मदद से ठोस प्रशासनिक निर्णय लिये जा सकते हैं और ये निर्णय ही दीर्घकाल में प्रबंधन हेतु आवश्यक होते हैं ।

इस का मूल उद्देश्य यह है कि आपको अपने आसपास घटनेवाली किसी भी संभावित खतरे का पूर्व जानकारी हो । पूर्वानुमान अथवा पूर्व जानकारी से विनाश को कम किया जा सकता है और इस अध्याय के अध्ययन का यही मूल उद्देश्य है ।

अभ्यास

वस्तुनिष्ठ प्रश्न :-

1. इनमें से कौन प्राकृति आपदा नहीं है?

   (क) सुनामी (ख) बाढ़

   (ग) आतंकवाद (घ) भूकंप

2. इनमें से कौन मानवजनित आपदा है?

   (क) सांम्प्रदायिक दंगे (ख) आतंकवाद

   (ग) महामारी (घ) उपर्युक्त सभी

3. सुनामी का प्रमुख कारण क्या है?

   (क) समुद्र में भूकंप का आना (ख) स्थलीय क्षेत्र पर भूकंप का आना

   (ग) द्वीप पर भूकंप का आना (घ) इनमें से कोई नहीं ।

लघु उत्तरीय प्रश्न :

1. आपदा से आप क्या समझते हैं ?
2. आपदा कितने प्रकार का होता है ?
3. आपदा प्रबंधन की आवश्यकता क्यों है?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न :

1. प्राकृतिक आपदा एवं मानव जनित आपदा में अंतर सही उदाहरणों के साथ प्रस्तुत कीजिए ।
2. आपदा प्रबंधन की संकल्पना को स्पष्ट करते हुए आपदा प्रबंधन की आवश्यकता, अनिवार्यता का वर्णन कीजिए ।

इकाई : 2

प्राकृतिक आपदा एवं प्रबंधन : बाढ़ और सुखाड़

आप अक्सर यह सुनते होंगे तथा टेलिविजन और समाचार पत्रों से जानकारी मिलती होगी कि देश के किसी भाग में बाढ़ की स्थिति है तो कहीं सुखाड़ की स्थिति है । बाढ़ और सुखाड़ वे प्राकृतिक आपदाएँ हैं जिनका संबंध वर्षा से है । जब मॉनसूनी वर्षा अत्यधिक होती है तो नदियों के जलस्तर में उफान आ जाता है और बाढ़ की स्थिति उत्पन्न होती है । लेकिन जब वर्षा ऋतु में आसमान से बादल गायब हो जाता है, तेज धूप निकल आती है तो कृषक खेती का काम नहीं कर पाते हैं और पीने के लिए पानी की भी किल्लत हो जाती है । इसे सुखाड़ की स्थिति कहते हैं ।

मॉनसून की अनिश्चितता के कारण भारत के किसी न किसी भाग में प्रति वर्ष बाढ़ का आगमन होता है । कुछ नदियाँ तो बाढ़ की विभिषिका के लिए बदनाम हो चुकी हैं। जैसे, बिहार में कोसी नदी, पश्चिम बंगाल में दामोदर और तिस्ता नदी, असम में ब्रह्मपुत्र, उड़ीसा में महानदी, आंध्र प्रदेश में कृष्णा और गुजरात में नर्मदा का जल समय-समय पर कहर बरपा चुका है ।

बाढ़ के कारण आम जन-जीवन अस्त-व्यस्त हो जाता है।

बाढ़ तो प्राचीन समय से ही आते रहे हैं । भारतीय धर्म ग्रंथों के अनुसार वर्षा के देवता इंद्र हैं । इनके क्रोधित होने से ही भारी वर्षा और बाढ़ जैसी आपदा आती है । हाल के वर्षों में बाढ़ की स्थिति मानवीय कारणों से भी उत्पन्न होने लगी है । बाढ़ को रोकने के लिए बाँध और तटबंध बनाये गये हैं, लेकिन नदी का बढ़ता जल स्तर जब इन्हें तोड़ देता

है तो अनेक ऐसे क्षेत्र भी जल प्लावित हो जाते हैं जहाँ पहले बाढ़ की संभावना नहीं थी । 2008 ई० में भारत-नेपाल की सीमा पर कुसहा के पास तटबंध के टूटने से आई बाढ़ ने कोसी की धारा ही बदल दी थी ।

बाढ़ के कारण आम जन-जीवन अस्त-व्यस्त हो जाता है।

बांग्लादेश : बाढ़ का देश

आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि प्रतिवर्ष बाढ़ आते हैं और हजारों लोग इसकी चपेट में आ जाते हैं । महामारी फैलना, मकानों का गिरना और फसलों की बर्बादी से यहाँ के लोग आदी हो चुके हैं लेकिन कुछ ऐसे राज्य हैं जो इतनी बर्बादि के बाद भी यह दुनिया के सर्वाधिक घने बसे देशों में से एक है । यह राज्य की बाढ़ से ही जुड़ा है। बाढ़ का जल न सिर्फ बर्बादि लाता है वरन् बाढ़ प्रभावित क्षेत्रों में प्रतिवर्ष जलोढ़ मलबों का निक्षेपण करता है जिसमें प्राकृतिक उर्वरक और खनिज ह्यूमस बहुलता इसे विश्व के सर्वाधिक उपजाऊ मैदानों में से एक बनाता है । बाढ़ के जल के उतरते ही किसान खुशी के गीत गाते हैं और देखते ही देखते बाढ़ की भूमि फसलों, से लहलहा उठती है।

बाढ़ प्रबंधन : बाँध और तटबंध का निर्माण :

बाढ़ के विनाशलीला को रोकने के लिए बाँध और तटबंध बनाने का कार्य अंग्रेजों के समय से ही होता रहा है । लेकिन स्वतंत्रता के बाद बाढ़ जैसी आपदा के प्रबंध हेतु बाँध बनाकर तटबंधों के निर्माण द्वारा इसे रोकने का प्रयास किया जा रहा है । कुसहा में तटबंध टूटने के बाद तथा कई नदियों के बाँध में दरार आने के बाद इस प्रबंध पर प्रश्न चिह्न उठ गया है। लेकिन भारत ही नहीं चीन, मिस्र, पाकिस्तान और नाइजीरिया जैसे देशों ने नदियों पर बाँध बनाकर कृत्रिम जलाशय का निर्माण किया है । जल की निकासी इस प्रक्रिया से होने का प्रबंधन

होता है बाढ़ जैसी स्थिति उत्पन्न न हो ।

क्या आप जानते हैं नदियों पर बाँध बनाने से कृत्रिम जलाशयों का निर्माण होता है। भारत के कुछ प्रमुख कृत्रिम जलाशयों का नाम दिये गये बॉक्स में देखें :

बाँध का नाम	नदी	कृत्रिम जलाशय का नाम
1 भाखड़ा नंगल बाँध	सतलज	गोविन्द सागर
2 नर्मदा परियोजना	नर्मदा	सरदार सरोवर
3 नागार्जुनसागर परियोजना	कृष्णा	नागार्जुन सागर
4 कावेरी परियोजना	कावेरी	कृष्णा सागर
5 रिहन्द बाँध	रिहन्द	पंत सागर

वैकल्पिक प्रबंधन :

तटबंध टिकाउ प्रबंध नहीं हैं । इनके टूटने से और भी भयावह स्थिति उत्पन्न होती है। अत: इस अवधारणा को बल मिला है कि पारिस्थैतिकी के अनुरूप टिकाउ प्रबंधन को प्राथमिकता दी जाय । इसके लिए निम्नांकित प्रयास आवश्यक हैं–

1 ऐसे इमारतों/भवनों का निर्माण जो कम लागत की हो, इसमें रसायन मिश्रित कच्चे मालों का प्रयोग हो जिससे बाढ़ के बावजूद मकान बर्बाद नहीं हो सके ।

2 आम लोगों को मकान बनाने के पूर्व यह जानकारी देना कि मकानों का निर्माण पूर्णत: नदी के किनारे तथा नदी के सकरी ढालों पर नहीं करना चाहिए । ऐसे जगहों पर मकान की दूरी कम से कम 250 मी० की दूरी पर होनी चाहिए ।

3 बाढ़ के बाद जल निकालने की तत्कालिक व्यवस्था होनी चाहिए । इस कार्य में ग्राम पंचायतों की अहम् भूमिका हो सकती है । वस्तुत: प्रत्येक ग्राम पंचायत

> **क्या आप जानते हैं :**
> **दुनिया का सबसे ऊँचा बाँध नील नदी पर आस्वान नामक जगह पर बनाया गया ।**

में बाढ़ के पूर्व ही पर्याप्त पंप सेट की व्यवस्था होनी चाहिए ।

4 मकानों की नींव तथा दीवार सीमेंट और कंक्रीट की होनी चाहिए ।

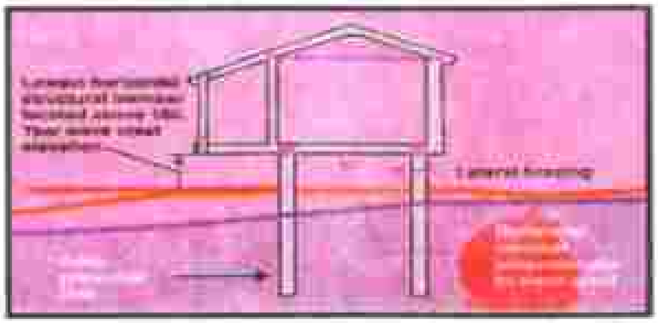

चित्र-2.3

5 स्तंभ (Pillar) आधारित मकान होनी चाहिए और स्तंभ की गहराई काफी होनी चाहिए ।

पूर्व सूचना का प्रबंधन :

1. बाढ़ पूर्वानुमान के लिए सुदूर संवेदन सूचनायें निश्चित रुप से एकत्रित की जानी चाहिए इससे बाढ़ आने से पूर्व ही संभावित क्षेत्रों में सूचना तंत्र के माध्यम से सूचना दी जा सकती है । समय पर सूचना मिलने से विद्यालय बंद कर दिये जा सकते है । स्थानीय अस्पताल में डाक्टर और दवाई की व्यवस्था की जा सकती है । प्रशासन चुस्त हो सकता है और खाद्य आपूर्ति, पेयजल और दवाइयाँ हेतु आकस्मिक राशि उपलब्ध करायी जा सकती है ।

2 बाढ़ ग्रसित क्षेत्र के लोगों को तैराकी होने का प्रशिक्षण देना चाहिए, इतना ही नहीं सभी गाँव के पंचायत और विद्यालयों में स्वीमिंग जैकेट की व्यवस्था की जानी चाहिए जिससे कि अधिक से अधिक लोग तैरते हुए बाहर निकल सकें ।

3 बाढ़ के जल के निकलते ही सबसे बड़ी समस्या महामारी फैलने की होती है, अतः डी० डी० टी० का छिड़काव, ब्लीचिंग पाउडर का छिड़काव और मृत जानवरों को शीघ्र हटाने की व्यवस्था होनी चाहिए ।

4 बाढ़ प्रभावित क्षेत्रों में स्वंय सेवी संस्थाओं की मदद से इस बात का प्रक्षिण देना

आवश्यक है कि वे किस प्रकार एक दूसरे को सहयोग कर सकते हैं, जैसे—आपसी भेद-भाव भुलाकर गाँव के ऊँचे भवनों पर एकत्रित होना; महामारी फैलने की स्थिति में गर्म जल, चीनी और नमक का घोल पिलाना तथा भोजन और कपड़े की व्यवस्था करने की भावना को सामूहिक दायित्व के रूप में विकसित करना चाहिए ।

बच्चों बाढ़ एक ऐसी आपदा है जिसे पूर्णतः रोकना असंभव है, यह एक पारिस्थैतिकी का रूप ले चुका है । अतः बाढ़ की विभीषिका में भी हँस-खेल कर जीने की कला विकसित करना है । इसका यही सबसे बड़ा प्रबंधन है । एशिया के ग्रामीणों ने अपनी परम्परागत नवीन शैली के साथ रहते हुए बाढ़ प्रभावित क्षेत्रों को ही दुनिया में सबसे सघन बसा क्षेत्र बनाया है ।

सुखाड़ तथा इसका प्रबंधन :

वर्षा की भारी कमी के कारण सुखाड़ की स्थिति उत्पन्न हो जाती है । इससे आम लोगों के सामने तीन बड़ी समस्या होती है—(i) फसल न लगने से खाद्यान्न की कमी, (ii) पेयजल की कमी, (iii) मवेशियों के लिए चारे की कमी । अप्रत्यक्ष रूप से जमाखोरी, खाद्य पदार्थों के मूल्य में भारी वृद्धि और लूट मार की समस्याएँ उत्पन्न हो जाती हैं । भूखमरी से मरने वालों की संख्या में वृद्धि होती है ।

यद्यपि भारत सरकार द्वारा सभी नदियों के जोड़ने की योजना के द्वारा बाढ़ग्रस्ति क्षेत्र के नदियों के अतिरिक्त जल को वैसे क्षेत्रों में पहुँचाने की योजना है जो सामान्यतः सूखाग्रसित होते हैं लेकिन कई कारणों से अभी तक इस योजना को कार्यिक स्वरूप नहीं दिया जा सकता है । पर्यावरण विशेषज्ञों ने इस प्रकार की योजना का विरोध भी किया है ।

भारत में सुखाड़ का क्षेत्र :

बच्चों क्या आप जानते हैं कि भारत सरकार द्वारा देश में ऐसे 77 जिलों की पहचान की गई है, जहाँ सामान्यतः लगभग प्रतिवर्ष सूखे की संभावना रहती है, ये जिले मुख्यतः

राजस्थान, गुजरात, कर्नाटक, मध्य-प्रदेश, छत्तीसगढ़, महाराष्ट्र और उत्तर प्रदेश में अवस्थित हैं।

भारत में सुखाड़ और दुर्भिक्ष के कुछ महत्वपूर्ण वर्ष उन्नीसवीं शताब्दी में 1877, और 1899 का वर्ष है जब भयंकर सूखे की स्थिति उत्पन्न हुई थी। बीसवीं शताब्दी में 1918, 1966 और 1987 ई० में भयंकर सूखा पड़ा था।

सुखाड़ प्रबंधन

सुखाड़ जैसी आपदा के प्रबंधन हेतु दो प्रकार की योजनायें आवश्यक हैं, ये हैं-दीर्घकालीन और लघुकालीन योजनायें । दीर्घकालीन योजना के अंतर्गत-नहर, तालाब, कुआँ, पाइन, आहर के विकास की जरूरत है। नहर के माध्यम से जलाशयों से जल लाया जा सकता है। पंजाब और हरियाणा में नहरों का जाल बिछाकर ही सुखाड़ की समस्या का स्थायी समाधान किया गया है। बिहार में भी कोसी कमांड क्षेत्र, गंडक कमांड क्षेत्र तथा चांदन- किउल -बरूआ कमांड क्षेत्र सुखाड़ के समय नहर प्रबंधन के द्वारा प्राकृतिक आपदा को कम करने का प्रयास है। तालाब बनाने का मूल उद्देश्य वर्षा जल का संग्रहण है। पुनः यदि नहर अतिरिक्त जल देता है, तो उसे तालाब में रखा जा सकता है। कुँए के निर्माण से भूमिगत जल का उपयोग होता है। कुओं के विकास से बहुत हद तक पेयजल की समस्या का समाधान हो जाता है। वर्तमान समय में बोरिंग और ट्यूबवेल के माध्यम से भूमिगत जल के दोहन में तीव्र वृद्धि हुई है। उससे पारिस्थैतिक संकट भी उत्पन्न हो गया है। भूमिगत जल स्तर में हो रही गिरावट एक चिंता का विषय है। यह पारिस्थैतिक असंतुलन को भी जन्म देता है।

क्या आप जानते हैं :
सिचाई आयोग के अनुसार प्रत्येक वर्ष देश के लगभग 16% भूभाग पर सुखाड़ की स्थिति उत्पन्न होती है।

भूमिगत जल क्या है ?

क्या आप जानते हैं कि आप जहाँ खड़े हैं, उसके नीचे स्वच्छ जल का विशाल भंडार हो सकता है ? वर्षा का जल धीरे-धीरे सतह के नीचे जाकर भूमिगत जल का रूप ले चुका

है । कुँए और बोरिंग के माध्यम से तथा ऊर्जा चालित मशीनों की मदद से इस जल के दोहन में लगातार तेजी से वृद्धि हो रही है । इससे न केवल भूमिगत जल स्तर में गिरावट प्रारंभ हो गई है, वरन् पारिस्थैतिक असंतुलन की समस्या भी उत्पन्न होने लगी है ।

नहर, पाइन और आहर मानव निर्मित जल-प्रवाह के मार्ग हैं, इन मार्गों की मदद से एवं भूमिगत जल का उपयोग मूलतः कृषि कार्य एवं पेयजल के लिए होता है। नहर लंबी दूरी के मार्ग होते हैं और यह सीधे जल स्रोत से जुड़ा होता है । इसमें मुख्यतः जलाशय का जल प्रवाहित होता हैं, लेकिन आवश्यकता अनुसार डिजल पम्प सेट की मदद से भी सिंचाई हेतु इसमें जल प्रवाहित किया जाता है । पइन और आहर मानव निर्मित जल निकासी के छोटे मार्ग होते हैं, जो इस बात का संकेत देता है कि कृषक बिना किसी दुरूपयोग के वर्षा जल एवं भूमिगत जल का उपयोग करना चाहता है । ड्रिप सिंचाई एवं छिड़काव सिंचाई (Sprinkle irrigation) के द्वारा भी भूमिगत जल का उपयोग पारिस्थतिकी के अनुरूप किया जाता है ।

स्वच्छ जल की कमी संपूर्ण संसार के लिए एक गंभीर चुनौती है । बिना सुखाड़ की स्थिति में भी भूमिगत जल स्तर का गिरावट सबों के लिए चिंता का विषय बना हुआ है। इसको गंभीरता को ही देखते हुए वर्षा जल संग्रहण तथा वाटर शेड मैनेजमेंट जैसी योजनायें प्रारंभ की गई हैं । इन दोनों ही योजनाओं का मूल उद्देश्य वर्षा जल का संग्रह कर उसका अधिक से अधिक उपयोग किया जाना है । वाटर शेड प्रबंधन के अंतर्गत भूमिगत जल स्तर को बढ़ाने के लिए तथा मृदा क्षरण को कम करने के लिए एवं घास और वन लगाने हेतु कई योजना बनाई गयी हैं । इस दिशा में स्वंयसेवी संस्था और पंचायतों की भी सहायता ली जा रही है ।

राजस्थान जैसे राज्य में छोटे स्तर पर जल संग्रहण हेतु 50 हेक्टेयर तक के वाटर शेड क्षेत्रों की पहचान की गयी है ।

वर्षा जल संग्रहण :

बच्चों क्या तुमने किसी मकान के नीचे एक बड़े पानी टंकी में पाइप द्वारा वर्षा के जल को संग्रहित करते देखा है । मकान के छत पर वर्षा का जल यों ही बर्बाद हो जाता है किंतु

ये बड़े ही स्वच्छ होते हैं इसलिए पाइप द्वारा किसी टंकी में इस जल को संग्रहित किया जाता है और फिर नल द्वारा मकान के लोग इस जल को पीने हेतु करते हैं, इतना ही नहीं इससे गार्डेन, बगीचे की सिंचाई भी संभव होती है । भारत के कई राज्यों में इसका संग्रह कुंड या तालाब बनाकर किया जाता है ।

इससे भूमिगत जल स्तर में वृद्धि होती है तथा मवेशियों और पौधों को भी जल मिलता है । वर्षा जल संग्रहण तकनीक सुखाड़ के दिनों में वरदान साबित हो रहा है । हल्की वर्षा होने पर भी यह लोगों के लिए जीवनदायिनी का काम कर सकता है ।

सुखाड़ और कम वर्षा के क्षेत्र में ड्रिप और छिड़काव सिंचाई के माध्यम से न सिर्फ जल का सही उपयोग होता है वरन कम जल के उपयोग से उत्पन्न होने वाले फसलों को भी सुखाड़ के दिनों में लगाया जा सकता है। ऐसे फसलों में फल - फूल और सब्जी तथा दलहन, की कृषि विशेष रूप से की जा सकती है। भारत में 75 cm से कम वर्षावाले क्षेत्रों में ग्रामीण विकास योजनाओं के अंतगर्त इस प्रकार के सिंचाई योजना को पर्याप्त महत्व दिया गया है। सूखे की स्थिति में इसका उपयोग वैसे क्षेत्र में किया जा सकता है जहाँ औसत वार्षिक वर्षा 75 cm से अधिक हो । कर्नाटक, मध्य प्रदेश, राजस्थान जैसे राज्यों में ड्रिप और छिड़काव सिंचाई योजना को ग्रामीण विकास योजना का अंग बना लिया गया है । राजस्थान में किसानों को विशेष आर्थिक मदद भी दी जाती है । यह अति आवश्यक है कि स्वंयसेवी संस्थाओं की मदद से किसानों को इन सिंचाई योजनाओं से परिचित कराया जाय और उन्हें इस बात का प्रशिक्षण देना आवश्यक है कि किस प्रकार वर्षा की अनिश्चितता में वे ऐसे फसलों को लगायें जो कम लागत वाली सिंचाई साधनों की मदद से अधिक आर्थिक लाभ दे सकें ।

अभ्यास

वस्तुनिष्ठ प्रश्न :-

1. नदियों में बाढ़ आने का प्रमुख कारण क्या है ?

(क) जल की अधिकता (ख) नदी की तली में अवसाद का जमाव

(ग) वर्षा का अधिकता

2. बिहार का कौन सा क्षेत्र बाढ़ ग्रस्त क्षेत्र है ?

(क) पूर्वी बिहार (ख) दक्षिणी बिहार

(ग) पश्चिमी बिहार (घ) उत्तरी बिहार

3. निम्नलिखित में से किस नदी को 'बिहार का शोक' कहा जाता है ?

(क) गंगा (ख) गंडक

(ग) कोसी (घ) पुनपुन

4. बाढ़ क्या है ?

(क) प्राकृतिक आपदा (ख) मानव जनित आपदा

(ग) सामान्य आपदा (घ) इनमें से कोई नहीं

5. सूखा किस प्रकार की आपदा है ?

(क) प्राकृतिक आपदा (ख) मानवीय आपदा

(ग) सामान्य आपदा (घ) इनमें से कोई नहीं

6. सूखे की स्थिति किस प्रकार आती है ?

(क) अचानक (ख) पूर्व सूचना के अनुसार

(ग) धीरे - धीरे (घ) इनमें से कोई नहीं।

7. सूखे के लिए जिम्मेवार कारक हैं :

(क) वर्षा की कमी (ख) भूकंप

(ग) बाढ़ (घ) ज्वालामुखी क्रिया

8. सूखे से बचाव का एक मुख्य तरीका है -

(क) नदियों को आपस में जोड़ देना (ख)वर्षा जल संग्रह करना

(ग) बाढ़ की स्थिति उत्पन्न करना (घ) इनमें से कोई नहीं ।

लघु उत्तरीय प्रश्न :

1. बाढ़ कैसे आती है ? स्पष्ट करें।
2. बाढ़ से होनेवाली हानियों की चर्चा करें।
3. बाढ़ से सुरक्षा हेतु अपनाई जानेवाली सावधानियों को लिखें ।
4. बाढ़ नियंत्रण के लिए उपाव बतायें ।
5. सूखे की स्थिति को परिभाषित करें।
6. सुखाड़ के लिए जिम्मेवार कारकों का वर्णन करें।
7. सुखाड़ से बचाव के तरीकों उल्लेख करें ।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न :

1. बिहार में बाढ़ की स्थिति का वर्णन करें ।
2. बाढ़ के कारणों एवं इसकी सुरक्षा संबंधी उपायों का विस्तृत वर्णन करें ।
3. सुखाड़ के कारणों एवं इनके बचाव के तरीकों विस्तृत वर्णन करें ।

परियोजना कार्य

1. किसी क्षेत्र में बाढ़ से होनेवाली हानि का आँकड़ा इकट्ठा करें ।

1. अपने राज्य के सुखार ग्रस्त जिलों की पहचान करें ।

इकाई : 3

प्राकृतिक आपदा एवं प्रबन्धन: भूकंप एवं सुनामी

भूकंप और सुनामी दो ऐसी प्राकृतिक आपदायें हैं, जिसका संबंध पृथ्वी की आंतरिक संरचना से है। हमलोग ठोस भूपटल पर रहते हैं, लेकिन इसके अंदर आग की लहरें चलती हैं। आपको यह जानकर आश्चर्य लगेगा की ठोस भूपटल के अंदर का तापमान 1000° से० से भी अधिक है। यहाँ उत्पन्न ऊर्जा तरंग की लहरें चट्टानों में कंपन उत्पन्न करती हैं। इस कंपन का केन्द्र जब स्थल खंड पर होता है तो उसे भूकम्प कहते हैं, लेकिन जब महासागर की तली पर होता है तब वह सुनामी के नाम से जाना जाता है। सुनामी के प्रभाव से समुद्री जल में कंपन उत्पन्न होता है। इस कंपन से जल में क्षैतिज गति उत्पन्न होती है। आंतरिक ऊर्जा से संचालित क्षैतिज प्रवाह का जल तटीय स्थल से टकराता है और तट पर सुनामी की विनाशलीला अर्थात आपदा देखने को मिलती है।

क्या आप जानते है :
26 दिसम्बर 2004 को दक्षिण पूर्व एशिया से लेकर बंगाल की खाड़ी तक एक ऐसा सुनामी आया था जिसमें सैकड़ो लोग विलुप्त हो गये, कितने ही नाविकों का अता-पता नहीं चला तथा निकोबार द्वीप समूह के द० स्थित इंदिरा प्वाइंट तरंगीय झटके के प्रभाव से विलुप्त हो गया।

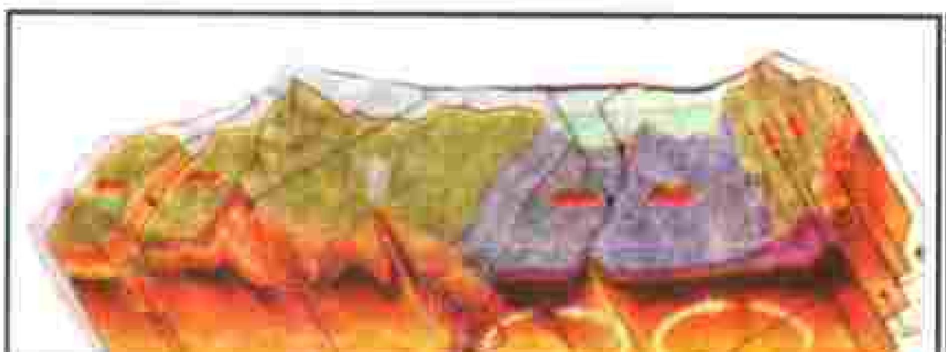

वृत्ताकार चक्र एवं तीर के निशान द्वारा क्रमशः भूकम्प/सुनामी उत्पत्ति केन्द्र एवं प्रभावित भूपटल को देख लिया गया है।

भूकंप और सुनामी की ऊर्जा तरंग की गहनता का मापन रिक्टर स्केल की मदद से होता है। यह लोगरिथमिक मापक है जिसमें प्रत्येक एक इकाई के बाद गहनता में दस गुनी वृद्धि होती है।

भूकंप और सुनामी का प्रभाव वैसे ही क्षेत्रों में अधिक देखने को मिलता है जहाँ भूपटल की चट्टानें विलुपित होती हैं। अर्थात् वलित पर्वत के क्षेत्र, भूपटलीय दरार के क्षेत्र, महासागरीय गर्त, मध्य महासागरीय कटक तथा अन्य वैसे क्षेत्र जहाँ चट्टानें कमजोर होती हैं। वे ऊर्जा प्रवाह में आकर भूकंप अथवा सुनामी के शिकार हो जाते हैं।

दोनों ही घटनाओं में लाखों लोगों की मृत्यु होती है। भूकंप की स्थिति में भवनों का गिरना, पुलों का टूट जाना, जमीन में दरार होना, इन दरारों से गर्म जल के सोते का निकलना,जैसी घटनायें सामान्य रूप से होती हैं। इससे भारी बर्बादी होती है

सुनामी की लहरें तट पर विनाशलीला लाती हैं। इसमें भी तट के किनारे आनंद ले रहे पर्यटक, मछुआरे, और नारियल के कृषक प्रभावित होते हैं। तटीय पुलिन में बालू और मृदा का अपरदन हो जाता है। इससे पारिस्थैतिकी असंतुलन जैसी स्थिति उत्पन्न होती है।

भारत में भूकंप के क्षेत्र :

भारत के प्रायः सभी भागों में भूकंप के झटके आते हैं। लेकिन गहनता और बारंबारता में भारी अंतर होता है। इसे ही आधार मानकर भारत को 5 भूकंपीय पेटी (Zone) में बाँटा गया है। ये निम्नांकित हैं:

1. जोन 1-इस जोन में दक्षिणी पठारी क्षेत्र आते हैं, जहाँ भूकंप का खतरा नहीं के बराबर है।

2. जोन 2-इसके अंतर्गत प्रायद्वीपीय भारत के तटीय मैदानी क्षेत्र आते हैं यहाँ भूकंप की संभावना तो होती है लेकिन तीव्रता कम होने के कारण अति सीमित खतरे होते हैं।

3. जोन 3-इसके अन्तर्गत मुख्यतः गंगा-सिंधु का मैदान, राजस्थान तथा उत्तरी गुजरात के कुछ क्षेत्र आते हैं। यहाँ भूकंप का प्रभाव तो देखने को मिलता है लेकिन वह

कभी-कभी ही विनाशकारी होते हैं। जैसे-बिहार में बीसवीं शताब्दी में करीब 20 बार भूकंप के तीव्र झटके अनुभव किये गये लेकिन सिर्फ 1934 का भूकंप ही विनाशकारी था, वर्ष 2008 ई० में भी भूकंप का झटका तो आया किंतु कम गहनता के होने के कारण बहुत लोगों ने अनुभव भी नहीं किया ।

4. जोन 4-इसमें अधिक खतरे की संभावना होती है। इसमें मुख्यत: शिवालिक हिमालय का क्षेत्र, पश्चिम बंगाल का उत्तरी भाग, असम घाटी तथा पूर्वोत्तर भारत का क्षेत्र आता है। इसी वर्ग में अंडमान-निकोबार द्वीप समूह भी आते हैं।

5. जोन 5-यह सर्वाधिक खतरे का क्षेत्र होता है। इसके अंतर्गत गुजरात का कच्छ प्रदेश, जम्मू-कश्मीर, हिमाचल प्रदेश, उत्तराखण्ड का कुमाऊँ पर्वतीय क्षेत्र, सिक्किम तथा दार्जिलिंग का पहाड़ी क्षेत्र आता है। भारत के इस प्रदेश में कई विनाशकारी भूकंप आ चुके हैं।

भूकंपीय तरंग :

भूकंप के समय उठनेवाले कंपन को मुख्यत: प्राथमिक (P), द्वितीयक (S) तथा दीर्घ (L)तरंगों में बाँटा जाता है।

P तरंग सबसे पहले पृथ्वी की सतह पर पहुँचता है।

S तरंग अनुप्रस्थ तरंग है और इसकी गति प्राथमिक तरंग से कम होती है।

तरंग भूपटलीय सतह पर उत्पन्न होती है, इसकी गहनता सबसे कम होती है। धीमी गति के साथ क्षैतिज रूप से चलने के कारण यह किसी स्थान पर सबसे बाद में पहुँचती है लेकिन यह सर्वाधिक विनाशकारी तरंग होती है।

क्या आप जानते है ?

(i) **अधिकेन्द्र**-भूपटल पर वे केंद्र जहाँ भूकंप के तरंग का सर्वप्रथम अनुभव होता है।

(ii) **भूकंप केंद्र**-भूपटल के नीचे का वह स्थल जहाँ भूकंपीय कंपन प्रारंभ होता है।

(iii) **पूर्व कंपन तथा अनुकंपन**-भूकंप आने के पूर्व तथा भूकंप के बाद कम गहनता के अनेक कंपन होते हैं। सामान्य तौर पर यंत्रों की मदद के बिना इसका अनुभव नहीं होता है।

भूकंप से बचाव के उपाय :

भूकंप एक प्राकृतिक आपदा है, जिससे बचाव के लिए बहुआयामी प्रयास आवश्यक है। वस्तुतः ये प्रयास व्यापक और दूरदृष्टि के साथ होनी चाहिए। इन प्रयासों को निम्नांकित शीर्षकों में रखा जा सकता है :

1. भूकंप का पूर्वानुमान : पूर्व तरंग और अनुकम्पन्न तरंगों को यदि भूकंपलेखी यंत्र पर ठीक से मापन किया जाय तो तरंगो की प्रवृति के आधार पर संभावित बड़े भूकंप का पूर्वानुमान किया जा सकता है। चीन जैसे देश में सरीसृप/रेंगने वाले जीव, बड़े जानवर और पंछियों की गतिविधियों और शोर के आधार पर भूकंप के पूर्वानुमान का कार्य किया जा रहा है। लेकिन ऐसे पूर्वानुमान को अभी पूर्ण मान्यता नहीं मिली है ।

2. भवन-निमार्ण : भूकंप के विनाश को ध्यान में रखते हुए भवन निर्माण की स्वीकृति देने के पहले इन तथ्यों की जाँच आवश्यक होनी चाहिए कि क्या वे भवन भूकंप निरोधी तकनीकों पर आधारित हैं। वस्तुतः भूकंप प्रभावित क्षेत्रों में भूकंप निरोधी तकनीक के आधार पर बनने वाले भवनों के लिए विशेष आर्थिक पैकेज की भी आवश्यकता है।

3. जान माल की सुरक्षा : किसी भी भूकंप का सीधा प्रभाव जान-माल पर पड़ता है। अतः जान माल की सुरक्षा हेतु विशेष सुरक्षा बल की आवश्यकता है।

4. प्रशासनिक कार्य : भूकंप की बर्बादी को रोकने में प्रशासनिक सतर्कता अति आवश्यक है। जैसे, अग्रिम कंपन के आधार पर यदि भूकंप की संभावना बनती हो तब इसे तत्काल संभावित क्षेत्रों में घोषित किया जाना चाहिए। इसके लिए आधुनिक मीडिया तथा पुलिस और जिला प्रशासन को अधिक सक्रिय होने की जरूरत है। पुनः भूकंप के बाद राहत कार्य के लिए विशेष दस्ते के गठन की जरूरत है। यद्यपि केंद्र और राज्य सरकार ने आपदा प्रबंधन समितियों का गठन किया है, लेकिन उनकी भागीदारी को अधिक सक्रिय करने की जरूरत है।

5. गैर सरकारी संगठनों का सहयोग : भूकंप सहित किसी भी प्रकार की आपदा प्रबंधन में स्वयंसेवी संस्थायें, विद्यालय और आम लोग बड़ी भूमिका निभा सकते हैं। स्वयंसेवी

संस्थायें न सिर्फ तत्काल राहत पहुँचाने में मदद कर सकते हैं वरन् भूकंप के पूर्व लोगों को भूकंप निरोधी भवन निर्माण तथा भूकंप के समय तत्काल बचाव हेतु लोगों को प्रशिक्षित भी कर सकते हैं। दबे हुए मलबे से आम लोगों को निकालने हेतु वह सामान्य तरीकों के अलावा सरकारी तंत्र की मदद से नवीन तकनीकी का प्रयोग करते हुए जहाँ मलबे के नीचे अभी भी सांस लेता हुआ मानव हो उसे बचाने का कार्य कर सकते हैं । नार्वे जैसे देश में इसके लिए कुत्तों को प्रशिक्षित किया गया है। जापान में छोटे आकार के वीडियो कैमरे के द्वारा जीवित लोगों का सिग्नल प्राप्त कर बचाव का कार्य किया जाता है। पुनः गैर-सरकारी संगठन लोगों को प्रशिक्षण दे सकता है कि वे भूकंप के समय भागने के बदले अपने कमरे के किसी कोने में दीवार के सहारे खड़ा हो। वहाँ गिरने वाले मलबे का सबसे कम प्रभाव पड़ता है।

विद्यालय में बच्चों को भी भूकंप से बचाव की जानकारी दी जानी आवश्यक है। उसके दिलोदिमाग में यह बैठाया जाना चाहिए कि जब भी भूकंप जैसी आपदा हो तब जात-पात और धर्म को भूलकर मदद के लिए आगे आयें। आम लोगों के लिए आवश्यक है कि वे राहत केंद्रों की व्यवस्था में आगे आयें तथा राहत कार्यों में जाति और लिंग का भेद न होने दें । इसमें पंचायत अहम भूमिका निभा सकता है। चूँकि भूकंप में शरीर के अंग-भंग होने की अधिक संभावना रहती है इसलिए प्रशासन के आने की प्रतीक्षा न कर तुरंत ही नजदीक के अस्पताल या नर्सिंग होम में टेलीफोन द्वारा सूचना देकर उपचार व्यवस्था करनी चाहिए। यदि गाँव में किसी के पास कार, ट्रैक्टर या अन्य वाहन हो तो गंभीर रूप से घायल लोगों को अस्पताल ले जाने की व्यवस्था करनी चाहिए। वस्तुतः भूकंप जैसी आपदाओं के आने पर समुदाय ही सही अर्थों में तत्कालिक प्रबंधन का कार्य कर सकता है।

अगर दुर्घटना से किसी व्यक्ति की मृत्यु हो जाती है तब धार्मिक नियम से उसका अंतिम संस्कार किया जाना चाहिए। डी.डी.टी. एवं अन्य रासायनिक पदार्थों का छिड़काव होना चाहिए जिससे की महामारी न फैल सके।

सुनामी से बचाव के उपाय :

सुनामी का विनाशकारी प्रभाव तटीय प्रदेशों में देखने को मिलता है। तट के किनारे कई मीटर की ऊँचाई तक उठनेवाले तरंग तट के किनारे मछली पकड़ने वाले नाव, मोटरबोट, और

तट के किनारे बसी बस्तियों को बर्बाद कर देते हैं। इतना ही नहीं, समुद्री तट (Sea beach) पर बैठे पर्यटकों को संभलने का मौका भी नहीं देते हैं। तट के किनारे नारियल वृक्षों को भी यह उखाड़ फेंकते हैं। विनाश के इस तांडव का प्रबंधन आवश्यक है। भूकंपीय तरंगों के समान ही सुनामी के भी पूर्व कंपन और अनुकंपन आते हैं। अतः उनका भी पूर्वानुमान लगाया जा सकता है। समुद्र के बीच में इसके लिए स्टेशन/प्लेटफार्म बनाने की जरूरत है, जो समुद्री जल की सतह के नीचे की क्षैतिज हलचलों का अध्ययन कर तट पर संकेत दे सकता है जिससे कि लोगों को वहाँ से हटाया जा सके और तट के किनारे वाले मछुआरे को तट पर न जाकर बीच समुद्र में जाने का संदेश दे सके। गहरे सागर के मध्य के मछुआरे सुरक्षित रह जाते हैं क्योंकि वहाँ पर चलनेवाली क्षैतिज तरंग अवरोधक के अभाव में किसी प्रकार का विनाश नहीं करती है। सही पूर्वानुमान लोगों को सुनामी से बचा सकता है।

तटबंध निर्माण तथा मैंग्रोव झाड़ी का विकास :

सुनामी के विनाशकारी प्रभाव को कम करने के लिए कंक्रीट तटबंध बनाने की जरूरत है। इससे तट से टकराने वाले सुनामी तरंगों का तटीय मैदान पर सीमित प्रभाव होगा। पुनः तटबंध के ही किनारे मैंग्रोव जैसी वनस्पति को सघन रूप से लगाना चाहिए। उससे टकराने वाले तरंगों की गति कम हो जायेगी और वे तटबंध पर भी कम दबाव उत्पन्न करेंगे। तटीय दलदली क्षेत्र में सिर्फ सघन मैंग्रोव ही अधिक लाभकारी हो सकता है।

तटीय प्रदेश के लोगों को प्रशिक्षण :

राज्य सरकार तथा गैर-सरकारी संस्थाओं द्वारा तटीय प्रदेश में रहनेवाले लोगों को सुनामी से बचाव का प्रशिक्षण देने की व्यवस्था करनी चाहिये । इस व्यवस्था के अन्तर्गत सुनामी की सूचना मिलते ही या तो समुद्र की तरफ या स्थलखंड की तरफ तुरंत भागने के लिए तैयार करना, सुनामी जल के स्थिर होने के बाद सामूहिक रूप से बचाव कार्य में लग जाना, घायलों को चिकित्सा सुविधाओं के अतिरिक्त प्रभावित लोगों को स्वच्छ पेयजल और भोजन की व्यवस्था करना, असामाजिक तत्वों द्वारा लूट-मार न हो इसके लिए आमलोगों का सहयोग लेने जैसे कार्यों को करना आवश्यक है । बस्तियों के पुनर्वास में भवन-निर्माण हेतु इस

प्रकार के डिजाइन के उपयोग का व्यवस्था आवश्यक है जिसमें सुनामी जल न्यूनतम प्रभाव डाल सके।

आम लोगों का सहयोग तथा स्वयंसेवी और प्रशासकीय संस्थाओं की भागीदारी ही भूकंप और सुनामी जैसी आपदाओं से राहत दिला सकती है।

अभ्यास

वस्तुनिष्ठ प्रश्न :-

1. महासागर के तली पर होनेवाले कंपन को किस नाम से जाना जाता है?
   (क) भूकंप (ख) चक्रवात
   (ग) सुनामी (घ) इनमें से कोई नहीं
2. 26 दिसंबर, 2004 को विश्व के किस हिस्से में भयंकर सुनामी आया था?
   (क) पश्चिम एशिया (ख) प्रशांत महासागर
   (ग) अटलांटिक महासागर (घ) बंगाल की खाड़ी
3. भूकंप से पृथ्वी की सतह पर पहुँचनेवाली सबसे पहली तरंग को किस नाम से जाना जाता है?
   (क) पी-तरंग (ख) एस-तरंग
   (ग) एल-तरंग (घ) टी-तरंग
4. भूकंप केंद्र के उर्ध्वाधर पृथ्वी पर स्थित केंद्र को क्या कहा जाता है?
   (क) भूकंप केंद्र (ख) अधि केंद्र
   (ग) अनु केंद्र (घ) इनमें से कोई नहीं
5. भूकंप अथवा सुनामी से बचाव का इनमें से कौन सा तरीका सही नहीं है?
   (क) भूकंप के पूर्वानुमान को गंभीरता से लेना,
   (ख) भूकंप निरोधी भवनों का निर्माण करना,
   (ग) गैर-सरकारी संगठनों द्वारा राहत कार्य हेतु तैयार रहना
   (घ) भगवान भरोसे बैठे रहना।

लघु उत्तरीय प्रश्न :

1. भूकंप के केंद्र एवं अधिकेंद्र के बीच अंतर स्पष्ट कीजिए।
2. भूकंपीय तरंगों से आप क्या समझते हैं? प्रमुख भूकंपीय तरंगों के नाम लिखिए?
3. भूकंप और सुनामी के बीच अंतर स्पष्ट कीजिए।
4. सुनामी से बचाव के कोई तीन उपाय बताइए?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न :

1. भूकंप क्या है? भारत को प्रमुख भूकंप क्षेत्रों में विभाजित करते हुए सभी क्षेत्रों का संक्षिप्त विवरण दीजिए?
2. सुनामी से आप क्या समझते हैं? सुनामी से बचाव के उपायों का उल्लेख कीजिए?
3. भूकंप एवं सुनामी के विनाशकारी प्रभाव से बचने के उपायों का वर्णन कीजिए?

इकाई : 4

जीवन रक्षक आकस्मिक प्रबंधन

आपदा प्रबंधन को दो चरणों में लागू करने की जरूरत है। ये हैं (i) आकस्मिक प्रबंधन और (ii) दीर्घकालीन प्रबंधन। आपदा की घड़ी में यह जीवनरक्षक प्रबंधन है जबकि दीर्घकालीन प्रबंधन का उद्देश्य संभावित आपदा के प्रभाव को कम करना है। आकस्मिक प्रबंधन ही किसी प्रशासन की सफलता की कसौटी होती है। इसके अन्तर्गत आपदा के आते ही प्रभावित लोगों को आपदा से निजात दिलाना ही प्रमुख उद्देश्य होता है। अलग-अलग प्रकार के प्राकृतिक आपदाओं के आकस्मिक प्रबंधन में अलग-अलग प्रकार की प्राथमिकतायें होती हैं।

(1) बाढ़ की स्थिति में आकस्मिक प्रबंधन :

बाढ़ के आते ही जान-माल और मवेशी पर भारी संकट आ जाता है। अतः पहली प्राथमिकता बाढ़ रोकना नहीं बल्कि बाढ़ से लोगों को बचाना है। उसी प्रबंधन की तारीफ होती है जो लोगों को नाव पर बैठाकर या तैरने वाले व्यक्ति द्वारा रबर के गुब्बारे के साथ दूसरे को भी खींचते हुए सुरक्षित जगह पर ले जाय। उसके बाद मवेशियों को तथा घर के सामानों को बाहर निकालने की प्राथमिकता होती है । यह सुरक्षित स्थान गाँव के बाहर तटबंध की ऊँची भूमि, गाँव के छत वाले ऊँचे मकान या कोई भी सार्वजनिक निर्मित बाढ़ मुक्त क्षेत्र हो सकता है।

सुरक्षित स्थान पर पहुँचाने के बाद भोजन और पेयजल की व्यवस्था आवश्यक है। बच्चों के लिए दूध की व्यवस्था, महामारी से बचने के लिए गर्म जल, गर्म भोजन तथा छोटे से जगह में मिलजुलकर रहने के लिए वातावरण बनाना आकस्मिक प्रबंधन का ही हिस्सा है। पशुओं के लिए चारे की व्यवस्था भी उतनी ही आवश्यक होती है। पुनः बाढ़ के कारण साँप और बिच्छू जैसे जहरीले जीव भी ऊँचे खुले जगह पर आ जाते हैं। यदि बाढ़ का पानी कई

दिनों तक जल जमाव की स्थिति में हो तो महामारी की भी संभावना होती है।

वही आकस्मिक प्रबंधन सफल होता है जो ऊपर वर्णित समस्याओं से निपटने का प्रबंधन आपदा आने के पूर्व ही कर लेता है। जैसे –खाद्य पदार्थ, पशु चारा, महामारी से संबंधित जीवनरक्षक दवाई, छिड़काव की सामग्री इत्यादि का पूर्व प्रबंधन आकस्मिक प्रबंध को सफल बनाता है।

(2) भूकंप एवं सुनामी की स्थिति में आकस्मिक प्रबंधन :

भूकंप की स्थिति में आकस्मिक प्रबंधन का तीन प्रमुख कार्य होता है। (क) बचे हुए विस्थापित लोगों को राहत कैंप में ले जाना या उसे सभी प्रकार की आवश्यक सुविधायें उपलब्ध कराना (ख) वैसे लोगों को मलबे से निकालना जो अभी भी दबे हुए हैं। (ग) अकाल मृत्युप्राप्त आम लोगों को और जानवरों को सही स्थानों पर दफनाकर या धार्मिक रीतियों के अनुरूप अंतिम संस्कार करना। ऐसा न करने से महामारी फैलने की संभावना रहती है।

क्या आप जानते हैं :

सुनामी की स्थिति में तट पर रहने वाले लोगों के लिए सुनामी से भीषण आपदा आती है। कई मीटर ऊपर उठे जलीय प्रहार से तटीय लोगों के मरने, समुद्री जल में समा जाने या जल के प्रहार से घायल होने की संभावना रहती है। अतः पहली प्राथमिकता है कि घायल का प्राथमिक उपचार कर अस्पताल पहुँचाया जाय तथा लापता की पता लगाने के लिए हेलिकोप्टर और रडार जैसे यंत्रों की मदद ली जाय। शक्तिचालित समुद्री नौकायें भी सुनामी के बाद इस कार्य में लगायी जानी चाहिए। पुनः मृत लोगों की पहचान और संबंधित परिवारों को न सिर्फ सांत्वना वरन सभी प्रकार की आवश्यक सहायता के साथ–साथ Councelling परामर्श की भी आवश्यकता है। ऐसे परिवारों के साथ प्रशिक्षित स्वयंसेवी के रहने से मानसिक रूप से वह उत्पीड़न/आपदा से बाहर आ सकता है। पुनः खोये हुए व्यक्तियों के पता लगाने में न सिर्फ शक्तिचालित नावों की मदद, रडार, हेलिकोप्टर और कृत्रिम उपग्रहों की भी सहायता ली जा सकती है। ऐसे कार्यों में नौसेना की सहभागिता निश्चित होनी चाहिए।

मलबा में दबे हुए लोग यदि जीवित हैं तो उसे तत्काल मलबे से बाहर निकालने की जरूरत है। प्रारंभ में कुत्तों के सूंघने के आधार पर जीवित होने की संभावना का पता चलता है। लेकिन वर्तमान समय में इंफ्रारेड कैमरों की मदद से ध्वनि श्रवण की उपकरणों की मदद से (बायो रडार) से मलबे के नीचे दबे हुए लोगों का पता लग जाता है। इस प्रकार के आकस्मिक प्रबंध के लिए यह अति आवश्यक है कि पंचायतों में पूर्व से ही इस प्रकार की यंत्रों की व्यवस्था हो।

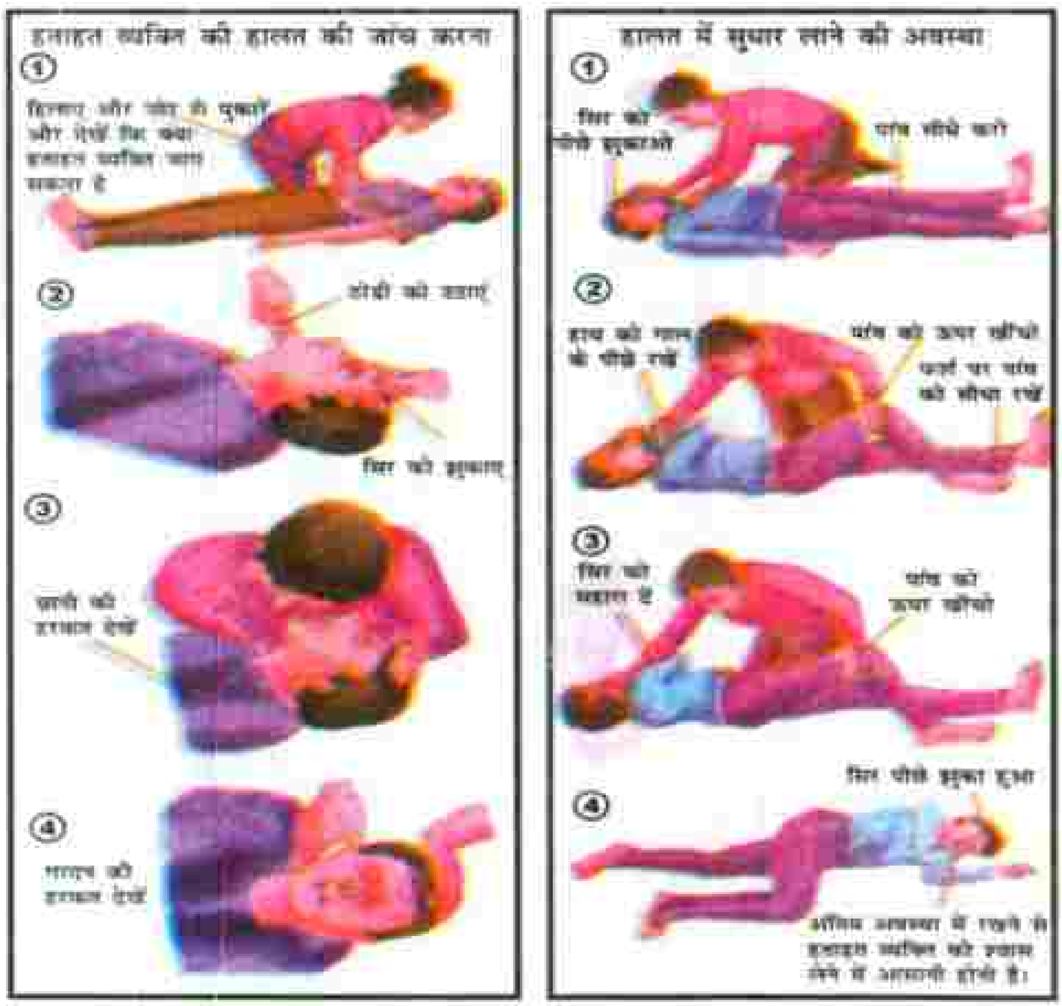

हताहत व्यक्ति की हालत की जांच करना/हालत में सुधार लाने की अवस्था

(3) आग लगने की स्थिति में : शुष्क गर्मी ऋतु में गाँव के गाँव का आग से स्वाहा हो जाना आपदा का ही एक रूप है। ऐसी आपदा में आकस्मिक प्रबन्धक की तीन बड़ी जिम्मेवारी होती है :

(क) आग में फँसे हुए लोगों को बाहर निकालना,

(ख) घायलों को तत्काल प्राथमिक उपचार देकर अस्पताल पहुँचाना। प्राथमिक उपचार में ठंढा पानी डालना, बर्फ से सहलाना और बरनोल जैसी प्राथमिक औषधि का उपयोग करना। इससे जलन में राहत होती है।

(ग) आग के फैलाव को रोकना, जिसके लिए नजदीक में उपलब्ध बालू, मिट्टी, अगर तालाब हो तो तालाब के जल का उपयोग, अग्निशामक दल को बुलाना तथा यदि झुग्गी झोपड़ी हो तो कुछ दूरी से इस प्रकार उखाड़ फेंकना कि अगले मकान तक आग का संकट न हो सके। यदि आग के कारण विद्युत शार्ट-सर्किट है तो सबसे पहले बिजली लाईन को विच्छेदित करना चाहिए। इसके बाद ऊपर वर्णित आकस्मिक प्रबंधन का अनुसरण करना चाहिए।

आग के समय यदि कोई व्यक्ति छत के ऊपर फँसा हो तो उसे बाहर से सीढ़ी लगाकर उतारने का कार्य या फिर हेलमेट या अग्निप्रतिरोधी (Fire resistant) जैकेट पहनकर उसे बाहर निकालने का कार्य करना।

राहतकर्मियों के लिए प्राथमिक उपकरण और उपचार : विविध प्रकार के आपदा की स्थिति में प्राथमिक प्रबंध का कार्य गाँव या समाज के ही लोग कर सकते हैं। अतः ग्राम-पंचायतों के लिए आवश्यक है कि वह प्रत्येक गाँव में आपदा प्रबन्धन समिति बनाये और स्वयंसेवी संस्थायें उसे आवश्यक प्रशिक्षण दें, राज्य सरकार के लिए आवश्यक है कि ऐसी समितियों को कुछ आवश्यक उपकरण और प्राथमिक उपचार के उपकरण उपलब्ध करायें। आवश्यक उपकरणों को दो वर्गों में रख सकते हैं (क) बचाव कर्मियों के लिए निजी उपकरण (ख) बचाव दल के लिए उपकरण।

बचाव कर्मियों के लिए निजी उपकरण
हेलमेट
लाइफ जैकेट
टॉर्च
गम-बूट
सीटी

बचाव दल के लिए उपकरण
सीढ़ी
रस्सी
घिरनी
प्राथमिक उपचार बॉक्स
हथौड़ा
स्ट्रेचर

प्राथमिक उपचार के सामान
साबुन
रुई
कीटनाशक दवा
थर्मामीटर
कैंची
दस्ताने
ओ० आर० एस० पैकेट
एन्टासिड
बैंडेज
कीटाणु रहित मरहम पट्टी
क्रेप बैंडेज
चिपकानेवाली टेप

आकस्मिक प्रबंधन के घटक :

आकस्मिक प्रबंधन के तीन प्रमुख घटक हैं:-

(1) स्थानीय प्रशासन

(2) स्वयंसेवी संगठन

(3) गाँव अथवा मुहल्ले के लोग

प्रबंधन की अग्रिम पंक्ति में गाँव और मुहल्ले के लोग हो सकते हैं। इसके लिए युवकों को मानसिक रूप से सुदृढ़ और तकनीकी रूप से प्रशिक्षित करने की जरूरत है। यह कार्य स्वयंसेवी संस्थायें कर सकती हैं। वस्तुतः स्वयंसेवी संस्थाओं के लिए आवश्यक है कि वे न सिर्फ युवकों को प्रेरित और प्रशिक्षित करें वरन लोगों को फिल्म या विडियो को दिखाकर बहादुरी के कारनामों को दिखायें जिससे कि आपदाओं से लड़ने की मानसिक दृढ़ता उत्पन्न होगी।

आपदा प्रबंधन को दिनचर्या का एक अंग समझना आवश्यक है। स्वयंसेवी संस्था, गाँव के युवकों तथा पंचायत प्रबंधन के बीच समन्वय आवश्यक है। तभी आकस्मिक प्रबंधन

सफल हो सकता है। ऐसे प्रबंधन में जाति, धर्म और लिंग का कोई महत्व नहीं है। मिलजुलकर आपदा से लड़ने का संदेश देना आवश्यक है। इस प्रकार का संदेश विद्यालय के बच्चों को भी देने की जरूरत है। ये कार्य भी स्वयंसेवी संस्थाएँ कर सकती हैं।

आकस्मिक प्रबंधन में स्थानीय प्रशासन की महत्वपूर्ण भूमिका है। इसके लिए आवश्यक है कि वे राहत शिविर का निर्माण करें। वहाँ सभी उपकरण और प्राथमिक उपचार की सामग्रियाँ उपलब्ध करायें तथा एम्ब्युलेंस (Ambulance) डॉक्टर, अग्निशामक इत्यादि की व्यवस्था में तत्परता दिखायें। कागजी दाव पेंच में न पड़कर राहत राशि और राहत सामग्री को पहुँचाकर आपदा प्रबंधन को सरल तथा सहज बना सकते हैं।

अभ्यास

वस्तुनिष्ठ प्रश्न :-

1. बाढ़ के समय निम्नलिखित में से किस स्थान पर जाना चाहिए ?

   (क) ऊँची भूमि वाले स्थान पर (ख) गाँव के बाहर

   (ग) जहाँ हैं उसी स्थान पर (घ) खेतों में

2. मलबे के नीचे दबे हुए लोगों को पता लगाने के लिए किस यंत्र की मदद ली जाती है ?

   (क) दूरबीन (ख) इंफ्रारेड कैमरा

   (ग) हेलीकॉप्टर (घ) टेलीस्कोप

3. आग से जलने की स्थिति में जले हुए स्थान पर क्या प्रथमिक उपचार करना चाहिए?

   (क) ठंडा पानी डालना (ख) गर्म पानी डालना

   (ग) अस्पताल पहुँचाना (घ) इनमें से कोई नहीं

4. बस्ती/मकान में आग लगने की स्थिति में क्या करना चाहिए ?

   (क) अग्निशामक यंत्र को बुलाना (ख) दरवाजे-खिड़कियाँ लगाना

   (ग) आग बुझने तक इंतजार करना (घ) इनमें से कोई नहीं

5. सुनामी किस स्थान पर आता है ?

   (क) स्थल (ख) समुद्र

   (ग) आसमान (घ) इनमें से कोई नहीं

लघु उत्तरीय प्रश्न :

1. जीवन रक्षक आकस्मिक प्रबंधन से आप क्या समझते हैं ?
2. बाढ़ की स्थिति में अपनाये जाने वाले आकस्मिक प्रबंधन का संक्षेप में वर्णन कीजिए।

3. भूकंप एवं सुनामी की स्थिति में आकस्मिक प्रबंधन की चर्चा संक्षेप में कीजिए।
4. आकस्मिक प्रबंधन में स्थानीय प्रशासन की भूमिका का वर्णन करें।
5. आग लगने की स्थिति में क्या प्रबंधन करना चाहिए ? उल्लेख करें।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न :

1. जीवन रक्षक आकस्मिक प्रबंधन से आप क्या समझते हैं ?
2. आकस्मिक प्रबंधन में स्थानीय प्रशासन एवं स्वयंसेवी संस्थाओं की भूमिका का विस्तार से उल्लेख कीजिए।

इकाई : 5

आपदा काल में वैकल्पिक संचार व्यवस्था

इस धरा पर छोटी-बड़ी आपदाएँ होती ही रहती हैं। आप विभिन्न संचार माध्यमों से दिन-प्रतिदिन होने वाली आपदाओं की जानकारी भी प्राप्त करते रहते हैं। बाढ़, सूखा, भूकम्प, सुनामी, चक्रवात, भूस्खलन, हिमस्खलन, शीतलहर जैसी विनाशकारी प्राकृतिक आपदाओं से हम सभी किसी न किसी रूप में प्रभावित भी होते रहते हैं। भारत जैसे देशों को विशेष रूप से ऐसी आपदाओं का बराबर सामना करना पड़ता है। बाढ़ और सूखा भारतीय मानसूनी जलवायु की एक बड़ी विशेषता और अनिश्चितता है। इसी प्रकार विश्व में जहाँ-कहीं भी बड़ी अथवा तीव्र आपदाओं का प्रकोप होता है तो आपदा प्रभावित क्षेत्र की सामान्य संचार व्यवस्थाएँ क्षतिग्रस्त हो जाती हैं। इसके कारण प्रभावित क्षेत्र का सम्पर्क, शेष दुनिया से कट जाता है। सूचनाओं के आदान-प्रदान या सम्पर्क के टूट जाने से राहत या बचाव कार्य बाधित हो जाते हैं, ऐसी परस्थिति में आपदा का रूप और भी भयावह हो जाता है ।

> **क्या आप जानते हैं ?**
>
> भारत में चक्रवात प्रभावित क्षेत्र पूर्वी तटीय भाग, गुजरात का तटीय क्षेत्र एवं अंडमान-निकोबार द्वीप समूह हैं।
>
> भारत में बाढ़ से बड़ी नदी घाटियाँ जैसे गंगा एवं ब्रह्मपुत्र अधिक प्रभावित हैं।
>
> भारत में 56 प्रतिशत भू-क्षेत्र भूकम्प प्रभावित है।
>
> भारत के 16 राज्यों के 16 प्रतिशत भाग सूखा के चपेट में रहता है।
>
> भारत में भूस्खलन हिमालय क्षेत्र एवं पश्चिमी घाट में अधिक होता है । हिमस्खलन भी हिमालय क्षेत्र में ही होता है ।

सामान्य संचार व्यवस्था के बाधित होने के कई कारण हैं। इनमें प्रमुख निम्नलिखित हैं :

(i) केबुल टूट जाना,

(ii) बिजली आपूर्ति का बाधित होना,

(iii) संचार भवनों के ध्वस्त होने पर संचार यंत्रों का क्षतिग्रस्त हो जाना, और

(iv) ट्रांसमीशन टावर का क्षतिग्रस्त हो जाना, आदि।

कुछ ऐसा ही हुआ था 2 अगस्त, 2008 को जब नेपाल में कुसाहा के पास कोसी बांध टूट जाने के कारण उत्तरी बिहार के कोसी क्षेत्र में भयंकर बाढ़ आयी। इस बाढ़ के कारण प्रभावित क्षेत्रों में व्यापक विनाश हुआ । टेलीफोन केन्द्रों के जलमग्न होने अथवा तारों के क्षतिग्रस्त होने और सड़क तथा रेल संचार बाधित होने के कारण अनेक जिला मुख्यालयों का राज्य मुख्यालयों एवं आसपास के जिलों से सम्पर्क टूट गया। अत: राहत एवं बचाव कार्य से जुड़ी हुई तत्कालिक व्यवस्था प्रभावित हुई ।

क्या आप जानते हैं ?

(i) कुसाहा के नजदीक कोसी बांध क्षतिग्रस्त होने के उपरांत संचार के सभी साधन समाप्त हो चुके थे ।

(ii) इस आपदा में 16 जिले, 92 प्रखंड और 1598 गाँव प्रभावित थे ।

(iii) लगभग 27 लाख लोग बेघर हो गये,

(iv) 1.06 लाख हेक्टेयर भूमि की फसल नष्ट हो गई ।

आज के समय में आप सामान्य स्थिति में भी दूर-संचार के बिना दैनिक जीवन व्यवस्था को चलाने की कल्पना नहीं कर सकते हैं। आपदा के प्रकोप के समय जब दूर संचार की नितांत आवश्यकता होती है तो संचार के सभी सामान्य माध्यम समाप्त हो जाते हैं, जिसके कारण प्रभावित क्षेत्र की अत्यंत ही दयनीय स्थिति हो जाती है। ऐसी अवस्था में वैकल्पिक संचार माध्यमों के द्वारा ही प्रभावित क्षेत्रों से संपर्क स्थापित किया जा सकता ।

संचार का सर्वाधिक लोकप्रिय साधन सार्वजनिक टेलीफोन सेवा है, जिसे पब्लिक स्विच्ड टेलीफोन नेटवर्क (PSTN) ध्वनि, फैक्स और डाटा के सम्प्रेषण एवं प्राप्ति के द्वारा सभी सरकारी एवं निजी कार्यालयों, थानों, अग्निशमन केन्द्रों, अस्पतालों और अधिकांश घरों एवं कारोबारी स्थलों को जोड़ने वाली यह प्रमुख नेटवर्क है । वर्तमान में मोबाइल फोनों का प्रयोग सबसे अधिक होने लगा है।

दुर्भाग्यवश, भूकंप, चक्रवात, बाढ़, सुनामी एवं भूस्खलन जैसी बड़ी प्राकृतिक आपदा के समय सभी प्रचलित दूरसंचार सेवाओं का बुनियादी ढांचा बुरी तरह से क्षतिग्रस्त हो जाता है और दूर संचार व्यवस्था प्रभावित क्षेत्र में काम करना बंद कर देता है । बिजली आपूर्ति में व्यवधान उत्पन्न होने के कारण ऐसा होता है। ट्रांसमीशन टावरों के क्षतिग्रस्त हो जाने से पुलिस तथा सिविल प्रशासन का बेतार रेडियो संचार नेटवर्क भी प्रभावित हो जाता है। संकट की स्थिति में इस पर क्षमता से अधिक भार पड़ने से संचार नेटवर्क में रूकावट उत्पन्न हो जाती है या फिर नेटवर्क पूरी तरह फेल हो जाता है ।

क्या आप जानते हैं ?

सामान्यतया पूर्ण दक्षता से काम करने वाली PSTN प्रणाली तैयार की जाती है जिसमें इस प्रणाली से जुड़े 5 प्रतिशत फोन ही एक समय में बात कर सकते हैं। लेकिन संकट की स्थिति में इस प्रणाली पर बहुत अधिक भार पड़ता है, और नेटवर्क अवरुद्ध हो जाता है।

वैकल्पिक संचार साधन

(i) रेडियो संचार (Radio Communication) -

रेडियो तरंग इलेक्ट्रोमैग्नेटिक होती हैं, जिसे एंटिना द्वारा एक स्थान से दूसरे स्थान तक प्रेषित किया जाता है। रेडियो तरंगें निम्न, उच्च और अत्यधिक उच्च फ्रीक्वेंसी (Low, High and Extremely High frequency) की हो सकती है। रेडियो रिसीवर को किसी खास फ्रीक्वेंसी पर रखकर हम खास संकेत प्राप्त कर सकते हैं। जैसे, लम्बी दूरी से सम्पर्क साधने के लिए उच्च फ्रीक्वेंसी की तरंगों तथा बहुत अधिक फ्रीक्वेंसी वाली तरंगों का प्रयोग कम दूरी (5 से 50 किलोमीटर) के लिए किया जाता है। अत्यधिक उच्च फ्रीक्वेंसी (Extremely High Frequency) के बैंडों का प्रयोग हाथ वाला वायरलेस कहा जाता है वाकी-टॉकी जैसे बिना तार के यंत्रों का प्रयोग ऐसे समय में महत्वपूर्ण होता है।

(ii) एमेच्योर अथवा हेम रेडियो (HAM Radio) -

एमेच्योर रेडियो को हेम रेडियो भी कहा जाता है। इसके लिए आधारीय इन्फ्रास्ट्रक्चर की आवश्यकता नहीं होती है। वास्तव में हेम रेडियो में कुछ विशेष फ्रीक्वेंसी की तरंगों का

प्रयोग अंतर्राष्ट्रीय दूर संचार नियमों के अनुसार होती है, जिनका नियंत्रण भारत में संचार मंत्रालय के अधीन बेतार प्रयोजना एवं समन्वय स्कंध द्वारा किया जाता है। निर्धारित नियमों के अनुसार इन फ्रीक्वेंसीयों का प्रयोग केवल अनुसंधान , शिक्षा एवं व्यक्तिगत प्रयोजनों के लिए होता है ।

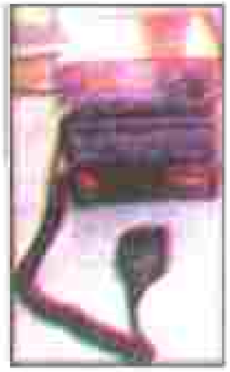

चित्र-5.1

एमेच्योर शब्द का अर्थ है गैर-वाणिज्यिक प्रयोजनों के लिए रेडियो संचार का प्रयोग करना। इसके संचालन के लिए सीमित ऊर्जा की आवश्यकता होती है, जिसकी पूर्ति जेनरेटरों या बैटरियों से आसानी से की जा सकती है।

हमारे देश में लगभग 15,000 लाइसेंस होल्डर एमेच्योर रेडियो ऑपरेटर हैं। भारत में इसका प्रयोग धीरे-धीरे बढ़ता जा रहा है। कहा जाता है कि भारत में यह संचार प्रणाली एक सृजनशील 'हाबी' के रूप में विकसित हो रहा है। भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन (ISRO) द्वारा हैम (HAM) के लिए एक सूक्ष्म तरंग वाले सेटेलाइट का निर्माण किया गया है।

हैम ऑपरेटर का सुनामी के समय योगदान :

नई दिल्ली के उत्साही एमेच्योर रेडियो प्रेमी ने वहाँ सफलता प्राप्त की जहाँ अधिकांश सरकारी एजेंसियाँ विफल रहीं । लाइसेंस प्राप्त हैम ऑपरेटर संदीप बरुआ, जो दिन में किसी सरकारी संस्था में काम करते हैं और रात के समय घर पर अपना शौक पूरा करते हैं, अंडमान व निकोबार द्वीपसमूह की राजधानी पोर्ट ब्लेयर से सम्पर्क कायम करने में सफल हुए और उन्होंने द्वीपसमूह में फंसे लोगों और मुख्य भूमि पर में उनके परिवारों के साथ संदेशों के आदान-प्रदान करने में मदद की ।

एमेच्योर अथवा हैम रेडियो ने बड़ी प्राकृतिक आपदाओं में अन्य संचार साधनों के अवरुद्ध होने पर भी सफलतापूर्वक कार्य किया है। इस प्रकार इसे वैकल्पिक संचार माध्यमों में सबसे अधिक प्रभावशाली अनुभव किया गया है। 1999

में उड़ीसा में आए भीषण चक्रवात् (Super Cyclone) और 2001 में गुजरात में भूकम्प के दौरान 'एमेच्यूर' स्वयंसेवकों ने प्रशंसनीय सेवा प्रदान की है।

(iii) उपग्रह संचार :

अंतरिक्ष में प्रस्थापित उपग्रह कई प्रकार के होते हैं जिन्हें विभिन्न उद्देश्यों के लिए प्रक्षेपित किया जाता है। इनमें संचार उपग्रह और सुदुर संवेदी उपग्रह प्रमुख हैं। भारत में दूरदर्शन, मौसम विज्ञान और आपदा सम्बंधी चेतावनी देने के लिए इंडियन नेशनल सेटेलाईट (इनसेट) और संसाधनों की खोज एवं प्रबंधन के लिए इंडियन रिमोट सेंसिंग सेटेलाईट (आई० आर० एस०) शामिल हैं।

संचार उपग्रह अंतरिक्ष में स्थापित रेडियो रिले स्टेशन (कामसेट्स, सेटकाम्स, सेटफोन) ही हैं। इसमें 'सेटकाम' उपग्रह आधारित संचार के लिए और 'सेटफोन' उपग्रह आधारित फोन टर्मिनल के लिए प्रयोग किए जाते हैं। संचार उपग्रह का सबसे महत्वपूर्ण कार्य मोबाइल और e-कम्युनिकेशन होता है। 'ट्रॉंसपोंडर' निश्चित एक फ्रीक्वेंसी पर बातचीत को पकड़ता है और उसे विस्तारित कर अन्य फ्रीक्वेंसी की मदद से पृथ्वी पर वापस भेजता है। एक उपग्रह में हजारों की संख्या में 'ट्रॉंसपोंडर' होते हैं। ये ट्रॉंसपोंडर डाटा, टेलिविजन इमेज और कुछ ट्रॉंसमीशनों को प्राप्त करते हैं और इन्हें पुन: प्रसारित करते हैं।

इस प्रणाली में रेडियो रिले स्टेशन तथा संचार उपग्रह अंतरिक्ष में होता है और पृथ्वी पर घटने वाली किसी भी प्राकृतिक आपदा से इसे कोई नुकसान नहीं होता है इसलिए यह विधि आपदा के समय सबसे अधिक विश्वसनीय है।

आपदा प्रबंधन में सर्वाधिक उपयोग में लाया जानेवाला संचार साधन 'उपग्रह फोन' है। यह फोन बहुत ही विश्वसनीय साफ आवाज में डाटा संचार की सुविधा प्रदान करता है। भारत सरकार द्वारा विभिन्न राज्यों / जिलों और आपदा प्रभावित क्षेत्रों को आपदाओं से निपटने के लिए पोर्टेबल उपग्रह फोन से लैस कर रही है।

अभ्यास

वस्तुनिष्ठ प्रश्न :-

1. सामान्य संचार व्यवस्था के बाधित होने का मुख्य कारण है :

   (क) केबुल का टूट जाना (ख) संचार टावरों की दूरी

   (ग) टावरों की ऊंचाई में कमी (घ) इनमें से कोई नहीं

2. संचार का सबसे लोकप्रिय साधन है :

   (क) सार्वजनिक टेलीफोन (ख) मोबाईल

   (ग) वॉकी-टॉकी (घ) रेडियो

3. सुदूर संवेदी उपग्रह (रिमोट सेंसिंग उपग्रह) का प्रयोग किसलिए होता है ?

   (क) दूर संचार के लिए (ख) मौसम विज्ञान के लिए

   (ग) संसाधनों की खोज के लिए एवं (घ) दूरदर्शन के लिए

लघु उत्तरीय प्रश्न :

1. सामान्य संचार व्यवस्था के बाधित होने के प्रमुख कारणों को लिखिए।
2. प्राकृतिक आपदा में उपयोग होने वाले किसी एक वैकल्पिक संचार माध्यम की चर्चा कीजिए ।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न :

1. प्राकृतिक आपदा में वैकल्पिक संचार माध्यमों का विवरण प्रस्तुत कीजिए ।
2. निम्नलिखित पर नोट लिखिए ।

   (i) हेम रेडियो (ii) उपग्रह संचार

क्रियाकलाप :

प्राकृतिक आपदाओं में आप वैकल्पिक दूर संचार व्यवस्था पर एक लोकोपयोगी प्रोजेक्ट तैयार कीजिए ।

इकाई : 6

आपदा और सह-अस्तित्व

आप यह समझ चुके हैं कि बाढ़, सुखाड़, चक्रवात, भूकम्प, ज्वालामुखी विस्फोट, सुनामी, भूस्खलन, हिमस्खलन जैसी प्राकृतिक आपदाओं का होना स्वाभाविक है, इसे रोका नहीं जा सकता है। हाँ, इसके मुकाबले के लिए हमें सदैव तैयार रहना चाहिए और आपदा पूर्व ही तैयारी करनी चाहिए ताकि कम से कम क्षति हो सके और अधिक से अधिक लोगों को जान-माल की सुरक्षा मिल सके । ऐसा न हो कि हम यह समझ कर नजर अंदाज कर दें कि यह सब एक प्राकृतिक प्रकोप है, इसका सामना करना मनुष्य के लिए सम्भव नहीं है ।

भूकम्प

भूकम्प एक बहुत बड़ी एवं अत्यंत विनाशकारी प्राकृतिक आपदा है । भूकम्प आने पर कुछ ही क्षणों में इतनी बर्बादी हो जाती है जिसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती है । पृथ्वी पर भूकम्प के सम्भावित क्षेत्र ज्ञात हैं, परन्तु इसके आगमन का पूर्वानुमान नहीं किया जा सकता । इसलिए हमें सम्भावित क्षेत्रों में सदैव सतर्क रहना चाहिए और इस क्षेत्र में ऐसा प्रबंधन होना चाहिए जिस से कम से कम क्षति हो। हमारे देश में भूकम्प से सबसे अधिक क्षति होती है, क्योंकि इसके लिए हम पूर्व से सचेत नहीं रहते हैं। प्राकृतिक आपदाओं से होने वाले नुकसानों को कम कर सकते हैं,

> 26 जनवरी, 2001 की तिथि को भुज में 6.9 की तीव्रता वाला भूकम्प आया । राज्य सरकार की रिपोर्ट के अनुसार 1300 से अधिक लोगों की जान गई तथा 1.67 लाख लोग जख्मी हुए तथा 21 जिलों में रह रहे लगभग 1.97 करोड़ लोग प्रभावित हुए । लगभग 3.20 लाख पक्के और कच्चे मकान तथा 14,000 झोपड़ियाँ पूरी तरह से नष्ट हो गयीं । लगभग 7.33 लाख पक्के एवं कच्चे मकान तथा 31,000 झोपड़ियों को आंशिक रूप से क्षति पहुँची ।

यदि सह-अस्तित्व से सम्बंधित सभी बिन्दुओं पर योजनाबद्ध तरीके से कार्य करें और हम कुछ राष्ट्रों का आकलन करें। जैसे–अमेरिका और जापान जहाँ भूकम्प बराबर आते रहते हैं । इसके बावजूद यहाँ भूकम्प को मात्र अल्पकालिक आपदा के रूप में लिया जाता है, क्योंकि यहाँ के मकान भूकम्प रोधी होते हैं और लोगों को पता होता है कि सुरक्षित कैसे रहना चाहिए ।

भूकम्प जैसी प्राकृतिक आपदा के लिए सुरक्षित आवासीय या सार्वजनिक भवनों का बहुत महत्त्व होता है अर्थात सुरक्षित आवास निर्माण कर भीषण क्षति को कम किया जा सकता है । इसके लिए निम्नांकित बिन्दुओं पर अवश्य ध्यान देना चाहिए :

– भवनों को आयताकार होना चाहिए और नक्शा साधारण होना चाहिए ।

– लम्बी दीवारों को सहारा देने के लिए ईंट-पत्थर या कंक्रीट के कालम होने चाहिए ।

– जहाँ तक हो सके T, L, U तथा X आकार के भवनों को छोटे-छोटे आयतों में बांटकर बनाना चाहिए तथा आयतों के बीच खाली जगहों को छोड़ना चाहिए ।

– नींव को मजबूत एवं भूकम्प अवरोधी होनी चाहिए ।

– निर्माण के पूर्व स्थान-विशेष की मिट्टी का वैज्ञानिक अध्ययन होना चाहिए । तद्नुसार नींव तथा निर्माण कार्य होनी चाहिए ।

– दरवाजे तथा खिड़कियों की स्थिति भूकम्प अवरोधी होनी चाहिए ।

– लोहा-कंक्रीट-बालु से उत्पन्न भार तथा भवन की रचना में इनका समुचित अनुपात एवं तकनीकी दृष्टिकोण से सुरक्षित संरचना का निर्माण होना चाहिए ।

– गलियों एवं सड़कों को चौड़ा होना चाहिए तथा दो भवनों के बीच पर्याप्त दूरी होनी चाहिए ।

भूस्खलन :

भूस्खलन (Land slides) के पाँच रूप होते है (i) बारिश के पानी के साथ मिट्टी और कचड़े का नीचे आना (Slump with flow) (ii) कंकड़-पत्थरों का खिसकना (Debris slide) (iii) कंकड़-पत्थर का गिरना (Deters fall), (iv) चट्टानों का खिसकना (Rock slide) तथा (v) चट्टानों का गिरना (Rock fall). इन सभी कारणों से मार्ग में पड़ने वाली सभी चीजों की बर्बादी होती है और लोगों, पशुओं तथा पेड़-पौधों को हानि पहुँचती है । परिणामस्वरूप आवागमन एवं परिवहन प्रभावित होता है । इस प्राकृतिक आपदा के लिए निम्नलिखित बातों पर अवश्य ध्यान देना चाहिए ताकि इसकी बारम्बारता (Frequency) में कमी आ सके ।

- मिट्टी की प्रकृति के अनुरूप उपयुक्त नींव बनाना ।
- ढलान वाले स्थानों पर आवासों का निर्माण न करना ।
- सामान्य एवं वैकल्पिक संचार प्रणालियों की समुचित व्यवस्था होना ।
- वनस्पति विहिन ऊपरी ढालों पर उपयुक्त वृक्ष प्रजातियों का सघन रोपण कार्य करना ।
- सड़कों, नहरों निर्माण एवं सिंचाई के क्रम में इस बात का पूरा ध्यान रखना कि प्राकृतिक जल की निकासी अवरुद्ध न हो ।
- भूस्खलन को रोकने के लिए दीवारों का निर्माण किया जाना चाहिये ।
- बारिश के पानी और झरनों के प्रवेश सहित भूस्खलनों के संचलन पर काबू पाने के लिए समतल जल निकासी नियंत्रण केन्द्र बनाना ।
- भूमि के नीचे बिछाए जाने वाले पाईप लाइन, केबल आदि लचीले होने चाहिए ताकि भूस्खलन से उत्पन्न दबाव का सामना कर सकें ।
- कम से कम एक इंच की गहराई तक घासपात (स्ट्रा), लकड़ी की छाजन (वुड चिप्स) या पेड़ों की छाल (बार्क) का प्रयोग वैसे क्षेत्रों में करना चाहिये जहाँ ढाल की प्रवणता मन्द या सामान्य हो ।

इसके अतिरिक्त खड़ी ढलानों के तल पर बने मकानों के मालिक कुछ स्थितियों में ऐसे अवरोधक या जलग्रहण (कैचमेंट-एरिया) क्षेत्र का निर्माण कर सकते हैं जो छोटे-छोटे भूस्खलन को रोक सकते है । निर्माण का डिजाइन ऐसा होना चाहिए जो भूस्खलन होने की स्थिति में बहकर आने वाली सामग्री की मात्रा और उसके प्रभाव की गति के आगे टिक सके। इसके अतिरिक्त, डिजाईन ऐसा होना चाहिए जिससे वहाँ पर निक्षेपित सामग्री को हटाया जा सके । इन अवरोधकों में इमारत की ढलान वाली साईड में मजबूत दीवार का निर्माण किया जाना चाहिए ।

सुनामी :

26 दिसम्बर, 2004 ई० के बाद आप भली भाँति समझ गए होंगे कि सुनामी कितना विनाशकारी प्राकृतिक आपदा है। इसने कुछ ही क्षणों में दक्षिण पूर्व एशिया के देशों में कहर बरपाया था । सुनामी द्वारा जान-माल की बड़ी हानी होती है। साथ ही, यह तटीय क्षेत्र के खेतों को बंजर बना देता है । स्वास्थ्य सम्बंधी कई समस्याएँ उत्पन्न हो जाती हैं । बंदरगाहों एवं तटीय नगरों को भी भारी क्षति पहुँचती है ।

सुनामी को न तो रोका जा सकता है और न ही इसके प्रभाव से बचा जा सकता है। लेकिन इसके प्रभाव को कम किया जा सकता है । इसके लिए निम्नलिखित तरीके अपनाए जा सकते हैं:-

1. जहाँ सुनामी की लहरें प्राय: आती हैं वहाँ लोगों को तटीय भाग की अपेक्षा तट से दूर बसने के लिए प्रोत्साहन करना ।
2. समुद्र तटीय भाग में सघन वृक्षारोपण से सुनामी लहरों की तीव्रता को कम किया जा सकता है ।
3. नगरों एवं पत्तनों को बचाने के लिए कंकरीट अवरोधक का निर्माण होना चाहिये ।
4. सुनामी संभावित क्षेत्रों में ऐसे मकान का निर्माण हो जो भूकम्प एवं सुनामी लहरों के प्रभाव को न्यून कर सके ।

5. पोताश्रयों को ऊँची बांधों द्वारा सुरक्षित की जा सकती है ।

6. सुनामी के आशंका वाले तटीय क्षेत्रों में मकान ऊँचे स्थानों पर और तट से करीब सौ मीटर की दूरी पर बनाना चाहिये ।

7. 'सुनामीटर' द्वारा समुद्रतल में होने वाली हलचल का सतत पता लगाने हेतु ''सुनामी रेकार्डिंग सेन्टर की स्थापना होनी चाहिए ।

8. उपग्रह प्रौद्योगिकी द्वारा सुनामी की चेतावनी प्राप्त करते रहना चाहिए और संचार के विभिन्न माध्यमों द्वारा इसे तुरन्त आम लोगों तक पहुँचाना चाहिए ।

बाढ़ :

बाढ़ एक विनाशकारी प्राकृतिक आपदा है लेकिन इससे होने वाली तबाही से भी बचा जा सकता है। अधिकतर बाढ़ सम्भावित क्षेत्रों का पता है और बाढ़ के मौसम का भी पता है। आजकल आपदा की सूचना कुछ समय पूर्व में भी मिल जाती है । इससे राहत पाने के लिए अथवा जोखिम कम करने के लिए हम सबसे पहले बाढ़ प्रभावित क्षेत्रों का मानचित्र तैयार करें। इस क्षेत्र के भूउपयोग पर नियंत्रण रखें। इन क्षेत्रों में किसी भी बड़े विकास योजना की अनुमति देने के पूर्व बाढ़ से बचाव कार्य निर्धारित किया जाना चाहिए । शहरी क्षेत्रों में तालाबों, झीलों अथवा निचले क्षेत्रों में जलधारक क्षेत्रों का निर्माण किया जाता है और जलजमाव वाले क्षेत्रों में भवन निर्माण कार्य नहीं होनी चाहिए। आवास के लिए ऊँचे सुरक्षित स्थानों का चुनाव करना चाहिए और भवनों का निर्माण कंकरीट निर्मित खंभों पर किया जाना चाहिए। साथ ही, मकान के चारो ओर नींव के पास रेत से भरी बोरियों को रखना बेहतर होता है ।

बाढ़ प्रभावित क्षेत्रों में वनों को विकास करने से बाढ़ की प्रवणता को कम किया जा सकता है। मृदा क्षय को भी नियंत्रण किया जा सकता है । साथ ही वन्य क्षेत्र पशु आहार उपलब्ध कराने तथा जैव विविधता को संरक्षण देने में बहुत सहायक होता है । नदियों के दोनों तटों पर तट बांध (Embankment) का निर्माण करने से बाढ़ प्रभावित क्षेत्रों को बहुत हद तक सुरक्षा प्रदान किया जा सकता है। साथ ही, इन क्षेत्रों में नली-नालों का विस्तार हो जिस से जल्द से जल्द पानी निकल जाए और इस से सिंचाई का भी काम लिया जा सके ।

पर्वतीय भागों में नदियों के ऊपर बांध और पृष्ठभाग जलाशय का निर्माण, जल को नियंत्रित ढंग से छोड़ने एवं तली के सिल्ट जमाव को साफ करके बाढ़ की सम्भावनाओं को कम किया जा सकता है ।

बाढ़ प्रभावित क्षेत्रों में नहरों का जाल बिछा कर बाढ़ की विभिषिका को न सिर्फ कम किया जा सकता है, वरन इससे सिंचाई का काम भी लिया जा सकता है ।

बाढ़ से बचाव के लिए रिंग बांध (Ring band) भी सहायक होता है। नदियों की धाराओं में सुधार तथा नदियों के लिए वैकल्पिक मार्ग के निर्माण द्वारा भी इस समस्या का समाधान सम्भव है ।

बाढ़ में फसलों को भी काफी नुकसान होता है। हरा-भरा खेत एवं कभी-कभी तैयार फसल जलमग्न होकर नष्ट हो जाते हैं। इसलिए ऐसे फसलों या ऐसे प्रजातियों के पौधों का विकास करना होगा जिसे जलमग्न क्षेत्र में भी पैदा किया जा सके। जैसे, उत्तरी बिहार के कुछ जिलों में किसान धान की एक ऐसी प्रजाति उत्पन्न करते हैं जो जलमग्न क्षेत्र में पैदा होते हैं और किसान नाव पर जाकर फसल कटाई का काम करते हैं।

बाढ़ प्रभावित क्षेत्रों में स्थान-स्थान पर खाद्यान्न बैंक (Food Grain Bank) का भी विकास होना चाहिए। इससे अकाल की स्थिति पर नियंत्रण पाया जा सकता है।

1954 ई० में भारत सरकार ने बाढ़ नियंत्रण के लिए तीन आयाम निर्धारित किए हैं। त्वरित (Immediate), अल्प-कालिक (Short term) और दीर्घ कालिक (Long term) कार्रवाई (Measures)। इससे समस्या के समाधान हेतु प्राथमिकता निर्धारित की जाती है और इससे कार्यान्वयन में आसानी होती है ।

सुखाड़ :

सुखाड़ अचानक नहीं होता । यह संकेत देकर आता है किन्तु इसके अंत की अवधि निश्चित नहीं होती है । सुखाड़ तीन प्रकार के होते हैं : (i) सामान्य सुखाड़ (Normal Drought), (ii) कृषि सुखाड़ (Agricultural Drought), (iii) मौसमी सुखाड़ (Seasonal Drought)।

इनमें सबसे खतरनाक कृषि सुखाड़ को माना जाता है । सुखाड़ जैसे प्राकृतिक आपदा को विभिन्न विधियों को अपना कर इसकी विभिषिका को कम किया जा सकता है। जैसे, जल संसाधन का वैज्ञानिक विकास और प्रबंधन द्वारा जल की समस्या का समाधान किया जा सकता है; क्योंकि सुखाड़ के समय जल के अभाव से न केवल मिट्टी की नमी समाप्त हो जाती है, बल्कि सभी प्राणियों को जान तक बचाना मुश्किल हो जाता है । जल विभाजक के विकास की योजना ऐसी स्थिति में बहुत सहायक होती है ।

जल विभाजक क्षेत्र :

जल विभाजक क्षेत्र ऐसे भौगोलिक क्षेत्र होते हैं जहाँ पानी एक सामान्य बिन्दु की ओर प्रवाहित होता है। सुखे के दुष्प्रभाव को कम करने के लिए स्थानीय समुदायों के सहयोग से मृदा और जल संरक्षण के सभी प्रकार के उपाय किए जाते हैं। इस नीति को अपनाने से इन क्षेत्रों में मृदा, पेड़-पौधों, पानी तथा अन्य संसाधनों का प्रभावी प्रबंधन में मदद मिलती है । इन जल विभाजक क्षेत्रों के भीतर दुर्लभ जल स्रोतों के संरक्षण तथा मृदा और पेड़-पौधे के प्रबंधन में सुधार लाकर प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण करते हुए उच्चतर कृषि उत्पादन के अनुकूल स्थितियाँ तैयार की जाती हैं।

मिट्टी में उपलब्ध नमी के संरक्षण के लिए तथा तेज धूप से बचाने के लिए भूमि पर घास का आवरण रहने देना चाहिए। मिट्टी में नमी के अभाव में ही कृषि सुखाड़ होता है । नदियों के जल ग्रहण क्षेत्र में वृक्षारोपण से भी बादल आकर्षित होते हैं और मौसम को कुछ हद तक नियमित किया जा सकता है ।

कुछ फसलें ऐसी भी होती हैं जिन्हें अधिक जल की आवश्यकता नहीं होती है, या बहुत कम जल में फसलें पैदा हो जाती हैं। ये फसल सुखाग्रस्त क्षेत्रों में या जहाँ सुखे की बारम्बारता अधिक है वहाँ लगायी जा सकती है। जैसे, मशरूम, औषधी पौधे, नागफणि, ज्वार, बाजरा, इत्यादि ।

सिंचाई को विकसित कर सुखा से बचा जा सकता है। हमारे देश में पंजाब, हरियाणा और राजस्थान जैसे राज्यों में सिंचाई सुविधा के कारण ही अर्द्धशुष्क प्रदेश होने के बावजूद देश का अन्न भंडार (Grainary of the country) बन गया है ।

सुखाड़ के प्रभाव को कम करने के लिए वैकल्पिक अर्थव्यवस्था के रूप में दुग्ध उद्योग को विकसित किया जाना चाहिए। कृषि प्रधान क्षेत्रों में सुखाड़ पड़ने से कृषक या तो फसलें लगा ही नहीं पाते या फिर लगी हुई फसलें सूख जाती हैं। परिणामस्वरूप लोगों में जीविका का कोई विकल्प नहीं रह जाता है। इससे बचने के लिए चारागाह का विकास सुखाड़ की स्थिति में भी संभव है। इससे दुग्ध उद्योग का विकास एक महत्वपूर्ण विकल्प है।

सुखाड़ प्रभावित क्षेत्रों में कृषि पर आधारित उद्योगों को लगाकर कृषि के असफल होने की भरपाई हो सकती है तथा खुशहाली कायम रह सकता है।

जिन क्षेत्रों में प्रायः सुखा पड़ता रहता है उन क्षेत्रों में शुष्क कृषि पद्धति अपनाया जाना अधिक लाभप्रद होता है।

शुष्क कृषि पद्धति की निम्नलिखित विधियाँ हैं:-

(i) खेतों की गहरी जुताई ताकि धरातल के नीचे की नमीयुक्त मिट्टी ऊपर आ जाए।

(ii) ऐसी फसलों की बोआई जो सुखे को अधिक सहन करने की क्षमता रखते हों।

(iii) सामान्य सिंचाई विधि के स्थान पर ड्रिप तथा छिड़काव (Sprinkle) विधि से सिंचाई कराना।

(iv) ऐसे बीज का प्रयोग जो कम समय में फसलों का उत्पादन करता हो।

(v) जब वर्षा होती है तब उसके जल का अधिकतम उपयोग करना।

(vi) छोटे-छोटे बांध तथा जलाशय का निर्माण तथा ऐसे नहरों का निर्माण जिसके तल में कंक्रीट बिछा हो। इससे जल के रिसाव को रोका जा सकता है।

(vii) ढाल के समकोण पर बांध बनाना तथा खेती को सीढ़ीनुमा बनाना जिस से जल का अधिक से अधिक उपयोग हो सके।

यह एक सत्य है कि प्राकृतिक आपदाओं को घटित होने से हम और आप रोक नहीं सकते हैं। हम सिर्फ पूर्व से सतर्क रहकर एवं सह-अस्तित्व से सम्बंधित कार्य को करते हुए बहुत हद् तक इसकी तबाही से बच सकते हैं। आपने पूर्व में भी आपदाओं के संदर्भ में बताऐ गए तरीकों का अध्ययन किया। इसके अतिरिक्त सभी प्रकार की प्राकृतिक आपदाओं के लिए कुछ बातें सामान्य रूप से उपयोगी हैं। जैसे, प्राकृतिक आपदाओं की जानकारी और इससे होने वाली विभिषिकाओं के प्रति जन साधारण को जागृत करना, शिक्षित करना एवं आपदा शिक्षा को मुख्य धारा से जोड़ना। इसके लिए पूर्व-नियोजित योजनाओं को व्यावहारिक रूप देना आवश्यक है। राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर ऐसा देखा गया है कि जहाँ पूर्व-नियोजित योजनाएँ नहीं हैं या योजना अपर्याप्त है वहाँ आपदा से अधिक हानि हुई है।

क्रियाकलाप :

आप अपने मुहल्ले या गाँव में शिक्षक के साथ एक सभा आयोजित कीजिए और आम लोगों को बताईए कि प्राकृतिक आपदाओं से बचने के लिए मिलजुल कर उसका सामना करना चाहिए। इससे विपत्ति और बर्बादी कम होगी।

आपदा मानचित्र (Disaster mapping) भी इस संदर्भ में एक महत्वपूर्ण कदम है, मानचित्र निर्माण के लिए धरातल पर उपलब्ध सूचनाऐं सुदूर-संवेदन (Remote sensing) तथा भौगोलिक सूचना प्रणाली (Geographical Information System - G.S) सहायक हो सकते हैं।

आपदा प्रबंधन योजना तैयार करते हुए ग्रामवासी

सह-अस्तित्व की सफलता आपसी सहयोग, गैर-सरकारी संगठन, अर्द्ध सरकारी संगठन जैसे राष्ट्रीय सेवा योजना, होम गार्ड, नेहरू युवा केन्द्र,

राष्ट्रीय कैडेट कोर एवं केन्द्र और राज्य सरकार के सहयोग पर निर्भर करता है। इन संगठनों के सहयोग से पंचायत और ग्रामवासी स्वयं सह-अस्तित्व की योजनाएँ बना सकते हैं।

स्थानीय अस्पताल में पीड़ितों की सहायता करते हुए एनसीसी के कैडेट

राष्ट्रीय कैडेट कोर एवं राष्ट्रीय सेवा योजना के स्वयं सेवक आकस्मिक स्थिति में आपदा प्रभावित लोगों के लिए जीवन रक्षक हो सकते हैं।

अतः आपदा के मध्य सह-अस्तित्व की नियति ही आपदा के मध्य जीने की कला और रोमांच उत्पन्न कर सकता है।

अभ्यास

वस्तुनिष्ठ प्रश्न :-

1. निम्नलिखित में कौन प्राकृतिक आपदा है ?

(क) आग लगना (ख) बम विस्फोट

(ग) भूकम्प (घ) रासायनिक दुर्घटनाएँ

2. भूकम्प सम्भावित क्षेत्रों में भवनों की आकृति कैसी होनी चाहिए ?

(क) अण्डाकार (ख) त्रिभुजाकार

(ग) चौकोर (घ) आयताकार

3. भूस्खलन वाले क्षेत्र में ढलान पर मकानों का निर्माण क्या है ?

(क) उचित (ख) अनुचित

(ग) लाभकारी (घ) उपयोगी

4. सुनामी प्रभावित क्षेत्र में मकानों का निर्माण कहाँ करना चाहिए ?

(क) समुद्रतट के निकट (ख) समुद्र तट से दूर

(ग) समुद्र तट से दूर ऊँचाई पर (घ) इनमें से कोई नहीं

5. बाढ़ से सबसे अधिक हानि होती है–

(क) फसल को (ख) पशुओं को

(ग) भवनों को (घ) उपरोक्त सभी को

6. कृषि सुखाड़ होता है–

(क) जल के अभाव में (ख) मिट्टी की नमी के अभाव में

(ग) मिट्टी के क्षय के कारण (घ) मिट्टी की लवणता के कारण

लघु उत्तरीय प्रश्न :

1. भूकम्प के प्रभावों को कम करने वाले चार उपायों को लिखिए ।
2. सुनामी सम्भावित क्षेत्रों में गृह निर्माण पर अपना विचार प्रकट कीजिए ।
3. सुखाड़ में मिट्टी की नमी को बनाए रखने के लिए आप क्या करेंगे ।

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न :

1. भूस्खलन अथवा बाढ़ जैसी प्राकृतिक विभिषिकाओं का सामना आप किस प्रकार कर सकते हैं । विस्तार से लिखिए ।

इकाई : 7

सुरक्षित सड़क

प्रवीण अपने चिकित्सक पिता के साथ अस्पताल के क्वार्टर में रहता है। वह रात में ठीक से सो नहीं सका था, क्योंकि उसके पिता को आधी रात उठकर अस्पताल जाना पड़ा। सड़क दुर्घटना में कई यात्री घायल होकर अस्पताल पहुँचे थे। उन्हें गंभीर चोटें लगी थीं। आधी रात घायलों की चीख-पुकार सुनकर प्रवीण की नींद उचट गई और वह घायलों के बारे में सोचकर नहीं सो पाया। वहाँ मची चीख-पुकार दिल दहला देने वाली थी । ऐसे में भला कौन सो पाता। वह मन ही मन ईश्वर से ऐसी दुर्घटना पुनः न होने की प्रार्थना करने लगा।

जरा सोचिए :-

(i) क्या ऐसी दुर्घटनाएँ ईश्वर की प्रार्थना से रूक जाएगी ?

(ii) इन दुर्घटनाओं के लिए दोषी कौन है?

(iii) हमें इनसे बचने के लिए क्या करना होगा?

इन्हीं बातों ने प्रवीण के मन में उथल-पुथल मचा दी थी। ऐसी सड़क दुघटनाएँ यातायात नियमों की घोर अवहेलना का परिणाम है। ड्राइवरों की थकान, उनका नशापान, अत्यधिक गति से वाहन चलाना, इसके अलावे सड़कों पर अचानक से पशुओं/व्यक्तियों के आ जाने से भी ऐसी दुर्घटनायें होती हैं। अक्सर खतरनाक मोड़ों पर वाहन टकरा जाते हैं और हमें जान-माल की क्षति उठानी पड़ती है। हालाँकि इससे बचने, घटना के उपरांत तत्काल सहायता पहुँचाने के कई आधारभूत संरचनाएँ हैं, जिनका लाभ हम जानकारी के अभाव में नहीं उठा पाते हैं। सड़क दुर्घटनाओं में कमी लाने के लिए उच्चतम न्यायालय ने भी कई दिशा निर्देश दिए हैं। परंतु स्पष्ट रूप से यह मामला हमारी **जागरूकता, जानकारी और नियमों** की अनदेखी से जुड़ा हुआ है। ऐसे मामले सिर्फ सरकारी नीतियों और प्रयासों से

सफल नहीं हो सकते बल्कि जनसहभागिता और जागरुकता भी महत्वपूर्ण कारक हैं।

बिहार राज्य में सड़क सुरक्षा के लिए नीतियाँ बनाई गई हैं और इसके लिए बहुआयामी प्रयास भी किए जा रहे हैं। प्रत्येक जिले में सड़क सुरक्षा समिति का गठन किया गया है, जिसमें जिलाधिकारी के नेतृत्व में पुलिस अधीक्षक, परिवहन पदाधिकारी, स्वास्थ्य अधिकारी, सड़क निर्माण विभाग के इंजीनियर, भारतीय राष्ट्रीय उच्च पथ प्राधिकार के प्रतिनिधि के अलावा सिविल सोसाइटी के सदस्य होते हैं।

वे आवश्यकतानुसार बैठकें आयोजित कर सड़क सुरक्षा संबंधी समस्याओं के निराकरण का प्रयास करते हैं। सर्वोच्च न्यायालय के निर्देश पर गठित सड़क सुरक्षा समिति से प्राप्त सूचना के अनुसार बिहार राज्य में जनवरी से मार्च 2018 में 155 व्यक्ति सड़क दुर्घटना में मारे गए, जबकि 2019 की इसी तिमाही में यह संख्या बढ़कर 289 हो गई। यहाँ यह ज्ञातव्य है कि मात्र 38% व्यक्ति हेलमेट का प्रयोग करते हैं।

विश्व स्वास्थ्य संगठन के हालिया सर्वेक्षण में यह कहा गया है कि हेलमेट के उपयोग मात्र से वाहन दुर्घटनाओं में मृतकों की संख्या में लगभग 70% की कमी लाई जा सकती है। भारत में 2018 में मात्र हेलमेट न पहनने की वजह से लगभग 46 हजार मौतें हुईं।

सड़क दुर्घटनाओं के आँकड़े दुर्घटना स्थल के थाना क्षेत्र से प्राप्त होते हैं। वर्त्तमान में सड़क सूचना और प्रबंधन प्रणाली विकसित करते हुए राज्य के वाहन (VAHAN) और सारथी (SARATHI) जैसे डाटाबेस ग्लोबल पोजिशनिंग सिस्टम (GPS) से जुड़कर दुर्घटनाओं के आँकड़े शीघ्रता से और प्रमाणिक रूप से उपलब्ध करा रहे हैं। इससे बीमा कंपनी एवं दुर्घटना दावा अधिकरणों, अस्पतालों आदि को कार्य करने में सहुलियत होती है।

चर्चा कीजिए :-उत्तर प्रदेश में कम दुर्घटना होने के बावजूद मृतकों की संख्या अधिक है? ऐसा क्यों?

सड़क दुर्घटनाओं में जान-माल की क्षति को कम करने के लिए उच्च पथों के किनारे ट्रॉमा सेंटर खोलने, शराब दुकानों को बंद करने, नजदीकी एंबुलेंस और स्वास्थ्य केंद्रों के टॉल फ्री नंबर भी सड़क के किनारे प्रदर्शित करने के निर्देश दिए गए हैं। दुर्घटना के बाद का प्रथम घंटा को 'गोल्डन ऑवर' कहा जाता है, जिसमें दुर्घटनाग्रस्त व्यक्ति को

चिकित्सकीय सेवा प्रदान कर क्षति को कम किया जा सकता है।

वाहन निर्माता सुरक्षा मानकों को प्राथमिकता न देकर वाहन की सुंदरता और आरामदायक खूबियों को ही विज्ञापित करके खरीददारों को लुभाते हैं। आश्चर्यजनक बात यह है कि वाहनों के खरीददार भी वाहनों के रंग-मॉडल आदि के आधार पर ही खरीदने की प्राथमिकता देते हैं। वे गाड़ियों के 'सेफ्टी बैलून' की चर्चा भी नहीं करते हैं। यह स्थिति खतरनाक है लंबे समय तक लगातार वाहन चलाना, जाग-जाग कर वाहन चलाना आदि बातें अक्सर शादी-विवाह जैसे अवसरों पर ड्राइवरों के साथ देखी जाती हैं। वाहनों के पार्किंग को लेकर तो लोग और भी लापरवाही बरतते हैं। गलत तरीके से वाहनों की पार्किंग के कारण अक्सर टक्कर मार देने की घटना हम सुनते हैं।

अब तो बड़े शहरों में उच्च पथों पर वाहनों की गति सीमा का उल्लंघन करने वालों को स्पीड रीडर जैसे यंत्र से पहचान कर ली जाती है और सड़कों पर लगे स्वचालित कैमरे धड़ल्ले से इनके चित्र खींच लेते हैं, जिससे वाहन चालक को दंडित किया जाना आसान हो गया है। ब्रेथ एनलाइजर जैसे यंत्र (साँस में अल्कोहल की मात्रा को पहचानने का यंत्र) पुलिस को उपलब्ध कराये जा रहे हैं, जिससे शराब पीकर वाहन चलाने वालों की पहचान आसान हो गई है। जगह-जगह लगे हुए स्वचालित कैमरे वाहनों की हरेक उल्टी-सीधी गतिविधियों की सूचना पुलिस नियंत्रण कक्ष को देते हैं। ऐसे तकनीकी युक्त प्रयास से सड़क दुघटनायें कम होती हैं। वाहन चालक भी पकड़े जाने के डर से सचेत रहते हैं।

दुर्घटनाओं में आपात चिकित्सा राहत के लिए 108 नंबर पर सूचना देकर नजदीकी ऍबुलेंस वाहन मंगाया जा सकता है।

दुर्घटनाग्रस्त किसी व्यक्ति को अस्पताल पहुँचाने पर अस्पताल प्रबंधन या पुलिस प्रशासन उस व्यक्ति से नाम, पता की जानकारी हासिल नहीं कर सकता है। ऐसा निर्देश भारत के उच्चतम न्यायालय ने दिया है जिससे कि मदद पहुँचाने वाले व्यक्ति को अस्पताल प्रबंधन या पुलिस प्रशासन किसी प्रकार से तंग नहीं कर सके ।

चर्चा कीजिए :- सब-वे और अंडर पास यातायात में कैसे सहायक हैं?

सब-वे

अंडर पास

पैदल चलते समय आप निम्न सावधानियाँ रखकर सड़क दुर्घटना की संभावना को कम कर सकते हैं :-

i. पैदल चलने के लिए फुटपाथ का उपयोग करना।

ii. बिना फुटपाथ वाली सड़क पर चलने की स्थिति में बायीं तरफ का उपयोग करें।

iii. सड़क पर चलने के दौरान आस-पास चल रहे वाहन के प्रति सतर्कता।

iv. ट्रैफिक जाम की स्थिति में उसकी उल्टी दिशा में फुटपाथ के किनारे नहीं चलना।

v. रात के समय रंगीन कपड़े का पहनना। रात में चमकीले कलाई बैंडस, कमरबंद, बेस्ट कोट्स और जैकेट पहनना।

vi. बच्चों के साथ पैदल निकलने पर बच्चों और ट्रैफिक के बीच स्वयं को रखना और हाथ थामना।

vii. सड़क पार करने के लिए जेब्रा क्रॉसिंग, फुट ओवर ब्रिज, सब-वे और अंडर पास का इस्तेमाल।

viii. सड़क पार करते समय वाहन से एक सुरक्षित दूरी रखना।

क्या नहीं करें :-

i. दौड़कर/जल्दबाजी में सड़क पार करना।

ii. अचानक बीच सड़क पर आना।

iii. खड़ी गाड़ियों के सामने या बीच में से सड़क पार करना।

iv. रेलिंग से कूद कर सड़क पार करना।

v. अंधा मोड़ या वाहन न दिखाई देने वाले मोड़ पर सड़क पार करना।

अभ्यास प्रश्न

वस्तुनिष्ट प्रश्न :-

1. दुपहिया वाहन चालक हेलमेट का प्रयोग करते हैं।

(क) 38% (ख) 48%

(ग) 58% (घ) 62%

2. दुर्घटना का करण है।

(क) चालक की लापरवाही (ख) तेज गति

(ग) चालक की थकान (घ) उपर्युक्त सभी

3. 'गोल्डनऑवर' दुर्घटना का समय माना जाता है।

(क) प्रथम तीन घंटे (ख) प्रथम दो घंटे

(ग) शुरूआती प्रथम घंटा (घ) इनमें से कोई नहीं

4. दुर्घटना के पश्चात् मददगार हैं-

(क) चिकित्सक (ख) पुलिस

(ग) ऐंबुलेंस (घ) उपर्युक्त सभी

5. गाड़ी चलाते समय नहीं करना चाहिए।

(क) सीट बेल्ट लगाना (ख) नशापान

(ग) इंडिकेटर का प्रयोग करना (घ) हेलमेट का प्रयोग करना

6. पैदल चलते समय करना चाहिए।

(क) दौड़कर सड़क पार करना (ख) अंधा मोड़ से सड़क पार करना

(ग) फुटपाथ का प्रयोग करना (घ) ईयरफोन लगाकर चलना

लघु उत्तरीय प्रश्न :-

1. सड़क पार करते समय किन-किन बातों को ध्यान में रखना चाहिए?
2. जिला स्तर पर परिवहन सुरक्षा समिति में कौन-कौन सदस्य शामिल होते हैं?
3. दुर्घटना के तुरंत बाद क्या-क्या कदम उठाया जाना चाहिए?
4. 'ट्रॉमा सेंटर' से आप क्या समझते हैं?
5. वाहन निर्माता को वाहन-सुरक्षा के लिए वाहन में क्या-क्या बदलाव करने की जरूरत है?

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न :-

1. बिहार में सड़क दुर्घटनाओं के विभिन्न कारणों की चर्चा विस्तार से कीजिए।
2. सड़क सुरक्षा के लिए सरकार ने क्या-क्या कदम उठाया है?
3. दुर्घटना के बाद चिकित्सकीय सेवा उपलब्ध करवाने के लिए आप क्या-क्या कार्य करेंगे? लिखिए।